* ॐ *

आदर्श-मुनि

* संग्रहकर्त्ता *

सा० प्रे० पं० प्यारचन्द्रजी महाराज—

लेखक—

लक्ष्मीसहाय माथुर-विशारद.

मुद्रक व प्रकाशक—

श्रीजैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति,
रतलाम.

वीराब्दाः २४५१—वैक्रमाब्दाः १९८२.

प्रथम संस्करण
२००० प्रति

मूल्य रेशमी जिल्द १।)
राजसंस्करण २)

पं० अनन्तराम के प्रबन्ध से सद्धर्म प्रचारक प्रेस देहली में छपा।

श्रीसुधर्मगच्छीयहुक्मीचन्द्रजित्सूरीश्वरेभ्यो नमः

आदर्श-मुनि

* संग्रहकर्त्ता *

साहित्यप्रेमी पण्डित मुनिश्री-

"प्यारचन्दजी महाराज—"

लेखक—

लक्ष्मीसहाय माथुर-विशारद.

मुद्रक व प्रकाशक—

श्रीजैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति,

रतलाम.

वीराब्दा: २४५१—वैक्रमाब्दा: १९८२.

प्रथम संस्करण २००० प्रति | मूल्य रेशमी जिल्द १) राजसंस्करण २)

पं० अनन्तराम के प्रबन्ध से सद्धर्म प्रचारक प्रेस देहली में छ०। ।

❀ शिक्षा ❀

"जीवन चरित महा-पुरुषों के,"
"हमें शिक्षणा देते हैं ।"
"हम भी अपना अपना जीवन,"
"स्वच्छ रम्य कर सकते हैं ॥"
"हमें चाहिये हम भी अपने,"
"बना जाएँ पद-चिन्ह ललाम ।"
"इस भूमी की रेती पर जो,"
"व्यक्त पड़े आवें कुछ काम ॥"
"देख देख जिन को उत्साहित,"
"हों पुनि वे मानव मतिधर ।"
"जिन की नष्ट हुई हो नौका,"
"चट्टानों से टकराकर ।"
"लाख लाख संकट सहकर भी,"
"फिर भी साहस बांधें वे ।"
"जाकर मार्ग मार्ग पर अपना,"
"गिरिधर" कारज साधें वे ॥"

प्रकाशक —

मास्टर मिसरीमल, मन्त्री,

श्रीजैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति,

रतलाम.

※ ॐ ※

श्रीमान् महामान्य रायबहादुर जुगमन्दिरलालजी जैनी
ऐम. ए., आर. ए. ऐस., बार-ऐट-लॉ,
चीफ जस्टिस ऐण्ड लॉ-मेम्बर
होल्कर स्टेट-इन्दौर की

सम्मति.

महोदय !

जय जिनेन्द्र ! आप की भेजी हुई "आदर्श मुनि" नामक पुस्तक मिली, धन्यवाद।

शारीरिक अस्वस्थता, समयाभाव और ऐसे ही कई कारणों से "आदर्श मुनि" को मैं पूरी नहीं पढ़ सका, तथापि जितना भी अंश मैं पढ़ सका हूं उस से पुस्तक की उपयोगिता तथा आवश्यकता स्पष्ट प्रगट होगई है।

महात्मा साधु सन्तों, अथवा आदर्श पुरुषों के जीवन चरित्र लिखने का मुख्य हेतु उनके अमृतमय उपदेशों एवं क्रियात्मकरूप में परिणित आदर्शों को जनता के जीवन के अंगभूत बनाकर उसे सफल बनाना है, इसी हेतु को सामने रखकर "आदर्श मुनि" जनता को भेंट की गई है। प्रस्तुत पुस्तक में जिन महापुरुष के चरित्र चित्रण का प्रयत्न किया गया है। वे जैन संसार में ही नहीं बल्कि अजैनों के द्वारा भी "आदर्श व्यक्ति" माने गए हैं जिन्हें

उन के दर्शन का लाभ तथा उपदेशामृत पान करने का
प्राप्त हुआ है वे ही अनुमान कर सकते हैं कि समूचे सं
में इस मौलिक संग्रह का क्या मूल्य होगा। लेखक ने अ
नायक के चरित्र अंकित करने के साथ ही साथ उनके सिद्ध
प्राचीनता एवं उपयोगिता के विषय में भारतीय तथा
अनेक विद्वानों के मतों का भी दिग्दर्शन किया है जिस से
का महत्त्व और भी बढ़ गया है। यदि लेखक के उद्देश्यों
जनता का ध्यान वास्तविकरूप से आकर्षित हुआ तो यह
ग्रन्थ " मानवीय जीवन किस तरह सफल बनाया जा सक
इस का सुन्दर पाठ जनता के सामने रखेगा।

पुस्तक अच्छे ढंग से लिखी गई होने पर भी जैसा
स्वयं स्वीकार करते हैं उसमें कुछ त्रुटियें रह गई हैं। आ
अगले संस्करण में उन पर उचित ध्यान दिया जावेगा।

ता० २६-६-२५

भूमिका ।

जैनधर्म की प्राचीनता अनेक अभ्रांत प्रमाणों से सिद्ध हो चुकी है। अब यह निश्चय करने की आवश्यकता नहीं है कि पहिले का जैनधर्म है या बौद्धधर्म। जैसे शैल-सम्राट् हिमालय अचल और अटल है वैसे ही जैनधर्म प्राचीन और कालातीत है। इसके सामने बौद्ध-धर्म कल का उत्पन्न हुआ है। जब महात्मा बुद्ध संसार में अपने दया और शान्ति-पूर्ण उपदेशों की धारा बहा रहे थे उस समय जैनधर्म के अंतिम तीर्थंकर महावीर स्वामी का निर्वाण काल समीपस्थ था। इस समय वीर सम्वत् २४५१ है। इनके पहले २३ तीर्थंकर और हो चुके हैं। जिनमें प्रथम श्री ऋषभदेव जी थे। इनका वर्णन श्रीमद्भागवत पुराण में भी है।

जैनधर्म का साहित्य जिसका अधिकांश भाग अभी कोठारों में गुप्त रीति से धरा है, नितान्त विस्तृत और महत्व-पूर्ण है। यह साहित्य संस्कृत और प्राकृत दोनों में है। इस साहित्य में अनोखी बात यह है कि इसका कोई भी ग्रन्थ अश्लील और अशिष्ट नहीं है। इसके सभी ग्रन्थों को सभी नरनारी बाल-

बालिका युवक और वृद्ध पढ़ सकते हैं। किसी पुस्तक में ऐसे भाव और विचार न मिलेंगे जिनके पढ़ने और कहने में लज्जा आवे। भू-मण्डल में अन्य कोई साहित्य नहीं है जिसके पढ़ने में यह दावा किया जा सकता है! इतिहासज्ञ कहते हैं कि जितना प्राचीन साहित्य होगा, उतना ही वह अश्लील और गंदा होगा। जैन साहित्य इस कथन का प्रत्यक्ष खण्डन है। संसार में बहुत ही कम इतिहासज्ञ हैं जिन्होंने जैन साहित्य का परिशीलन किया है। जब यह साहित्य पूर्ण-रीत्या अभिव्यक्त हो जायगा तब बहुत से प्रचलित मनघढ़त विचारों में परिवर्तन हो जायगा।

यों तो जैन साहित्य म तत्व-ज्ञान नैतिक विचार, धर्म सिद्धान्त इत्यादि अनेक बातें हैं। पर चरित संगठन इस की मूल सम्पत्ति है। साधु और गृहस्थ दोनों के लिए उच्चकोटि के चारित्रादर्श वर्णित हैं। चारित्रसंगठन का मूल-मन्त्र यह है:—

"अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यापरिग्रहः"

जिस महत्वशाली, उज्ज्वल, निर्मल एवं देदीप्यमान आदर्श को जैनधर्म ने अपने सन्मुख रखा है, उसकी उच्च सीमा तक गृहस्थ जैनसमाज पहुँची है या नहीं। यह बात निश्चय रूप

से कहना तो कठिन है पर यह कहने से किंचित्मात्र संकोच भी नहीं है कि जैन साधुओं ने इस आदर्श को चरितार्थ करे दिखाया है। गृहस्थ जैन और साधुजैन में वडा अन्तर है। यदि एक दक्षिण ध्रुव है तो दूसरा उत्तर ध्रुव है। नगरों में, ग्रामों में, कहीं भी देखिए, जैनसाधु एक अद्वितीय अनोखी और विलक्षण वस्तु है–वह अपनी शानी नहीं रखता है–उसके बराबर होने का कोई दावा नहीं कर सकता। उसके रूप में हो जाना वैराग्य की पराकाष्टा है। आत्म-त्याग की चरमसीमा है परमार्थ की अचल सीढी है–मानुषी चारित्र की अन्तिम शिखर है-विश्वप्रेम की सशरीर मूर्त्ति है-दया-धर्म की परमगति है–अहिंसा सिद्धान्त की अन्तिम सीमा है। जैन साधु हो जाना मनुष्य से देवता हो जाना है। संसार के विविध भोग विलासों को लात मार कर त्याग की मूर्त्ति हो जाना है। यदि आज भारतवर्ष में जैन साधु न होते तो हम धनमदान्ध, जड़वादी, नवीन सभ्यतानिमग्न लोगों को विशेषतः पाश्चात्य देशों को, यह नहीं दिखा सकते कि हिंदू आध्यात्मिक सभ्यता की किस उच्च शिखर पर चढ़ गए थे और वह अलभ्य दिव्य स्थान अब भी उनके साधुओं के अधिकार में है।

जैनसमाज! तेरा जीवन तेरे साधुओं के सच्चरित्र से ही है। यदि तेरे साधु नहीं है तो तेरा स्थान संसार की अन्य

ज्ञातियों में कुछ ऊंचा नहीं है ! जैसे और मनुष्य हैं वैसे ही गृहस्थ जैन हैं। लड़ते हैं झगड़ते हैं, मुकदमेबाजी करते हैं, दुकानदारी में अन्य लोगों के समान झूट छल करते हैं, भोग विलास व्यभिचार किसी अन्य जाति से श्रेष्ठ नहीं है। बुरी लगे तो बाजार में जाकर देख लो। किसी ग्राहक को यह अन्तःकरण से विश्वास नहीं है कि यह जैनगृहस्थ की दुकान है, यहां सब बातें अच्छी हैं, पूरी ईमानदारी है, धोखा कभी नहीं होगा।

भू-मण्डल की चारों दिशाओं में शंखध्वनि से घोषणा कर दो। कि जैनसाधु के चरित्र, उसके व्यवहार, उसके वर्ताव में संसार में किसी प्राणी को शंका नहीं है, उससे कोई नहीं डरता है, उससे किसी को धोखा होने का संशय नहीं है, उस में सभी का विश्वास, वह सभी का सम्मानपात्र है। कहां जैन साधु और कहां जैनगृहस्थी ? दोनों में तुलना करना रत्न और पाषाण की तुलना करना है। यही नहीं, कहां निर्मल निर्दोष जैनसिद्धान्त और कहां जैनगृहस्थ का चरित्र। मेरे कहने का प्रयोजन यह नहीं है कि जैनगृहस्थ अन्य धर्मावलम्बी गृहस्थों से गिरा हुआ है बल्कि यह कि जैसे जैनसाधु सर्व धर्मों के साधुओं से उत्कृष्ट और आदर्शचरित्र हैं, वैसे जैनगृहस्थ दूसरे गृहस्थों की तुलना में कुछ बढ़े चढ़े नहीं है ! माना वह

समाज के नियमों से मांस मदिरा का त्याग करता है ! और उपवास करने में पक्का है और अपने व्रतोत्सवों पर कुछ कबूतरों और पक्षियों को भी दाम देकर छुड़वा देता है ! पर क्या ऐसा होने पर जैनधर्म का पूर्ण अनुयायी हो गया। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर आदि कषायों की ओर देखिए। क्या कोई अपने हृदय पर हाथ धर कह सकता है कि वह इन दुर्गुणों पर अन्य धर्मानुयायियों की अपेक्षा अधिक विजय प्राप्त किया हुआ है। यदि नहीं है, तो हो चुकी। हमारा अभिप्राय जैनगृहस्थों को उत्तेजित कर अपने उच्च निर्मल धर्म के उच्चकोटि के चारित्र संगठन पर ध्यान दिलाना है। जब उनके पास आदर्शचरित्र के साधु हैं तो अपना चरित्र उच्च करने में वे क्यों उपेक्षा करते हैं। उनके उपदेश, सत्संग और चरित्र प्रभाव से वे आदर्श गृहस्थ हो जाने का अवसर रखते हैं। यदि ऐसा अवसर खो दिया तो सर्वनाश होगया। भारतवर्ष की वर्तमान दशा में हमें एक ऐसे समाज की आवश्यकता है, जो संसार को अपने सच्चरित्र और व्यवहार से पूर्ण विश्वास दिला दे कि प्राचीन भारतीय सभ्यता में आदर्श गृहस्थ होते थे। और ऐसे मनुष्य अब भी मिलते हैं। जैन समाज अपने आदर्श साधुओं के सत्संग से ऐसी समाज हो सकती है, यदि यह कार्य इसने नहीं किया तो इस का कार्य

संसार में अपूर्ण रहा और जैनधर्म के उच्च और निर्मल सिद्धान्तों का प्रकाश व्यर्थ ही गया।

जैन साधु का आदर्श बड़ा उच्च है, इस समय भी वह सर्वोत्कृष्ट है। हमने किसी को कहते नहीं सुना, कि किसी जैन साधु ने किसी को कभी किसी प्रकार का कष्ट पहुंचाया। जैन साधु किसी प्रकार का नशा नहीं करता, कभी किसी से दूध मलाई नहीं मांगता, किसी के घर पेट भर नहीं खाता, कभी रुपये पैसे की भिक्षा नहीं मांगता, वह तो खाने मात्र को कई स्थानों से अपने नियमानुसार मांग लेता है। और जब और जहां उसे अपने नियमानुसार कुछ नहीं मिलता तो भूखा रह जाता है। जैनसाधु सवारी पर नहीं चढ़ते, सैकड़ों कोसों की यात्रा पैदल ही करते हैं, और पैर में जूता या खड़ाऊँ भी नहीं पहिनते। वे किसी स्थान पर बहुत दिन नहीं रहते वर्षाकाल में यात्रा बंद रखते हैं, क्योंकि उस समय छोटे २ जीव-जन्तु उत्पन्न हो जाते हैं और उनके चलने से जीवहिंसा होती है। चलने में दृष्टि नीचे की ओर रखते हैं और पैर को धीरे २ रखकर चलते हैं मुख के सामने वस्त्र बंधा रखते हैं जिससे मुख की भाप से किसी अदृष्ट जीव की हिंसा न हो जाय, बगल में एक ऊन का गुच्छा रखते हैं जिसे रजोहरण कहते हैं, जहां कहीं बैठते हैं तो उस गुच्छे से पहिले भूमि स्वच्छ कर लेते हैं इनका

सब काल धार्मिक विचार और उपदेशों ही म लगता है। ये कभी कोरी सांसारिक बातों में कालाक्षेप नहीं करते। इनकी तपस्या भी बड़ी कठिन है और इन का आत्म-त्याग सर्वथा सराहनीय है। जैनसाधुओं के कैसे कठिन नियम हैं और उन की दिनचर्य्या किस प्रकार की है? इसका पूरा वर्णन इस पुस्तक के २२७-२३० पृष्ठों में दिया है। सारांश यह है कि जिस मूल-मन्त्र को हम पहिले कह आए हैं उसको सर्वांश पालन करने में जैनसाधु भरसक चेष्टा करते हैं। उनका जीवन नितांत पवित्र, उच्चाशय, परोपकारनिष्ट एवं त्याग संयुक्त होता है।

ऐसे ही एक परमत्यागी, सच्चरित्र, परोपकारी साधु का जीवनचरित्र इस पुस्तक में दिया है। आप का पवित्र नाम चौथमल जी है। आपका जन्म सं० १९३४ के कार्तिक मास में नीमच नगर में हुआ था। आपने १५ वर्ष तक विद्या पढ़ी सं० १९५० में आप का विवाह हुआ। उसी वर्ष आपके पिता जी की मृत्यु हुई और सं० १९५२ में आपने अपनी माता की सम्मति से मुनि हीरालाल जी से दीक्षा ली। इस समय आपकी आयु ४८ वर्ष की है। इन साधु जी महाराज से आगरे और धौलपुर में मुझे भी मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आपके कई व्याख्यान भी मैंने सुने हैं मैं कह सकता हूं कि आपकी भाषण-शक्ति बड़ी प्रभावशालिनी है। आपकी

वक्तृता में सारगर्भित विचारपूर्णता, सर्वांश सत्यता और निर्भयता होती है। आपके विचार बड़े उदार हैं और अपने व्याख्यानों में आप किसी के धर्म तथा मत पर आक्षेप नहीं करते। भाषण को रोचक बनाने के लिए आप स्थान २ पर श्लोक, दोहे, गजलें भी कहते जाते हैं! आपका अधिकांश समय सत्यान्वेषण में लगता है। आपकी योगसंयमता प्रशंसनीय है। आत्म त्याग की तो आप मूर्ति हैं, आपने अनेक ग्रन्थ भी रचे हैं जो सर्वो-पयोगी और शिक्षा-प्रद है। इन पुस्तकों का पूरा हाल पृष्ठ २०५ पर है। साधु जी महाराज ने जिस २ स्थान पर भ्रमण किया है वहां के नरनारियों में अपने सदोपदेश से धार्मिक भाव उत्पन्न कर दिये हैं कई स्थानों पर जीवहिंसा बंद करा दी है, और सर्वसाधारण मनुष्यों को सच्चे मार्ग पर चलने की शिक्षा दी है।

आप विद्वान् भी कुछ कम नहीं हैं आप ने संस्कृत और प्राकृत अनेक ग्रंथों का परिशीलन किया है। और आप कई प्रचलित भाषाओं पर अधिकार रखते हैं। आपका स्वभाव इतना सरल और सौम्य है कि जो कोई व्यक्ति आप से मिलता है, मुग्ध हो जाता है और सदैव आप से मिलने की अभिलाषा रखता है। आपके शिष्य भी बहुत हैं जो अपने आदर्श गुरु के चरित्र का अनुकरण करते हैं। इन शिष्यों में से एक शिष्य

की कृपा से यह सब सामिग्री मिली है जिसके आधार पर यह जीवनचरित्र लिखा गया है।

इस पुस्तक के अन्त में कई परिशिष्टें दी हुई हैं। जिनमें से एक का "शीर्षक" वेदादि ग्रन्थों से जैन-धम की प्राचीनता है। इस विषय में लेखक से हमारा मत-भेद है लेकिन मतभेद के सविस्तार कारण देने की इस समय आवश्यकता नहीं है। क्योंकि यह विषय पहिले तो परिशिष्ट रूप मे है और दूसरे पुस्तक के विषय से अधिक सम्बन्ध नहीं रखता।

लेखक ने पुस्तक को उपयोगी, शिक्षा-प्रद और रोचक बनाने की कोई चेष्टा उठा नहीं रक्खी है। पुस्तक की भाषा सरल, सुबोध और अधिकांश शुद्ध है। हम आशा करते हैं कि इसका प्रचार जैनसमाज में भलीभांति होगा और इसके पढ़ने से सभी मनुष्य लाभ उठावेंगे। अस्तु!

कन्नोमल

एम. ए. सेशन जज [धोलपुर स्टेट]

लेखक का वक्तव्य ।

प्रकृति देवी के नियम की लीला बड़ी विचित्र है कि जब जब वह अपने साम्यवाद सम्पन्न साम्राज्य में किसी भी प्रकार की समता का अभाव या विषमता की प्रचुरता देखती है, तब वह अपने नियमानुसार ऐसी प्रेरणा कर देती है कि उस की स्थिति पुनः अनुकूल होजाती है; संसार की सभी बातों में इस अटल नियम का प्रयोग होते देखा गया है। इस अचूक नियम के निर्वहण के लिये एक ग्रन्थकार का कथन भी है कि–

यदा यदा धर्महतिर्जगत्यां,
प्रजायतेऽनर्थवशाद्वृहत्याम् ।
तदा तदा कोऽपि परोपकारी,
तदुन्नतिं कामयतेऽर्थकारी ॥ १ ॥

एवं प्रवादो भुविनिर्विवादो,
विराजते लोकविचारणायाम् ।
नाभेयवीरादि महानुभावा,
निदर्शनान्यत्र सतां मतानि ॥ २ ॥

इसी नियम के अनुसार समय २ पर इस जगतीतल में ऐसे महानुभावों का प्रादुर्भाव हुआ है और होता रहता है, जो अपनी प्रतिभा के प्रताप तथा चित और चरित्र की देवोपम चमत्कृतियों से संसार को अचम्भित करते हुए उसके पाप और तापों का समूल नाश कर संसारी विषयासक्त जीवों के कल्याण की स्थापना में दत्तचित्त होते हैं। और अपनी सत्यनिष्ठा, आदर्श-चरितावली, दूरदर्शिता, दृढ़ता, इन्द्रियनिग्रहता, धार्मिकता, आदि स्वर्गीय गुणों से युक्त जिस देश, काल और समाज में उत्पन्न होते हैं, वे उसकी भावी उन्नति का मार्ग प्रशस्त तथा परिमार्जित कर जाते हैं। हमारे चरितनायक भी ऐसे ही स्वर्गीय सद्गुणों के द्वार उन्मुक्त करने वालों में से एक हैं। आपके जीवन का सर्वोत्तम और अधिकांश भाग अहिंसा, निर्वाण और वासना हनन की उलझनों को सुलझाने तथा उन का मध्य भारत के प्रायः समस्त गांवों में प्रचार करने ही में बीता है, और बीत रहा है। यहां यह कहने की आवश्यकता नहीं कि आपने जहां २ अपने पावन चरणों को रखा है, वहां २ के प्रायः सभी नर नारियों ने, हर एक समाज, जाति और अवस्था के लोगों ने आप के सदुपदेशों से लाभान्वित होकर, वर्तमान समय के दुःख दर्दों में कितनी चिरशान्ति पाई है, वे लोग कहां तक धर्म और देश के सच्चे साथी बने हैं। आपके दर्शन

और पीयूषवर्षी तथा समयोपयोगी वचनों का सुधारस पान करने के लिये मध्य भारत के हिन्दूधर्मावलम्बी राजा, महाराजा और रईस लोग, दूर २ से आप के पास समय २ पर आते रहते हैं। आपके भाषणों की भाषा बोधगम्य, विश्वबन्धुत्व के भाव से भरी हुई और सरलता लिये हुए बड़ी ही प्रभावशालिनी रहती है। बस ऐसे ही अनेक कारणों से प्रेरित होकर और यह सोच कर, कि ऐसे महानुभाव सन्तों की जीवनी यदि जनता के हाथ में पहुंचे तो धार्मिकता के साथ २ देश की उठती हुई अनेक कुरीतियों का निवारण भी सहज हीं में हो सकता है। मैंने इस जीवनी को लिखने का अनुचित साहस किया है। और इसमें आपके समस्त विचार और सम्पूर्ण उपदेश नहीं, बल्कि जीवन की मुख्य २ घटनाओं और आप के धार्मिक उपदेशों में व्यवहार के पुट का सूक्ष्म रूप में संग्रह कर दिया है! ऐसे महात्मा और प्रसिद्ध उपदेशक की जीवनी लिखने को मध्य भारत के किसी भी धुरन्धर विद्वान् की लेखनी उठती हुई न देख, मैंने ही यह अनधिकार चेष्टा की है, जिसमें मेरा 'स्वान्तः सुखाय' है।

क्या ही अच्छा होता यदि यह महत्कार्य मेरे जैसे अल्पज्ञ द्वारा न होकर किसी और महानुभाव के द्वारा सुसम्पन्न होता। कुछ सज्जन मेरी इस अनधिकार चेष्टा का कारण जानते हैं,

जिस का यहां उल्लेख करना अप्रासांगिक होगा। मानसिक अशान्ति, अपर्याप्त मननशीलता और सब से बढ़कर समय का अभाव। इस परिस्थिति में मैं अपनी अल्पज्ञता के बल पर थोड़ी अवधि में जैसा कर सकता था, करके आप के सन्मुख उपस्थित हुआ हूं। अपरिहार्य कठिनाइयों में किए हुए कार्य कभी सर्वांग पूर्ण नहीं होते यह एक निश्चित सिद्धान्त है। ऐसी दशा में मेरी इस क्षुद्र रचना का त्रुटिपूर्ण होना अवश्यम्भावी है। जैसा कि मैं चाहता था इस कार्य के लिये मुझे पर्याप्त अवकाश आदि सुविधाएं मिलतीं तो सम्भव था मैं इस की त्रुटियों में किसी अंश तक और कमी कर देता। किन्तु, प्रकाशक महाशय की आतुरता ने मुझे वैसा करने का अवसर न दिया। अतः विवश हो मुझे इसी रूप में आप की सेवा करनी पड़ी है। मुझे बड़ा खेद है कि चरितनायक महोदय जैसे आदर्श महामना की जीवनी तद्रूप न हो सकी। खैर! यदि अवसर मिला तो आगे मैं इस की अपूर्णता को मिटाने की चेष्टा करूंगा। आशा है उस समय तक विद्वान् समालोचक महाशयों से भी मुझे इस विषय में सत्परामर्श मिल जायगा।

हमारे चरितनायक महोदय के सुयोग्य शिष्य श्रीयुत प्यारचन्दजी महाराज की महती कृपा से ही मुझे इस पुस्तक के कलेवर की सामग्री प्राप्त हुई है। आप करोड़ों बार हमारे

धन्यवाद के पात्र हैं। यदि आप की यह कृपा न हुई होती तो यह परिश्रम "जिय विनु देह नदी विनु वारी।" की उक्ति को ही चरितार्थ करता।

मेरी कृति कुछ भी नहीं हुई, यह तो स्वयं सिद्ध है, किंतु चरितनायकजी के विशुद्ध चरित्र की सुगंध से इस गंधहीन कृति में कुछ सरसता आजाने की सम्भावना अवश्य है। उस दशा में इस के अध्ययन, मनन और चिन्तवन से श्रावक, श्राविकाओं और जैन जैनेतर जनता का जो कुछ हित साधन होगा, उस का श्रेय श्रद्धेय श्रीप्यारचन्दजी महाराज को ही है। एकमात्र गुरुभक्ति से प्रेरित होकर इस चरित्र के तैयार कराने में आपने जिस प्रेम, उत्साह और परिश्रम से योग दिया है वह सर्वथा स्तुत्य है। आप की गुरुभक्ति को आदर्श कहा जाय तो भी अत्युक्ति न होगी।

जो महानुभाव मुझ से सच्चा स्नेह रखते हैं और मेरी तुच्छातितुच्छ कृतियों पर प्रसन्न होकर साहित्य सेवा का मार्ग-प्रदर्शन करते हुए मुझे इस के लिये सदा उत्साहित करते रहते हैं उन का मैं आभारी हूं, और सब के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूं।

अन्त में सुप्रसिद्ध साहित्यानुरागी और विद्याप्रेमी, परम आदरणीय, स्वनाम धन्य, वाणिज्यभूषण, श्री० सेट लालचन्दजी सा० सेठी (झालरापाटन) को जिन की सेवा में मैं रहता हूं और जिन की महती कृपा से कुछ कर सकने के लिये समय २ पर मुझे प्रोत्साहन मिलता रहता है, शुद्धान्तःकरण से धन्यवाद देता हूं। साहित्यानुरागी सम्पत्तिशालियों में आप का एक मुख्य स्थान है। अपने बढ़े हुए कारोबार से समय निकाल कर उस का अधिकांश भाग आप साहित्यानुशीलन में व्यतीत करते और साहित्य-सेवियों की सहायता के लिये हर समय तैयार रहते हैं। हमारी हार्दिक भावना है कि आप सदैव सकुटुम्ब प्रसन्न रहें, आप चिरायु हों और आप के सब मनोरथ सफल हों। किमधिकम्!

अयोध्याश्रम
झालरापाटन
(राजपूताना)
दीपावली १९८१ वि.

विनयावनत,
लक्ष्मीसहाय माथुर।

ॐ

विशेष आभार।

श्रीमान् सर्वमान्य अनेक गुणसम्पन्न सादर विद्वान् लाला कन्नोमलजी साहिब एम. ए., सेशन जज धौलपुर निवासी ने समय समय पर जैनधर्म के तत्त्वों के प्रचार के लिये, जैनधर्म पर आये हुए भ्रमात्मक आक्षेपों के निवारण के लिये व सत्यान्वेषण के लिये अनेक पुस्तकें व लेख आदि लिखकर जैनधर्म की जो महत्त्वपूर्ण सेवा की है उसके लिये जैनसमाज आपकी चिर आभारी है और रहेगी।

आपके लेख व रचनायें निर्भीक, भावपूर्ण, सारगर्भित और महत्त्वशाली होते हैं। आप की वृत्ति उदार और सौम्य है। आप अनेक धर्मों से परिचित भी हैं, इसी कारण आप सत्यस्वरूप से असत्य के खण्डन में नहीं हिचकिचाते, वल्कि निर्भीकतापूर्वक वास्तविक बात सभ्य संसार के सामने रखने में भी नहीं चूकते—इसके अनेक उदाहरण विद्यमान हैं।

श्रीमान् ने इस पुस्तक की भूमिका लिखने का जो परिश्रम उठाया है, उसके लिये आप को हार्दिक धन्यवाद दिया जाता है और आप का आभार विशेषरूप से माना जाता है।

प्रकाशक.

"पाठक इस प्रकार समझें"

सुनहरी नामावली में "श्री० रामचन्दजी हीराचन्दजी छाजेड़" डेरागाज़ी खां, पञ्जाब वालों की सहायता के ४०) रुपये लिखे गये हैं उनके स्थान में पाठक ८१) समझें.

* ॐ *

आभारप्रदर्शन ।

जिन २ महानुभावों से और जिन २ विद्वानों की रचना से मुझे इस ग्रन्थ के तैयार करने में सहायता मिली है उन सब का मैं आभारी हूं और सब के प्रति हार्दिक भावों से कृतज्ञता प्रकट करता हूं, भूल से जिन का शुभ नामोल्लेख न किया जा सका हो, वे सज्जन उदारतापूर्वक क्षमा प्रदान करें ।

१. श्री० चरित्रनायकजी के सुशिष्य मुनि श्रीशंकरलालजी मा०
२. श्रीयुत् वाडीलालजी मोतीलालजी शाह और ब्रह्मचारी श्री शीतलप्रसादजी ।
३. „ हीरालालजी जैन, एम. ए. एल एल. बी. ।
४., „ छोटूलालजी पोखरना (इन्दौर) ।
५. „ पं० द्वारिकाप्रसादजी जैन, (देहली) ।
६. „ कुं० मोतीलालजी रांका, (ब्यावर) ।
७. „ पं० जनार्दन भट्ट एम. ए. ।
८. „ पं० नाथूरामजी प्रेमी ।
९. „ पं० नगेन्द्रनाथ वसु (प्राच्यविद्या महार्णव) ।

१०. श्रीयुत अध्यापक मालपाणी जी "विशारद" (इन्दौर)।
११. ,, ब्रा० देवीसहायजी माथुर (साहित्य-भूषण)।
१२. ,, अध्यापक श्रीनाथजी मोदी, सादड़ी (मारवाड़)।
१३. ,, मास्टर कन्हैयालालजी गार्गीय, सेक्रेटरी।
दी महालक्ष्मी मिल्स कम्पनी लिमिटेड, ब्यावर।
१४. ,, चांदमलजी टोडरवाल, ब्यावर।

ग्रन्थसूची.

१. भावना शतक (गुजराती)।
२. चन्दनबाला (आत्मानन्द जैन ट्रेक्ट सोसाइटी)।
३. सरस्वती (मासिक पत्रिका)।
४. हिन्दी-शब्दसागर (काशी-नागरी-प्रचारणी सभा)।
५. अजैन विद्वानों की सम्मतियें व श्रावकधर्म-दर्पण (श्रीजैन पुस्तक प्रकाशक कार्यालय ब्यावर)।
६. सत्यार्थ दर्पण (श्री अजितकुमारजी शास्त्री लिखित)।
७.

ग्रन्थ प्रकाशन के कार्य में जिन २ महानुभावों से हमें आर्थिक सहायता प्राप्त हुई है उनके शुभ नाम आभार सहित "सुनहरी नामावली" में प्रकाशित किये गये हैं।

यहां हम श्री० कुंवर मोतीलालजी रांका ब्यावर निवासी को विशेष धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकते कि जिन्होंने हमें समय समय पर अपना अमूल्य समय व्यय कर अनेक कार्यों में उचित सम्मति प्रदान की व श्री० पं० द्वारिकाप्रसादजी जैन देहली निवासी ने अपना अमूल्य समय व्यय कर पुस्तक छपाई व प्रूफ संशोधन इत्यादि अनेक कार्यों में सहायता दी, अतएव उन को भी हम हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

लेखक.
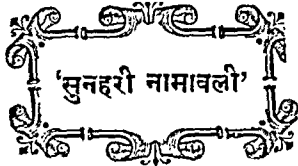
जिन २ महानुभावों ने इस ग्रन्थ को लागतमात्र से कम कीमत में अधिक प्रचार कराने के लिये आर्थिक सहायता प्रदान की है उनको शतशः धन्यवाद देते हैं और उनके शुभ-नाम आभार सहित नीचे प्रकाशित किए जाते हैं:—

संख्या		शुभनाम
५००)	श्रीमान्	कुन्दनमलजी लालचन्दजी कोठारी जेसलमेरी (ब्यावर)
५००)	,,	मुकुन्दचन्द जी सोहनराज जी चालिया पाली (मारवाड़)
२००)	,,	जांवतराज जी मिश्रीमल जी मुणोत-(ब्यावर)
२००)	,,	जुहारमल जी भूरजी पूनमिया-सादड़ी (मारवाड़)
१२१)	,,	पूरनचन्द जी रतनचन्दजी देहली
१०१)	,,	नूपचन्दजी इन्द्रचन्द जी देहली
१०१)	,,	श्रीस्थानकवासी जैन श्रीसङ्घ, मदनगञ्ज (किशनगढ़)
१००)	,,	जीवनसिंह जी साहिब हाकिम आसींद (मेवाड़)
१००)	,,	पुखराजजी भण्डारी फस्ट हाकिम बाड़मेर
१००)	,,	इन्द्रमलजी मांगीलालजी ढांगी-गंगार (मेवाड़)

१००) श्रीमान् चुन्नीलाल जी गुमानचन्द जी पुनमिया सादड़ी
१००) ,, हीराचन्दजी रतनचन्दजी सादड़ी (मारवाड़)
७५) ,, अजीतसिंहजी सिमरथमलजी खींवसरा (जोधपुर)
५१) ,, उदयचन्दजी छोटमलजी मूथा उज्जैन
५०) ,, कुन्दनमलजी अमरचन्दजी सादड़ी (मारवाड़)
५०) ,, ताराचन्दजी डाहाजी सादड़ी (मारवाड़)
५०) ,, गुलराजजी पुनमचन्द जी हरमाड़ा (किशनगढ़)
५०) ,, जेसलमेरी चुन्नीलाल जी वोहरा की धर्मपत्नी श्रीमती लहरी बाई मु० वरोरा
४०) ,, रामचन्दजी हीराचन्दजी-छाजेड़, (डेरागाजीखाँ)
२५) ,, ओंकारलाल जी बाफणा-हमीरगढ़ (मेवाड़)
२५) ,, मूलचन्दजी जेताजी सादड़ी (मारवाड़)
२५) ,, नथमल जी मनरूप जी—सादड़ी (मारवाड़)
२५) ,, सरदारमलजी कस्तूरचन्द जी मुता सादड़ी (मारवाड़)
२५) ,, मन्नालाल जी पन्नालालजी बड़ोद (मालवा)
२५) ,, गुलराज जी सन्तोकचन्द जी पूना सिटी

विशेष धन्यवाद सादड़ी श्रीसङ्घ को दिया जाता है कि जिन्होंने इसके लिखवाने में बहुत सहायता दी ।

मास्टर मिश्रीमल.

॥ श्रीमद्वीराय नमः ॥

निवेदन.

वर्तमान नवयुग में यद्यपि जैनसाहित्य के अन्दर गल्प, नाटक, गद्य, पद्य, कविता, भाषा इत्यादि अनेक प्रकार की पुस्तकें अधिक संख्या में निकल चुकी हैं और निकल रही हैं, तथापि ऐसी पुस्तकें आवश्यकता से बहुत कम पाई जाती हैं कि जिनमें किसी आदर्श पुरुष की जीवनी अंकित हो। कुछ समय से कई एक विद्वानों ने इस कमी की तरफ लक्ष देकर कुछ प्रयत्न किया भी है, परन्तु वह अभी आवश्यकता से बहुत ही अल्प हुआ है। इसी कमी की तरफ लक्ष देकर समिति ने इस पुस्तक प्रकाशन के कार्य को सहर्ष स्वीकार किया है।

यद्यपि सच्चे जीवन वृत्तान्तों में कल्पनामय मनोरञ्जक वार्ता नहीं पाई जाती है और सम्भव है इसी कारण से वे मनोरञ्जक गल्पें और उपन्यासके शौकीनों व परावगुणान्वेशी मनुष्यों को रुचिकर न भी हों, परन्तु गुणान्वेशी मनुष्य तो ऐसे आदर्श जीवनचरित्रों का हृदय से स्वागत करते हैं।

दूसरों का अनुकरण करना यह मनुष्यों का प्राकृतिक स्वभाव है, इसलिये समाज के समक्ष आध्यात्मिक और पारमार्थिक उच्च जीवन बिताने वाले, महत्पुरुषों का जीवन-वृत्तान्त रखा जाय तो विशेष लाभ हो सकता है, और लोग चरित्रनायकजी के गुणों के साथ अपनी तुलना करके भला और

बुरा समझकर अपने जीवन को भी उत्तम बनाने की कोशिश करते हैं। इसी नियमानुसार आदर्श जीवनचरित्र इह लोक से परलोक तक के सुखों का सच्चा मार्ग दिखाने में एक शिक्षक का काम देता है।

उदाहरण के लिये देखिये—श्रीतीर्थङ्कर देवों के जीवन-चरित्र पढ़ने व श्रवण करने से आत्मिकशक्ति का विकाश होकर आत्मा की अनन्त शक्ति का भान अर्थात् नर से नारायण होने का परिचय मिलता है। और स्वनाम धन्य श्रीविजय-कुंवर और श्रीमती विजयाकुंवरी के जीवन वृत्तान्त से अखंड ब्रह्मचर्य व्रत की शिक्षा मिलती है। और प्रतापी सत्यधारी राजा हरिश्चन्द्र की जीवनी से "सत्य" का महत्त्व प्रकट होता है, और महाराणा प्रताप के जीवनचरित्र से अपूर्व धैर्य और दृढ़ प्रतिज्ञा पालन करने का अपूर्व उदाहरण मिलता है। इस लिये जीवन चरित्र का स्थान साहित्य में उच्च कोटि पर गिना जाता है। धार्मिक, सामाजिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति के लिये महा-पुरुषों के जीवन चरित्र लिखने का प्रचार प्राचीन काल से ही प्रस्तुत है।

प्रवल वैराग्य, अपूर्व त्याग, निश्चल मनोवृत्ति, अनुपम धैर्य, सुदृढ़ सहनशीलता, चित्ताकर्षक शक्ति, अपूर्व संयम, इन्द्रिय निग्रहता—इत्यादि अनेक उत्तमोत्तम गुणों से अपने मनुष्य जीवन को परम आदेश रूप में परिणत कर संसारके सन्मुख अपना दिव्य जीवन प्रकट करने वाले महा-पुरुषों का ही जीवन चरित्र लिखा जाता है, और उन्हीं महा-पुरुषों में से एक हमारे चरित्र नायक जी भी हैं। आपके इन्हीं गुणों से प्रेरित होकर ही हमने इस पुस्तक को लिखवा कर प्रकाशित करने

का प्रथम ही साहस किया है, और आपके महत्त्वपूर्ण कार्यों का संक्षिप्त नमूना लेकर पाठकों के सन्मुख उपस्थित हुए हैं। आशा है सुहृदय उदारचित्त पाठक इसे अवश्य अपनाकर हमारे साहस की वृद्धि करेंगे।

जिन जिन महानुभावों के चित्र पुस्तक में दिये गये हैं उन सभी का परिचय विस्ताररूप से देने की हमारी हार्दिक इच्छा थी—परन्तु हम उन में से कई महानुभावों के परिचय से अज्ञात होने के सबब व समय के अभाव से विशेष प्रयत्न न कर सकने के कारण हम उन का परिचय विस्ताररूप से नहीं दे सके, इस का हमें खेद है। केवल चार ही महानुभावों का परिचय जो हमें संक्षिप्तरूप से मिला, वह इस पुस्तक में दिया गया है। सम्भव है उन में किसी प्रकार की त्रुटि रह गई हो तो हम उन भावों से क्षमा चाहते हैं। यद्यपि हम ने इस बात का पूरा ध्यान रक्खा है कि पुस्तक में किसी प्रकार की त्रुटि न रहे तथापि दृष्टिदोष के कारण से व प्रेसवालों की असावधानी से व अन्य किसी कारण से सम्भवतः कोई त्रुटि रह गई हो तो सुज्ञ पाठक सुधार कर पढ़ने की कृपा करेंगे, और हमें उन त्रुटियों से सूचित करने की उदारता दिखलावेंगे तो यथा सम्भव द्वितीयावृत्ति (Second edition) में सुधारने का प्रयत्न किया जायगा।

श्रीसंघ का कृपाकांक्षी—

मास्टर मिसरीमल,

मन्त्री-श्रीजैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति,

रतलाम।

विषय-सूची ।

विषय

ग्रन्थारम्भ विषय-सूची ।

विषय | पृष्ठ

परिशिष्ट प्रकरण सूची ।

जैन धर्मके अग्रगण्य श्रीयुत् लाला गोकुळचंदजी जोहरी देहली

ॐ

आदर्श मुनि

मङ्गलाचरण ।

धम्मो मङ्गल मुक्किट्ठं, अहिंसा सजमो तवो ।
देवा वि तं नमंसन्ति, जस्स धम्मे सया मणो ॥

दशवैकालिक-सूत्र, अ० १ गा० १

भावार्थ—अहिंसारूप संयम और तप ही संसार में सर्वोत्तम उत्कृष्ट धर्म है और ऐसे ही धर्म में प्रवृत्त होनेवाले महा-पुरुषों को देवता भी नमस्कार करते हैं। ऐसे ही आदर्श पुरुषों के जीवन से हमें बहुमूल्य शिक्षायें प्राप्त होती हैं।

"Lives of great men all remind us
We can make our lives sublime;
And, departing, leave behind us
Footprints on the sands of time."

Longfellow's Psalam of Life.

नाण-दंसण सम्पन्नं, संजमे य तवे रयं ।
एवं गुणसमाउत्तं, संजयं साहू पालये ॥

दशवैकालिक अ० ७ गाथा ४९

॥पूज्यश्री म० ॥श्री मगनमलजी महाराज की निश्राए

जैनधर्म का प्राचीन इतिहास

और

गुर्वावलि ।
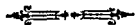
जैनधर्म पर इधर जो वर्षों से भारत और अन्य देशों में चर्चा चल रही है वह साहित्य-प्रेमियों से छिपी नहीं है । समय २ पर प्रकाशित ग्रन्थों, लेखों और व्याख्यानों से इस विषय पर काफी प्रकाश पड़ चुका है । बड़े २ साहित्य मर्मज्ञ विद्वानों ने इस सम्बन्ध में गहरी खोज कर २ के इस साम्प्रदायिक-प्रश्न को तटस्थ ला रक्खा है । इस विषय पर बड़ी २ रचनाएँ हो चुकीं और हो रही हैं । ऐसी दशा में मेरे जैसे अल्पज्ञ का एक ऐसे गूढ़ विषय पर लेखनी उठाना नितान्त धृष्टता है । किंतु, प्रकाशक महाशय का आग्रह हुआ कि इस चरित्र में जैनधर्म पर भी कुछ लिखा जाय । उसके उपकरण के लिये जब मैंने इस विषय का अनुशीलन किया तो वह इतना हो गया कि जिसके द्वारा एक पृथक् ग्रन्थ रचना हो सके । इस कारण उसको छोड़ कर पाठकों की जानकारी के लिये मैं यहां कुछ विचार सङ्कलन करता हूँ । आशा है, वह उन्हें उपयोगी और रुचिकर प्रतीत होगा ।

जैनधर्म की प्रसिद्धी भारतवर्ष में तो है ही, पर अब योरुप, अमेरिका में भी उसका प्रचार होता जा रहा है। आज कल योरुप में ऐसे अनेक विद्वान् हैं, जो वर्षों से जैनधर्म का अनुशीलन कर रहे हैं। इतना ही नहीं, वहां स्थान २ पर जैन लिटरेचर सोसाइटियां भी स्थापित होती जा रही हैं।

सोसाइटियों का उद्देश जैन-तत्व-ज्ञान का प्रचार करना है। वैसे तो हमारे देश में जैनधर्म की उत्पत्ति, शिक्षा और उद्देश सम्बन्धी कितने ही भ्रांत मत प्रचलित हैं, किंतु एक गहरी ऐतिहासिक गवेषणा के पश्चात् बंगला भाषा के सुप्रसिद्ध विद्वान् लेखक श्रीयुत वरदाकांत मुखोपाध्याय एम. ए. ने लिखा है कि "जैन, निरामिष भोजी क्षत्रियों का धर्म है। "अहिंसा परमो धर्मः" इसकी सार-शिक्षा और जड़ है। जैनियों के मत में जीव-हिंसा न करना, जीवों को कष्ट न देना यही श्रेष्ठ धर्म है। साधारण लोग इस धर्म को अति सामान्य जानते हैं। कोई कहते हैं यह वणिक ओसवाल, श्रावगी आदि और नास्तिकों का धर्म है, कोई समझते हैं यह हिंदू अथवा बौद्धधर्म की शाखामात्र है—तथा शङ्कराचार्य के समय हिंदू धर्म के पुनरभ्युदय काल में इसकी उत्पत्ति हुई है। कोई २ ऐसा भी कहते हैं कि यह हिंदू दर्शनशास्त्र की गवेषणा (शोध) का अन्तिम फल है। अनेक लोग समझते हैं कि महावीर और पार्श्वनाथ ही इसके आदि प्रचारक थे। किन्तु, यह सब धार्मिक मत भेद के ही कारण कहा जाता है। वास्तविक बात तो यह है कि जैनधर्म भारतवर्ष का एक अत्युच्च और पवित्र एवम् सुप्राचीन धर्म है। इसका तत्व-ज्ञान सभी दर्शन शास्त्रों से निराला है।" इंडिया आफिस लाइब्रेरी के चीफ लाइब्रेरियन

डाक्टर थॉमस एम. ए., पी. एच. डी. कहते हैं कि न्यायशास्त्र में जैन-न्याय का स्थान बहुत ऊंचा है। इसके कितने ही तत्व पाश्चात्य तर्कशास्त्र के सिद्धांतों से बिलकुल मिल जाते हैं। स्याद्वाद का सिद्धांत बड़ा गम्भीर है। वस्तु की भिन्न २ स्थितियों पर वह अच्छा प्रकाश डालता है। डाक्टर टेसीटोरी नामक इटेलियन विद्वान् ने कहा था—जैनदर्शन के मुख्य तत्व-विज्ञान शास्त्र के आधार पर स्थित हैं। मेरा यह पूर्ण विश्वास है कि ज्यों २ पदार्थ विज्ञान की उन्नति होगी त्यों २ जैन-धर्म के सिद्धांत भी वैज्ञानिक प्रमाणित होते जायगें। जर्मन विद्वान् डाक्टर हर्टल का तो यहां तक कहना है कि:—

Now, what would Sanskrit poetry be without this large-Sanskrit literature of the Jains ? The more I learn to know it, the more my admiration rises.

अर्थात्—यदि जैनों का संस्कृत-साहित्य अलग कर दिया जाय तो संस्कृत-कविता की क्या दशा हो ? अस्तु, मैं अपनी क्षुद्र बुद्धि के अनुसार कह सकता हूँ कि जैनधर्म के तत्व इतने व्यापक हैं कि वह सार्वभौम धर्म हो सकता है।

जैनधर्म कितना प्राचीन है, यह कब से प्रचलित हुआ, इस विषय का निर्णय करना कठिन ही नहीं किन्तु दुःसाध्य है। बहुत समय तक तो लोगों की यही भावना और विश्वास रहा कि—जैनधर्म केवल बौद्धधर्म ही की एक शाखा है। अध्यापक विलसन (Wilson), लेसन (Lassen), बार्थ

(Barth), वेवर (Weber) प्रभृति यूरोपियन प्रकांड पंडितों का भी ऐसा ही मत था। किंतु किस समय किस कारण से यह शाखारूप में परिणित हुआ, इस विषय में वे कुछ नहीं कहते। विद्वद्वर वार्थ ने अपनी "भारतवर्ष के धर्म" (Religions of Inida) नामक पुस्तक में स्वीकार किया है कि इस विषय में मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं है। इसी प्रकार पंडितवर वेवर ने भी (History of Indian Literature) "भारतीय साहित्य का इतिहास" नामक पुस्तक में स्वीकार किया है कि "जैनधर्म के सम्बन्ध में हमें जो कुछ ज्ञान है वह ब्राह्मणशास्त्रों से ज्ञात हुआ है।" इन अवतरणों से सिद्ध है कि उपयुक्त विद्वान् स्वयं जैनधर्म के विषय में अपनी अज्ञता प्रकट करते हैं। इससे यह स्पष्ट है कि जैनधर्म की अप्राचीनता के विषय में जो भी लोकोक्तियां हैं वे निरी निर्मूल हैं। यही नहीं, इन उक्तियों का पूर्व और पश्चिम के अनेक विद्वानों ने खंडन किया है और अपनी गहरी ऐतिहासिक खोज के द्वारा जैनधर्म को अनादि और प्राचीन सिद्ध कर दिखाया है, जैसा कि वास्तव में यह था। इन छानवीन करने वाले महाशयों में एक डाक्टर वूल्हर (व्हूलर) और दूसरे प्रोफेसर जैकोवी हैं। दोनों महाशय जर्मनी के सुविख्यात विद्वान् हैं। जैकोवी महाशय ने तो अपने अन्वेषण द्वारा यहां तक सिद्ध कर दिया है कि जैनधर्म बौद्धधर्म से बहुत पहिले का है। इसी प्रकार उदयगिरि, जूनागढ़ आदि २ स्थानों के शिलालेखादि से भी जैनधर्म की बौद्धधर्म से प्राचीनता पाई जाती है। यहां हम कतिपय देशी और विदेशी विद्वानों के मत उद्धृत करते हैं, जिन से जैनधर्म की प्राचीनता और बौद्धधर्म की भिन्नता पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

श्रीयुत महामहोपाध्याय पं० स्वामी राममिश्रजी शास्त्री भूतपूर्व प्रोफेसर संस्कृत कालेज बनारस ने, काशी में जो पौष शुक्ला १ संवत् १९६२ को व्याख्यान दिया था, उसमें आपने कहा था कि जैनदर्शन वेदान्तादि दर्शनों से पहिले का है। जैनमत तब से प्रचलित हुआ है जब से संसार में सृष्टि का आरम्भ हुआ। एक दिन वह था कि जैन सम्प्रदाय के आचार्यों की हुंकार से दसों दिशायें गूंज उठती थीं। जैन-धर्म स्याद्वाद का अभेद्य-दुर्ग है जिसके भीतर वादी प्रतिवादि-यों के मायामय गोले प्रवेश नहीं कर सकते।

सुविख्यात साहित्यज्ञ और इतिहासज्ञ श्रीमान् लोकमान्य पं० बाल गंगाधर तिलक महोदय ने ३० नवम्बर सन् १९०४ ई० को जो बड़ौदा नगर में व्याख्यान दिया था उसमें आप ने कहा था:—

"अहिंसा परमो धर्मः" इस उदार सिद्धान्त ने ब्राह्मणधर्म पर चिरस्मरणीय प्रभाव डाला है। पूर्वकाल में यज्ञ के लिये असंख्य पशुहिंसा होती थी, इसके प्रमाण मेघदूत काव्य आदि अनेक ग्रन्थों से मिलते हैं......परन्तु, इस घोर हिंसा का ब्राह्मणधर्म से विदाई ले जाने का श्रेय जैनधर्म को ही है। सच पूछिये तो ब्राह्मणधर्म को जैनधर्म ही ने अहिंसा धर्म बनाया।"

मराठी "केसरी" के सम्पादक की हैसियत से भी आपने उस के १३ दिसम्बर सन् १९०४ के अंक में जैनधर्म पर लिखते हुए अपनी यह सम्मति दी थी:—

"ग्रन्थों तथा सामाजिक व्याख्यानों से जाना जाता है कि जैनधर्म अनादि है, यह विषय निर्विवाद तथा मतभेद रहित

है। सुतरां इस विषय में इतिहास के भी अनेक सुदृढ़ प्रमाण हैं। ईस्वी सन् से ५२६ वर्ष पहिले का तो यह धर्म भली प्रकार सिद्ध है। महावीर स्वामी इस को पुनः प्रकाश में लाये, इस बात को आज २४५१ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। बौद्धधर्म की स्थापना के पहिले जैनधम फैल रहा था, यह बात विश्वास करने योग्य है। चौबीस तीर्थंकरों में महावीर स्वामी अन्तिम तीर्थंकर थे, इस से भी जैनधर्म की प्राचीनता जानी जाती है। बौद्धधर्म पीछे से हुआ, यह बात निश्चित है।"

श्रीयुत कन्नूलाल जी* एम० ए० (The Theosophist) के दिसम्बर सन् १९०४ तथा जनवरी सन् १९०५ के अङ्क में अपनी सम्मति देते हैं:—

"जैनधर्म एक ऐसा प्राचीन धर्म है कि जिसकी उत्पत्ति तथा इतिहास का पता लगाना एक बहुत ही दुर्लभ बात है। इत्यादि।"

श्रीयुत वासुदेव गोविन्द आपटे बी० ए०, इन्दौर निवासी का मत है कि:—

"प्राचीन काल में जैनियों ने उत्कृष्ट पराक्रम वा राज्य भार का परिचालन किया है। उस समय चक्रवर्ती, महामण्डलीक और मण्डलीक आदि बड़े २ पदाधिकारी जैनधर्मी हुए हैं। जैनियों के परमपूज्य चौबीसों तीर्थंकर भी सूर्यवंशी, चन्द्रवंशी

---

* सेशन जज धौलपुर राज्य।

आदि क्षत्रिय कुलोत्पन्न बड़े २ राज्याधिकारी हुए, जिस की साक्षी जैनग्रन्थों तथा अजैन शास्त्रों और ऐतिहासिक ग्रन्थों में मिलती है।

"इस धर्म में अहिंसा का तत्त्व और यतिधर्म अत्यन्त उत्कृष्ट है। हमारे हाथ से जीवहिंसा न होने पावे, इस के लिये जैनी लोग जितने डरते हैं, उतने बौद्ध नहीं डरते। किसी समय जैनधर्म की इस देश में बड़ी उन्नतावस्था थी। धर्मनीति, राजनीति, शास्त्रनीति और समाजोन्नति आदि बातों में वे इतर जनों से बहुत आगे और बढ़े चढ़े थे।"

राय बहादुर बाबू पूर्णेन्दुनारायणसिंहजी एम० ए०, बांकीपुर लिखते हैं:—

"जैनधर्म पढने की मेरी हार्दिक इच्छा है, क्योंकि मैं ख्याल करता हूं कि व्यवहारिक योग्याभ्यास के लिये इसका साहित्य सब से प्राचीन (Oldest) है।"

महामहोपाध्याय पं० गंगानाथ झा एम० ए०, डी० ए० लिट० इलाहाबाद:—"जब से मैंने—शंकराचार्य द्वारा जैनसिद्धान्त पर खंडन को पढ़ा है, तब से मुझे विश्वास हुआ कि इस सिद्धान्त में बहुत कुछ है, जिस को वेदान्त के आचार्य ने नहीं समझा। मैं अब तक जितना कुछ भी जैनधर्म को जान सका हूं उस से मेरा यह विश्वास दृढ़ हुआ है कि यदि वह जैनधर्म को उसके असली ग्रन्थों से देखने का कष्ट उठाते, तो उन को जैनधर्म के विरोध करने की कोई बात नहीं मिलती।"

श्रीयुत अम्बुजाक्ष सरकार एम० ए०, बी० एल० की सम्मतिः—

"यह अच्छी तरह साबित हो गया है कि जैनधर्म बौद्ध धर्म की शाखा नहीं है। महावीर स्वामी जैनधर्म के स्थापक नहीं हैं, उन्होंने केवल प्राचीन धर्म का प्रचार किया है।"

राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद ने अपने निर्माण किये हुए "भूगोल हस्तामलक" में लिखा है.—

"दो ढाई हज़ार वर्ष पहिले दुनिया का अधिकांश भाग जैनधर्म का उपासक था"। एक जगह आप लिखते हैं:—"जैन और बौद्ध एक नहीं हैं, सनातन से ये भिन्न भिन्न चले आरहे हैं। जर्मन देश के एक बड़े विद्वान् ने इस के प्रमाण में एक ग्रन्थ छापा है।"

अनेक धर्मों के ज्ञाता साहित्यरत्न श्री० लाला कन्नोमलजी एम० ए० सेशन जज धौलपुर ने एक महत्त्वपूर्ण लेख "लाला लाजपतराय जी का भारतवर्ष का इतिहास और जैनधर्म" शीर्षक लेख लाला जी के जैनधर्म पर किये हुए मिथ्या आक्षेपों के उत्तर में लिखा है, जो "जैनपथ-प्रदर्शक" के २२ जुलाई सन् १९२३ के अंक में छपा है, उसमें आप लिखते हैं:-

"सभी लोग जानते हैं कि जैनधर्म के आदि तीर्थंकर श्री ऋषभदेव स्वामी हैं, जिन का काल ऐतिहासिक परिधी से कहीं परे है। इन का वर्णन सनातनधर्मी हिंदुओं के श्री मद्भागवत पुराण में भी है। ऐतिहासिक खोज से

मालूम हुआ है कि जैनधर्म की उत्पत्ति का कोई काल निश्चित नहीं है। प्राचीन से प्राचीन ग्रन्थों में जैनधर्म का हवाला मिलता है।"

"श्री पार्श्वनाथ जी जैनों के तेईसवें तीर्थंकर हैं। इन का समय ईसा से ८०० वर्ष पूर्व का है। पाठक स्वयं विचार सकते हैं कि श्री ऋषभ देवजी का कितना प्राचीन काल होगा। जैन-धर्म सिद्धान्तों की अविच्छिन्न धारा इन्हीं महात्मा के समय से बहती रही है। कोई समय ऐसा नहीं है जिस में इस का अस्तित्व न हो। श्रीमहावीर स्वामी जैनधर्म के अन्तिम तीर्थंकर और प्रचारक थे, न कि उसके आदि संस्थापक और प्रवर्तक।"

"बौद्ध आत्मा व जीव को नहीं मानते। जैन आत्मा के आधार पर सब धार्मिक-सिद्धान्तों की भित्ति रखते हैं। जैन चौबीस तीर्थंकरों को मानते हैं, लेकिन बौद्ध अपने धर्म का निकास महात्मा बुद्ध से ही समझते हैं जो महावीर स्वामी के समकालीन थे। जैनों के दार्शनिक सिद्धान्त बौद्धों के दार्शनिक सिद्धान्तों से नहीं मिलते। जैन साधु और श्रावकों के धर्म कर्म, बौद्ध साधु और और गृहस्थों के धर्म कर्मों से सर्वथा भिन्न हैं। बौद्ध मांसाहारी हैं, किंतु, जैनों में कोई ऐसा नहीं जो मांस खाता हो। इनके आचार विचार शुद्ध हैं, अहिंसा धर्म के सच्चे अनुयायी ये हैं, बौद्ध नहीं।"

यह जैनधर्म की प्राचीनता सिद्ध करने वाली भारत के कतिपय विद्वानों की सम्मतियां मात्र हैं। जो केवल पाठकों की जानकारी के लिये यहां उद्धृत की गई हैं। प्राचीन ऐति-

सिक और शास्त्रसम्मत ग्रन्थों से इस विषय की इतनी नवीन होचुकी है कि अब इस धर्म की प्राचीनता के विषय किसी को किसी प्रकार का सन्देह नहीं रहा है। इस म्बन्ध में अनेक पाश्चात्य विद्वान् भी हमारे धन्यवाद के पात्र जिन की खोज से जैनधर्म की प्राचीनता पर विशेष प्रकाश ड़ा है। यहां उन में से कुछ विद्वानों की सम्मति आदि का रिचय करा देना अनुचित न होगा।

सुप्रसिद्ध यूरोपियन ग्रन्थकार मैक्समिलर (Maxmiller) ाहब ने अपने "आर्टिकल आन आर्यन" नामक ग्रंथ के खण्ड २ (Article on Aryan Vol. II) विस्तार के साथ जैन- र्म की प्राचीनता सिद्ध की है। उस में आप लिखते हैं:—

"It is now quite certain that the Jain co- nmunity was really even older than the time of Buddha and was recognized by his contemporary he Mahavir named Wardhaman and it is also clear that the Jain Views of life were in the most mportant and essential respects the exact reverse of the Buddhist Views. The two orders Jain and Buddhist were not only and from the first inde- pendent, but directly opposed one to the other. In Philosophy the Jains are the most through going supporters of the old animistic position: nearly every thing according to them has a soul within its outward visible shape; not only men

and animals but also all plants and even the particles of earth and of water (when it is cold) and fire and wind. The Buddhist theory as is well known is put together without the hypothesis of soul at all. The word the Jains use for soul is (Jiva) which means life and there is much analogy between many of the expressions they use and the view that the ultimate substances which come into direct contact with the minute souls in every thing and their best known position in regard to the points most discussed in Philosophy is syadvad the doctorine that they may say yes and at the same time no to every thing. You can affirm the certainty of the world for instance from one point of view and at the same time deny it from another or at different times and in different connections you may one day affirm it and another day deny it."

अर्थात् यह बात अब पूर्ण निश्चित होचुकी है कि जैन-समाज वास्तव में बुद्ध के समय से भी पहिले का है और उनके समकालीन महावीर स्वामी जिनका नाम वर्धमान था उनके द्वारा प्रख्यात था। यह भी अच्छी तरह मालूम होता है कि जैनियों के मुख्य और महत्व के विषयों में जैनियों के रहन सहन और विचार बौद्धों के विचारादि से बिल्कुल विपरीत थे। ये दोनों समाज अर्थात जैन और बौद्ध पहिले से केवल स्वतंत्र

ही नहीं वल्कि परस्पर एक दूसरे के विरोधी थे। जैनी केवल मनुष्यों और पशुओं में ही नहीं वल्कि तमाम वनस्पति पृथ्वी जल (जब कि ठंडा रहता है) अग्नि वायु तक में भी जीव मानते हैं। यह वात प्रख्यात है कि वौद्धमत आत्मा (Soul) को विल्कुल नहीं मानते हैं। जैन लोग आत्मा शब्द के वास्ते जीव शब्द का प्रयोग करते हैं जिसका अर्थ प्राणी होता है और उनके वहुत से शब्दों के प्रयोग और उन विचारों में वहुत कुछ सभ्यता है जिन के अनुसार हर एक पदार्थ में सूक्ष्म जीव के साथ पुद्गल का सम्वन्ध होने के कारण अलग अलग अपेक्षा से आस्तिक्त्व और नास्तिक्त्व धर्म एक ही समय में कहा जा सकता है जिस को तत्वज्ञान में स्याद्वाद कहते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार आप हां और ना एकही चीज़ के वास्ते कह सकते हैं। उदाहरणार्थ एक अपेक्षा से पृथ्वी का आस्तिक्त्व सिद्ध कर सकते हैं और दूसरी अपेक्षा से नास्तिक्त्व सिद्ध कर सकते हैं। तथा समय के फेरफार और पृथक् २ सम्वन्ध से एकही वात एक दिन सिद्ध कर सकते हैं और वही वात दूसरे दिन निषेध कर सकते हैं।"

इस ज़वरदस्त प्रमाण से आप स्वयं समझ सकते हैं कि जैनधर्म और वौद्धधर्म क्या हैं? यह तो एक ही प्रमाण है किंतु ऐसे सहस्रों प्रमाण प्रस्तुत हैं जिन से सिद्ध होता है कि जैनधर्म प्राचीन एवम् वौद्ध धर्म से विल्कुल भिन्न है। यथाः—

१. अशोक सम्राट (ईस्वी पूर्व २७५ वर्ष) के दिल्ली के स्तम्भ पर की आठवीं प्रशस्ति में निर्ग्रन्थों (निगन्थ) का उल्लेख आया है। सम्राटने अन्यान्य पन्थों के अनुसार निर्ग्रन्थ

धर्म के लिये भी धर्म महामात्य अर्थात् धर्माध्यक्ष नियुक्त किये थे। जैन, बौद्ध और ब्राह्मण ग्रन्थों से यह सिद्ध होचुका है कि प्राचीन काल में जैन साधु सर्वथा परिग्रह रहित रहने के कारण निर्ग्रन्थ कहलाते थे। यह नाम अब भी जैनियों में प्रचलित है। महाराज अशोक ने इनके लिये धर्माध्यक्ष नियुक्त किये थे। इस से अनुमान किया जासकता है कि निर्ग्रन्थधर्म उनके समय में भी बहुत प्रचलित और प्रबल था। कोई नया निकला धर्म नहीं था। डा० जैकोबी (जर्मनी) ने प्राचीनतम जैन और बौद्ध ग्रन्थों की छान बीन करके यह सिद्ध कर दिया है कि निर्ग्रन्थधर्म बहुत पुराना है। महात्मा बुद्ध के समकालीन श्री महावीर स्वामी जब तप को निकले तब यह धर्म प्रचलित था (१)। सम्राट अशोक ने अपनी प्रशस्तियों में जो अहिंसा, अचौर्य, सत्य, शील आदि गुणों पर ज़ोर दिया है, उससे प्रतीत होता है कि वे स्वयं जैनधर्मावलंबी रहे हों तो आश्चर्य नहीं। प्रोफेसर कर्नल लिखते हैं (२):—

"His (Asoka's) ordinances concerning the sparing of animal-life agree much more closely with the ideas of heretical Jains than those of the Budhists."

अर्थात् 'अहिंसा के विषय में अशोक के जो नियम हैं वे बौद्धों की अपेक्षा जैनियों के सिद्धान्तों से अधिक मिलते

(१) डा० जैकोबी 'सेक्रेड बुक्स आफ़ दी ईस्ट', जिल्द २२ और ४५
(२) इन्डियन एन्टीक्वेरी जिल्द ५ पृष्ठ २०५।

हैं'। जैन ग्रन्थों में इनके जैन होने के प्रमाण मिल
कल्हण कवि की राजतरङ्गिणी में जो संस्कृत स
ग्यारहवीं शताब्दि का एक अद्वितीय ऐतिहासिक
अशोक द्वारा काश्मीर में जैनधर्म के प्रचार किये
वर्णन है (२) और यही बात अबुलफ़ज़ल की 'आइने
भी विदित होती है, जैसा कि आगे चल कर बतला
इनके पितामह महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य जैन थे। य
कोई आश्चर्य नहीं कि अशोक भी जैन रहे हों। कुछ
मत है कि अशोक पहिले जैनधर्म के उपासक थे प
हो गये (३)।

२. पुरी ज़िले में उदयगिरि पर्वत पर हा
नामक गुफ़ा में एक बड़ा बहुमूल्य लेख कलिंग के
बेल का है। इस लेख का पता सन् १८२० ई० में
साहब ने लगाया था और डा० भगवानलाल इन्द्र
का जैनियों से सम्बन्ध सिद्ध किया था, पर इस
और सच्चा मर्म हाल ही में प्रो० काशीप्रसाद जायस
ए० ने समझा है, और उसका विस्तृत विवरण 'वि
उड़ीसा की रिसर्च सोसाइटी के जर्नल' जिल्द ३

---

(१) राजा वली कथा (कनाड़ी)।

(२) यः शान्तवृजिनो राजा प्रपन्नो जिनशासनम्।
शुष्कलेऽत्र वितस्तात्रौ तस्तार स्तूपमण्डले॥

राजतरङ्गिणी अ

(३) अरली फ़ेथ आफ़ अशोक (थामस कृत)

से ४६७ व ४७३ से ५०७ में प्रकाशित किया है। उस लेख का प्रारम्भ इस प्रकार होता है:—

"नमो अरहंतानं, नमो सवसिधानं" इस से स्पष्ट है कि इसका लिखाने वाला निस्सन्देह जैनधर्मावलम्बी था। लेख में सं० १६५ उद्धृत है। प्रश्न उठता है कि यह कौनसा संवत् हो सकता है। प्रो० जायसवाल महाशय ने बड़ी युक्ति से इसे मौर्य सम्वत् सिद्ध किया है जो महाराज चन्द्रगुप्त के राज्यारोहण काल (ई० पू० ३२१ सन्) से चला होगा। कोई पूछे कि एक स्वतन्त्र राजा दूसरे राजा के चलाये हुए संवत् का उपयोग क्यों करने लगा? इसके उत्तर में श्रीयुक्त जायसवाल जी कहते हैं कि इसका कारण राजनैतिक नहीं बल्कि धार्म्मिक रहा होगा। चन्द्रगुप्त मौर्य का जैनग्रन्थों और चन्द्रगिरि के शिला लेखों से जैन होना सिद्ध होता है। अतः एक जैन राजा के चलाये हुए संवत् का दूसरा जैन राजा आदर करे तो इसमें क्या आश्चर्य? यह समाधान बहुत युक्तिसंगत प्रतीत होता है।

इस लेख से सिद्ध होता है कि ई० पूर्व दूसरी शताब्दि में उड़ीसा प्रान्त में जैनधर्म का अच्छा प्रचार था। जायसवाल महाशय लिखते हैं:—

Jainism had already entered Orissa as early as the time of king Nanda who, as I have shown, was Nanda Vardhan of the Sesunaga dynasty. It seems that Jainism had been the National religion

f Orissa for some centuries (J. B. O. R. S, Vol. II. Page 448).

अर्थात् 'जैनधर्म का प्रवेश उड़ीसा में शिशुनागवंशी राजा नन्दवर्धन के समय में हो गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि (खारवेल के समय में) जैनधर्म कई शताब्दियों तक उड़ीसा का राष्ट्रीय धर्म रह चुका था'।

इस लेख की उपयोगिता के विषय में जायसवाल महाशय कहते हैं:-

"This inscription occupies a unique position amongst the materials of Indian History for the centuries preceding the Christian era. In point of age it is the second inscription after Asoka, the first being the Nanaghat inscription of Vedisri. But from the point of view of the chronology of the premauryan times and the History of Jainism it is the most important inscription yet discovered in the Country. It confirms the Puranic record and carries the dynastic chronology to C. 450 B. C. Further, it proves that Janism entered Orissa and probably became the state religion, within 100 years of the death of its founder Mahavira. It affords the earliest historical instance of the Unity of Behar and Orissa (450 B. C.) for the social history of this country we

धर्मप्रेमी दानवीर रायसहाब श्रीमान् सेठ कुन्दनमलजी कोठारी (जेसलमेरी) ऑनरेरि मजिस्ट्रेट ब्यावर

परिचय–पारीशिष्ट प्रकरण ३

get the very important datum that the population of ancient Orissa was 3 ½ Millions in circra 172 B. C."

अर्थात् "ईसा के पूर्व की शताब्दियों के भारतीय इतिहास के साधनों में इस लेख का स्थान बहुत उच्च है। प्राचीनता में अशोक के बाद का यह दूसरा ही लेख है। पहला नानाघाट का वेदिश्री का लेख है। पर, मौर्यकाल से पहिले के इतिहास-क्रम व जैनधर्म के इतिहास के लिये तो यह अब तक देश में जितने लेख मिले हैं, उन सब में अधिक महत्त्व का है। वह पुराणों के लेखों का समर्थन करता है और राजवंश-क्रम को ईस्वी पूर्व ४५० वर्ष तक ले जाता है। उस से यह भी सिद्ध होता है कि उड़ीसा में जैनधर्म बहुत करके निर्वाण सम्वत् १०० के लगभग आया और वहां का राष्ट्रीय धर्म हो गया। वह ई० पू० ४५० में विहार और उड़ीसा के एकत्व का सब से प्राचीन प्रमाण है। सामाजिक इतिहास में उससे हमें सब से भारी बात यह विदित होती है कि १७२ ई० पू० के लगभग उड़ीसा की मनुष्य संख्या ३५ लाख थी।"

(२) मथुरा (यू० पी०) के पास का 'कंकाली टीला' एक बहुत प्राचीन स्थान है। यहां कई बार खुदाई होकर जैन-शिलालेखों और अनेक प्राचीन स्तूपों का पता चला है। सर विन्सेन्ट स्मिथ इनका समय ईसा के पूर्व पहिली शताब्दी से लगाकर ईसा की दूसरी शताब्दी तक मानते हैं (१)। सब से

(1) Jain Stupa and other antiquities of Mathura.

नया लेख वि० सं० ११३४ (ई० सन् १०७७) का है। अतः ये लेख मथुरा में जैनधर्म के लगभग ग्यारह शताब्दियों के ऐतिहासिक तारतम्य का पता देते हैं। इन लेखों में प्राचीनतम लेख से भी यहां का स्तूप कई शताब्दि पुराना है। इस पर फुहरर साहब लिखते हैं:—

The Stupa was so ancient that at the time when the inscription was incised, its origin had been forgotten. On the evidence of the characters, the date of the inscription may be referred with certainty to the Indo scythian era and is equivalent to A. D. 156. The stupa must therefore have been built several centuries before the beginning of the christian era, for the name of its builders would assuredly have been known if it had been erected during the period when the Jains of Mathura carefully kept record of their donations."

(Museum Report 1890-91)

अर्थात् "यह स्तूप इतना प्राचीन है कि इस लेख के लिखे जाने के समय स्तूप आदि का वृत्तान्त लोगों को विस्मरण हो गया था। लिपि के प्रमाण से इस लेख की वर्षें इंडोसिथियन (शक) सम्वत् की प्रतीत होती हैं, जिस से सिद्ध होता है कि यह लेख सन् १५६ के लगभग का है। ऐसी दशा में यह स्पष्ट है कि यह स्तूप ईसा से कई शताब्दियों पहिले निर्मित हुआ होगा। क्योंकि यदि वह उस समय बना होता जब कि मथुरा के जैनी अपने दान आदि के लेख रखने लगे थे तो उस के निर्मापकों का नाम अवश्य ज्ञात हुआ होता।"

मथुरा के लेख तथा अन्य स्मारक जैनियों के इतिहास के लिये बहुत ही उपयोगी हैं। इस विषय पर सर विन्सेन्ट स्मिथ के शब्द उल्लेखनीय हैं। वे कहते हैं:—

"The discoveries have, to a very large extent, supplied corroboration to the written Jain tradition and they offer tangible and incontrovertible proof of the antiquity of the Jain religion, and of its early existence very much in its present form. The series of twenty four pontiffs (Tirthankars) each with his distinctive emblem was evidently firmly believed in, at the beginning of the Cristian era." Further "The inscriptions are replete with information as to the organization of the Jain church in sections known as Gana, Kula and Sakha, and supply excellent illustrations of the Jain books. Both inscription and sculptures give interesting details proving the existence of Jain nuns and influential position in the Jain church occupied by women.*"

अर्थात् "इन खोजों से जैनियों के ग्रंथों के वृत्तान्तों का बहुत अधिकता से समर्थन हुआ है ;और वे जैनधर्म की प्राचीनता व उसके बहुत प्राचीन समय में भी आज ही की

* Jain stupa and other antiquities of Mathura.

भांति प्रचलित होने के प्रत्यक्ष और अकाट्य प्रमाण हैं। सन् ईस्वी के प्रारम्भ में भी चौवीस तीर्थंकर उनके चिन्हों सहित अच्छी तरह से माने जाते थे। बहुत से लेख जैन-सम्प्रदाय के गण, कुल व शाखाओं में विभक्त होने के समाचारों से भरे हैं और वे जैनग्रंथों के अच्छे समर्थक हैं। लेखों और चित्रों से जैन श्राविकाओं की सत्ता व स्त्रियों का जैन-सम्प्रदाय में प्रभावशाली स्थान का अच्छा रुचिकर ब्यौरा मिलता है।"

इनमें के कई लेख व चित्र इत्यादि डा० व्हूलर ने 'एपिग्राफिआ इन्डिका' नामक पत्र की पहली जिल्द में छपवाये हैं।

(४) सन १६१२ में श्रीमान पं० गौरीशङ्कर हीराचन्द जी ओझा ने अजमेर के पास बड़ली नामक ग्राम से एक बहुत प्राचीन जैनलेख का पता लगाया है। लेख है—'वीराय भगवते चतुरासिति वसे का ये जाला मालिनिये रंनिविट माझिमिके'। लेख से ही प्रमाणित है कि वह वीर निर्वाण सं० ८४ (ई० ४४३ वर्ष) में अङ्कित किया गया था। 'माझिमिक' वही प्रसिद्ध पुरानी नगरी 'मध्यमिका' है जिसका उल्लेख पातञ्जलि ने भी अपने 'महाभाष्य' में किया है (१)।

यह भारतवर्ष में लेखन कला के प्रचार का अभी तक सब से प्राचीन उदाहरण माना जाता है। यह लेख ईस्वी पूर्व पांचवीं शताब्दी में राजपूताने में जैनधर्म का अच्छा प्रचार होना सिद्ध करता है।

(५) जैनग्रन्थों में महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य के जैन धर्मावलम्बी होने और भद्रबाहु स्वामी से जिनदीक्षा लेकर उनके

---

(१) "अरुणद् यवनः मध्यमिकाम्"।

साथ दक्षिण को प्रस्थान करने का विवरण है। पर इतिहास लेखक बहुत समय तक इस कथन की सत्यता में विश्वास करने को तैयार नहीं हुए। जब मैसूर राज्य में 'श्रवण बेलगुल' के चन्द्रगिरि पर्वत पर के लेखों का पता चला और उन की शोध की गई, तब इतिहासज्ञों को मानना पड़ा कि निस्सन्देह जैन समाचार इस विषय में बिलकुल सत्य हैं। वहां का सब से प्राचीन लेख, जो भद्रबाहु शिला-लेख के नाम से प्रसिद्ध है, ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में लिखा गया प्रमाणित किया जाता है*। इस लेख में यह समाचार है कि परमर्षि गौतम गणधर की शिष्य परम्परा में—भद्रबाहु स्वामी हुए। उन श्रुतकेवली महात्मा ने अष्टांग निमित्त-ज्ञान से जाना कि उत्तरापथ (उत्तर भारत) में एक भीषण दुष्काल द्वादश वर्ष के लिये पड़ने वाला है। अतः उन्होंने अपने 'साधुओं' को लेकर दक्षिणा-पथ को गमन किया। बीच में अपनी आयु का अल्प भाग शेष रहा जान उन्होंने साधुओं को तो आगे बढ़ने के लिये प्रस्थानित किया और आप स्वयं केवल अपने एक शिष्य प्रभाचन्द्र के साथ 'कटवप्र' नामक पहाड़ी पर ठहर गये और वहीं संन्यास विधि से देहोत्सर्ग किया। वहां के अन्य बहुत से लेखों से सिद्ध होता है कि चन्द्रगुप्त मौर्य का ही दीक्षा नाम प्रभाचन्द्र आचार्य्य था। (१) लेख से कुछ दूरी पर एक गुफा है जो भद्रबाहु की गुफा कहलाती है।

(*) Inscriptions at Sravana Belgula by lews Rice Ins. No 1. व जैन सिद्धान्त भास्कर किरण १ पृष्ठ १५।

(1) 'Incription at Srvana Belgula' (by Lewis Rice.)

कहा जाता है कि भद्रबाहु स्वामी का समाधि-मरण वहीं पर हुआ था (१)। मि० टामस लिखते हैं:—

"That Chandragupta was a member of the Jain community, is taken by their writers as a matter of course, and treated as a known fact which needed neither argument nor demonstration The documentry evidence to this effect is of comparatively early date and apparently obsolved from suspicion......The testimony of Megasthenes would likewise seem to imply that Chandragupta submitted to the devotional-teachings of the Sramanas as opposed to the doctrines of the Brahmans" (2)

अर्थात् "चन्द्रगुप्त जैनसमाज के व्यक्ति थे" यह जैन ग्रंथकारों ने एक ऐसी स्वयं-सिद्धि और सर्व प्रसिद्ध बात के रूप में लिखा है जिसके लिये उन्हें कोई अनुमान प्रमाण देने की आवश्यकता प्रतीत न हुई। इस विषय में लेखों के प्रमाण बहुत प्राचीन और साधारणतः सन्देह रहित हैं। मेगस्थनीज़ के लेखों से भी झलकता है कि चन्द्रगुप्त ने ब्राह्मणों के सिद्धान्तों के विपक्ष में श्रमणों (जैन मुनियों) के धर्मोपदेशों को अंगीकार किया था।

(1) 'Mysore Inscription' by Lews Rice.
(2) 'Jainism or early faith of Asoka' Page 23.

चन्द्रगुप्त के जैन होने के इतने अकाट्य प्रमाण मिलने पर प्रसिद्ध इतिहासकार "सर विन्सेन्ट स्मिथ" को अपनी "भारत के प्राचीन इतिहास" की बहुमूल्य पुस्तक के तीसरे संस्करण में यह लिखना ही पड़ा कि:—

"I am now disposed to believe that the tradition probably is true in its main outline and that Chandra gupta realy abdicated and became a Jain ascetic."*

अर्थात् "मुझे अब विश्वास हो चला है। कि जैनियों के कथन बहुत करके मुख्य २ बातों में यथार्थ हैं और चन्द्रगुप्त सचमुच राज्य त्याग कर जैन मुनि हुए थे।" जायसवाल महोदय समस्त उपलब्ध साधनों पर से अपना मत स्थिर कर लिखते हैं—

"The Jain books (5th cent A. D.) and later Jain inscription claim Chandragupta as a Jain imperial ascetic my studies have compelled me to respect the historical date of the Jain writings, and I see no reason why we should not accept the Jain claim that Chandragupta at the end of his reign accepted Jainism and abdicated and died as a Jain ascetic. I am not the first to accept the View Mr. Rice who has studied the Jain inscription of Sravana Belgula thoroughly gave Verdict in favour of it and Mr. V. Smith has also leaned towards it ultimately."1

---

* V. Smith E. H. I. Page 146.

1 J. B. O. R. S. Vol 111

अर्थात् "ईसा की पांचवीं शताब्दि तक के प्राचीन जैन-ग्रंथ व पीछे के जैन-शिलालेख चन्द्रगुप्त को जैन-राजमुनि प्रमाणित करते हैं। मेरे अध्ययनों ने मुझे जैनग्रंथों के ऐतिहासिक वृत्तान्तों का आदर करने के लिये बाध्य किया है। कोई कारण नहीं है कि हम जैनियों के इस कथन को कि चन्द्रगुप्त अपने राज्य के अन्तिम भाग में जैनी हो गया था और पीछे राज्य छोड़कर जिनदीक्षा ले मुनिवृत्ति से मृत्यु को प्राप्त हुआ, न मानें। मैं पहिला ही व्यक्ति यह मानने वाला नहीं हूं। मि० राइस ने, जिन्होंने श्रवण बेलगोला के शिलालेखों का अध्ययन किया है, पूर्णरूप से अपनी राय इसी के पक्ष में दी है और मि० व्ही० स्मिथ भी अन्त में इस मत की ओर झुके हैं।"

जैनियों की खोज के सम्बन्ध में मिस्टर विन्सेन्ट स्मिथ साहब के विचार ध्यान देने योग्य हैं:—

"The field for exploration is vast. At the present day the adherents of the Jain religion are mostly to be found in Rajputana and Western India. But it was not always so. In olden days the creed of Mahavira was far more widely diffused than it is now. In the 7th century A. D. for instance, that creed had numerous followers in Vaisali (Basenti north of Patna) and in Eastern Bengal, localities where its adherents are now extremely few. I have myself seen abundant

evidences of the former prevalence of Jainism in Bundelkhand during the mediaeval period especially in the 11th and the 12th centuries. Further South, in the Deccan, and the Tamil countries, Jainism was for centries a great and ruling power in regions where it is now almost unknown."

अर्थात् "खोज का क्षेत्र बहुत विस्तीर्ण है। आजकल जैनधर्म के पालने वाले बहुतायत से राजपूताना और पश्चिम भारत में ही पाये जाते हैं, पर सदैव ऐसा नहीं था। प्राचीन समय में यह महावीर का धर्म आजकल की अपेक्षा कहीं बहुत अधिक फैला हुआ था। उदाहरणार्थ, ईसा की ७ वीं शताब्दी में इस धर्म के अनुयायी वैशाली और पूर्व बंगाल में बहुत संख्या में थे, पर वहां आज बहुत ही कम जैनी हैं। मैंने स्वयं बुन्देलखण्ड में वहां ११वीं और १२वीं शताब्दि के लगभग जैनधर्म के प्रचार के बहुत से चिन्ह पाये। दक्षिण में आगे को बढ़िये तो जिन तामिल और द्राविड़ देशों में शताब्दियों तक जैनधर्म का शासन रहा है, वहां वह अब अज्ञात ही सा हो गया है।"

ऊपर कतिपय देशी और विदेशी विद्वानों की सम्मति तथा केवल उन मुख्य २ प्राचीनतम लेखों का संक्षिप्त परिचय है जिन ने जैन इतिहास और उस की प्राचीनता पर विशेष प्रकाश डाल कर उसके अध्ययन में एक नये युग का आरम्भ कर दिया है। इन के अतिरिक्त विविध स्थानों में भिन्न २

समय के सैकड़ों नहीं सहस्रों जैनलेख तथा अन्य जैन-स्मारक ऐसे मिले हैं जिन से प्राचीन काल में जैनधर्म के प्रभाव व प्रचार का पता चलता है। वे सिद्ध कर रहे हैं कि जैनधर्म का भूतकाल जगमगाता हुआ रहा है, वह बहुत समय तक राजधर्म रह चुका है। इस की ज्योति क्षत्रियों ने प्रभावान् बनाई थी और क्षत्रियों द्वारा ही इसकी पुष्टि और प्रसिद्धि हुई थी। मगध के शिशु नागवंशी व मौर्य्यवंशी नरेशों, उड़ीसा के महाराज, खारवेल के अतिरिक्त दक्षिण के कदम्ब, चालुक्य, राष्ट्रकूट, रट्ट, पल्लव, सन्तार आदि अनेक प्राचीन राजवंशों द्वारा इस धर्म की उन्नति और ख्याति हुई, ऐसा लेखों से सिद्ध हो चुका है।

जैनधर्म की प्राचीनता के विषय में उपर्युक्त विद्वानों के अतिरिक्त पाश्चात्य विद्वानों में विलसन साहब*, पुराणविद् वेलफ़ाई साहब × तथा डाक्टर जोन्स जार्ज व्हूलर + और मि० कोलब्रुक ÷ एवम् टामस आदि के भी भिन्न २ मत हैं। सब के मत युक्तियुक्त हैं, किंतु सब से उत्कृष्ट मत जनरल जे० आर० फ़ारलंग का है, वे कहते हैं कि ईसा से पूर्व के १५,०० से ८००वर्ष तक बल्कि अज्ञात समय से पश्चिमीय और उत्तरीय भारत में तूरानियों का जो द्राविड़ भी कहलाते थे और वृक्ष, सर्प तथा लिंग की पूजा किया करते थे, शासन सर्वोपरि था। उस

(*) Wilson's:—Mackenzie collection. and "Sanskrit Dictionary", 1sted, Page XXXIV.

× And Atles Indian, Page 160.

+ The Jains Page 22-23

:- Miscellanous Essays, Vol. 1, Page 380.

समय भारतवर्ष में एक प्राचीन—सभ्य, दार्शनिक और विशेषता से नैतिक सदाचार एवम् कठिन तपस्या वाला धर्म अर्थात् जैनधर्म विद्यमान् था, जिस में से स्पष्टतया ब्राह्मण और बौद्धधर्म के प्रारम्भिक संन्यास भावों की उत्पत्ति हुई। आर्यों के गंगा या सरस्वती तक पहुँचने से भी बहुत समय पहिले जैन अपने २२ सन्तों अथवा तीर्थंकरों द्वारा जो ईसा से पूर्व की ८ वीं वा ६ वीं शताब्दि के ऐतिहासिक २३ वें तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ से पहिले हुए थे, शिक्षा पा चुके थे और श्री पार्श्वनाथ अपने से पहिले सब तीर्थङ्करों से जो दीर्घ २ कालान्तर से हुए थे, जानकारी रखते थे। उनको बहुत से ऐसे ग्रन्थ याद थे जो उस समय भी 'पूर्वी या पुराणों' अर्थात् प्राचीन के तौर पर प्रसिद्ध थे और जो युगांतरों से विख्यात एवम् वानप्रस्थों द्वारा कण्ठस्थ चले आते थे। यह विशेषतया एक जैन-सम्प्रदाय था, जिस को उनके समस्त तीर्थङ्करों और विशेष कर ईसा के पूर्व की छठी शताब्दि के २४ वें तीर्थङ्कर महावीर ने, जो सन् ५९८—५२६ ईसा के पूर्व हुए हैं, नियमबद्ध रक्खा था। यह मत दूरस्थ बाकट्रिया (Baktria) और डेसिया (Decia) में जारी रहा, जैसा कि हम अपनी Study No 1. और Sacred Books of the East, Vol XXII और XLV में कर चुके हैं। (१)

हम को जहां तक प्रमाण मिले हैं, उन पर से हम जैन-धर्म को आधुनिक नहीं कह सकते। विष्णु पुराण आदि कई पुराणों में जैनधर्म का उल्लेख है। जैनों के बहुत से

(1) Short studies in the Science of comparative religions Page 243-244.

ग्रंथोंके पढ़ने से मालूम हुआ है कि, शकराज के ६०५ वर्ष पहले (अर्थात् ईसा से ५२७ वर्ष पहिले) अन्तिम तीर्थङ्कर श्री महावीर स्वामी अर्थात् वर्द्धमान को निर्माण की प्राप्ति हुई थी।

हमारे विवेचन में यही आता है कि, जिस समय शाक्य बुद्ध ने जन्म भी नहीं लिया था, उस से भी बहुत पहिले जैनधर्म प्रचलित था। प्राचीनतम जैनश्रुत में बौद्ध वा बुद्ध-देव का प्रसंग नहीं है, किंतु, ललितविस्तर आदि प्राचीनतम बौद्ध ग्रंथों में 'निर्ग्रन्थ' नाम से जैनियों का उल्लेख मिलता है।

बौद्ध और जैनधर्म के किसी २ विषय में सौसादृश्य होने के कारण जैनधर्म को परिवर्ती नहीं कहा जा सकता। सादृश्य रहने से ही यदि परिवर्ती हो, तो इस युक्ति से बौद्ध-धर्म भी परिवर्ती सिद्ध होता है। अतः उपर्युक्त प्रमाणों से यही प्रमाणित होता है कि जैनधर्म, बौद्धधर्म से पहिले का है।

जैनग्रन्थों में प्रायः ऐसा वर्णन देखने में आता है कि जैनधर्म अनादि है और उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी काल के तृतीय, चतुर्थ कालों में २४ तीर्थङ्करों का आविर्भाव होकर धर्म का प्रकाश हुआ करता है। जैनधर्म का मत है कि, सृष्टि अनादि है, इस का कोई कर्त्ता—हर्त्ता नहीं है। जो कुछ परिवर्तन इस में होते हैं, वे स्वतः काल द्रव्य के प्रभाव से हुआ करते हैं। जैनमतानुसार जम्बूद्वीप के मध्य भरतक्षेत्र और ऐरावत क्षेत्र में उन्नति और अवनतिरूप काल परिवर्तन हुआ करता है। ऐरावत क्षेत्र की बात जाने दीजिये क्योंकि उस से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है, वहां भरतक्षेत्र के समान ही तीर्थ-ङ्कर आदि का आविर्भाव हुआ करता है; अन्यान्य सभी विषय

भरतक्षेत्र के समान हैं। उन्नतिरूप काल को उत्सर्पिणी और अवनतिरूप काल को अवसर्पिणी कहते हैं। इन दोनों कालों की स्थिति १०।१० कोड़ा कोड़ी सागर * परिमित है। २० कोड़ा कोड़ी सागर परिमित काल को कालचक्र कहते हैं।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है जैनी लोग सृष्टिकर्ता ईश्वर को नहीं मानते, "जिन" वा "अर्हंत" ही को वे ईश्वर मानते हैं, उन्हीं की स्तुति करते हैं। कई लोगों की सम्मति में महावीर स्वामी ही जैनधर्म के संस्थापक माने जाते हैं। किंतु, जैन विद्वानों के कथन के अनुसार ऐसा नहीं है। महावीर स्वामी से पहिले इसी अवसर्पिणी काल में २३ तीर्थङ्कर और होचुके हैं। जिन्होंने समय २ पर इस जगती तल पर अवतीर्ण होकर संसार के निर्वाण और साधुओं की रक्षा के लिये सत्यधर्म का या यों कहिये कि युगधर्म का प्रचार किया था। हम आगे चल कर उन सब तीर्थङ्करों के नाम उद्धृत करेंगे और एक मानचित्र द्वारा उन का परिचय भी देंगे। सब से प्रथम तीर्थङ्कर का नाम "ऋषभदेव" था ये कब हुए, यह बताना कठिन है। पर, हां; जैनग्रन्थों के

---

* चार कोस गहरे और चार कोस चौंड़े एक कुए में ७ दिन के नवजात शिशु के बाल शिखरबन्द भरे जायं जो उस अंजन की भांति बारीक हों जिसका नेत्रों में अंजन करने से पीड़ा नहीं होती, फिर एक सौ वर्ष बीतने पर उस में से एक छोटे से छोटा अंश निकाला जाय। इस प्रकार यह सारा कुआ खाली होने में जितना समय लगता है उसे एकपल्य कहते हैं। ऐसे १० कोड़ा कोड़ी कुए खाली होने में जितना समय लगे उस को एक सागर कहते हैं।

अनुसार यह कहा जासकता है कि वे करोड़ों वर्ष जीवित रहे, इनकी कथा भागवत, आदि पुराणों में भी यत्र तत्र आई है जैनग्रन्थों के अनुसार ऋषभदेव के पश्चात् के तीर्थङ्करों का जीवन-काल क्रमशः घटता जाता है, यहां तक कि तेईसवें तीर्थंकर "पार्श्वनाथ" का जीवन काल केवल एक सौ वर्ष ही माना गया है। ऐसा भी कहा जाता है कि पार्श्वनाथ महावीर स्वामी के केवल दो सौ पचास वर्ष पहिले निर्वाण पद को प्राप्त हुए। महावीर स्वामी २४ वें तीर्थङ्कर थे जिनका संक्षिप्त चरित्र जैन-ग्रंथों के आधार पर इस प्रकार है:—

प्राचीन विदेह राजवंश की राजधानी वैशाली (प्राचीन वैशाली आजकल के मुज़फ्फ़रपुर जिले में "वसाढ़" और "वखीरा" नाम के ग्राम हैं) ईसा के पांच सौ वर्ष पहिले भारतवर्ष का एक अत्यन्त समृद्धशाली नगर था। इस नगर में एक प्रकार का प्रजा--सत्तात्मक राज्य था। इस प्रजा-तन्त्र राज्य के परिचालक "लिच्छवि" लोग थे, जो 'राजा' कहलाते थे। वैशाली के वाहर पास ही "कुण्डग्राम" (वर्तमान वसुकुन्ड नाम का ग्राम) था, वहां सिद्धार्थ नामक एक धनाढ्य और उच्च वंशोद्भव एक क्षत्रिय रहता था। वह "ज्ञातृक" नाम के क्षत्रियों का नायक था। उसकी रानी का नाम "त्रिशला" था। वह त्रिशला वैशाली के राजा चेटक की वहिन थी। राजा चेटक की पुत्री का विवाह मगध देश के राजा विम्बिसार से हुआ था। इस तरह सिद्धार्थ का घनिष्ठ संवन्ध मगध देश के राज घराने से भी था। सिद्धार्थ के एक कन्या और दो पुत्र हुए, जिनमें से छोटे पुत्र का नाम "वर्धमान" था। भविष्य में यही बर्धमान "महावीर" के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

वर्द्धमान के जन्म लेने पर राजा सिद्धार्थ के यहां बड़ा उत्सव मनाया गया। बड़े होने पर यथा समय जब उन्हें विद्याध्ययन के लिए पाठशाला में भेजा गया और अध्यापकजी ने स्वर व्यञ्जन शुरू कराते हुए पट्टी पर "क" लिख कर दिया तो इन्होंने "क" के साथ २ आगे के "ज्ञ" तक के सब व्यञ्जन लिख दिये। अध्यापक ने यह समझ कर कि कदाचित् इन्हें स्वर व्यञ्जन घर पर माता ने ही सिखा दिये हैं—१, २, ३, ४ आदि १० तक गिनती लिख कर उसे याद करने को दी। वर्द्धमान ने स्वतः ही सारी एकावली और साथ पहाड़े भी लिख दिये। इसके पश्चात् इन्द्रदेव आये और बोले कि:— "इन्हें क्या सिखाते हो, और क्या ज्ञान देते हो, ये तो स्वयं ज्ञाता हैं।" अस्तु।

समय होने पर यशोदा नामक एक राजकुमारी से उन का विवाह सम्बन्ध हुआ। इस विवाह से वर्द्धमान को एक कन्या उत्पन्न हुई, जो बाद को जमालि से विवाही गई। जब वर्द्धमान "जिन" वा "अर्हत" की पदवी प्राप्त करके अपने धर्म के उत्तेजक बने, तब जमालि अपने श्वसुर का शिष्य हो गया। उसी के कारण, बाद को जैन-धर्म में पहिली बार मतभेद खड़ा हुआ। वर्द्धमान ने अपने माता पिता की मृत्यु के बाद अपने ज्येष्ठ भ्राता नन्दिवर्द्धन की आज्ञा लेकर तीसवें वर्ष घर द्वार छोड़ कर, संसार से परित्राण प्राप्त करने के लिये भिक्षुओं का जीवन ग्रहण किया। भिक्षु–सम्प्रदाय को ग्रहण करने के बाद वर्द्धमान ने बड़ी ही उत्कट तपस्या करनी आरम्भ की, यहां तक कि तेरह महीने तक लगातार उन्होंने अपना वस्त्र

भी नहीं बदला। उस तपस्या के प्रभाव से वर्द्धमान के जीवन में केवल यही परिणति नहीं थी, वरन् उन का विश्व-बन्धुत्व-भाव भी इतना वर्द्धमान होगया कि सब प्रकार के कीड़े मकोड़े भी स्वच्छन्द होकर उनके बदन पर रेंगने लगे। इस के बाद वे स्पन्दन रहित होकर विचरण करने लगे। लगातार ध्यान करने, निरन्तर पवित्र जीवन बिताने और खान पान सम्बन्धी कठिन से कठिन नियमों का पालन करने से उन्होंने अपनी इन्द्रियों पर पूर्ण विजय प्राप्त कर ली— वे गोसाईं बन गये, जितेन्द्रिय होगये! वे बिना किसी भय के बीहड़ वनों में रहते थे और यदा कदा एक स्थान से दूसरे स्थान को विचरा करते थे। कभी २ उन पर बड़े २ अत्याचार भी किये गये, जैसा कि प्रायः संसार के हर एक और हर समय के महापुरुष पर किये जाते हैं, परन्तु उनका अपनी इन्द्रियों पर इतना आधिपत्य होगया था, कि हर प्रकार की बदला लेने की शक्ति रखते हुए भी उन्होंने धैर्य्य और शांति को कभी भी अपने हृदय-प्रदेश से न जाने दिया। और न कभी अपने ऊपर अत्याचार करने वालों से किसी प्रकार का द्वेष ही किया।

एक बार जब वे राज-गृह के पास नालन्द में थे, तब गोशाल मंखलि पुत्र के नाम से उन का साक्षात्कार हुआ। इस के बाद कुछ वर्षों तक उसके साथ महावीर स्वामी का बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। छः वर्ष दोनों एक साथ रहते हुए बड़ी कठोर तपस्या करते रहे। पर इसके बाद अभिमान के आवेश में अनबन करके गोशाल, महावीर स्वामी से अलग होगया। अलग होकर उसने अपना एक भिन्न सम्प्रदाय

श्री संघके अग्रगण्य धर्मप्रेमी और उत्साही श्रीमान् सेठ
उदयचंदजी बोहरा रतलाम

परिचय—प्रकरण ३१

स्थापित किया और यह कहना प्रारम्भ किया कि "मैंनेतीर्थङ्कर या अर्हत् का पद प्राप्त कर लिया है। महावीर स्वामी के तीर्थङ्कर होनेके दो वर्ष पूर्व ही गोसालाने तीर्थङ्कर होनेका अपना दावा संसार के सामने पेश कर दिया। गोसाला का स्थापित किया हुआ सम्प्रदाय "आजीविका" सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध है गोसाला के सिद्धान्तों और विचारों के सम्बन्ध में केवल जैन और बौद्ध ग्रन्थों ही से पता लगता है। गोसाला या उसके अनुयायी (आजीविक लोग) अपने सिद्धान्तों और विचारों के सम्बन्ध में कोई ग्रन्थ नहीं छोड़ गये हैं। जैन-ग्रन्थों में गोसाला के विषय में बड़े ही कठिन शब्दोंका व्यवहार किया गया है। इससे पाठक जान सकेंगे कि जैनियों और आजीविकों में बहुत गहरा मत-भेद था और मत-भेद के कारण स्वामी महावीर के प्रभाव को प्रारम्भ में बड़ा धक्का पहुंचा। गोसाला का प्रधान स्थान श्रावस्ती में एक कुम्हार की दुकान थी। यह दुकान हालहला नाम की स्त्री के अधिकार में थी। ऐसा मालूम पड़ता है कि गोसाला ने श्रावस्ती में बड़ी प्रसिद्धता प्राप्त कर ली थी।

बारह वर्ष तक कठोर तपस्या करने के बाद तेरहवें वर्ष महावीर स्वामी ने उस सर्वोच्च ज्ञान व कैवल्य-पद को प्राप्त किया जो संसार जन्य दुःख और सुख के बन्धन से पूर्ण मोक्ष प्रदान करता है और जो पद अनिर्वचनीय आनन्द और "वसुधैव कुटुम्बकम्" भाव से सदा परिपूरित या लवालब रहता है। बस इसी समय से महावीर स्वामी 'जिन' या अर्हन् कहलाने लगे। इस समय उनकी आयु बयालीस वर्ष की थी तभी से उन्होंने अपने धर्म का प्रचार प्रारम्भ किया। आजकल उसी 'निर्ग्रन्थ' (बन्धन रहित) शब्द के स्थान पर 'जैन' (जिन

के शिष्य) शब्द का व्यवहार होता है महावीर स्वामी स्वयम् 'निर्ग्रन्थ' भिक्षु और 'ज्ञातृ' वंश के थे। इस से उनके विरोधी बौद्ध लोग उन्हें 'निर्ग्रन्थ' ज्ञातृ-पुत्र' कहते थे। महावीर स्वामी ने अपने धर्म का प्रचार करते २ और दूसरे धर्म वालों को अपने धर्म में लाते हुए तीस वर्ष तक चारों ओर पर्यटन किया विशेष करके वे मगध और अंग के राज्यों में अर्थात् उत्तरी और दक्षिणी बिहार प्रान्त में घूमते हुए वहां के सम्पूर्ण बड़े २ नगरों में गये। वे अधिकतर चम्पा, मिथिला, श्रावस्ती, वैशाली और राज-गृह में रहते थे। मगध के राजा बिंबसार और अजातशत्रु (कूणिक) भी उनके परम भक्त शिष्य थे। जैन ग्रन्थों से पता लगता है कि महावीर स्वामी ने मगध के उच्च से उच्च समाज में बहुसंख्यक लोगों को अपने धर्म का अनुयायी बनाया था।

महावीरस्वामी का निर्वाण—महावीरस्वामी का देहावसान, पटना ज़िले के पावापुर नामक एक प्राचीन नगर में राजा हस्ती पाल के भवन में हुआ था जैन ग्रन्थों के अनुसार महावीर-स्वामी का निर्वाण, काल विक्रमीय संवत् के चारसौ सत्तर वर्ष पूर्व अर्थात् ईसा के ५२७ वर्ष पूर्व माना जाता है डाक्टर हर्मन जेकोबी महाशय का कथन है कि भगवान् महावीर का निर्वाण काल ५२७ वर्ष मानने में भगवान् महावीर और बुद्ध समकालीन नहीं हो सकते और उनके काल में पचास वर्ष का अन्तर पड़ जाता है मगर हम इस स्थान पर सिद्ध कर दिखाते हैं कि इतना अन्तर पड़ने पर भी भगवान् महावीर और बुद्ध दोनों समकालीन हो सकते हैं इतना अवश्य है कि उनकी समकालीनता का समय अल्प सिद्ध होगा हम भगवान् महावीर का

निर्वाण ५२७ पूर्व मानते हैं और इससे यह स्पष्ट ही है कि उनका जन्म ५९९ ईस्वी पूर्व में हुआ था इधर बुद्ध का निर्वाण यदि हम ४८७ ईस्वी पूर्व मानते हैं तो निश्चय है कि उनका जन्म५६७ ईस्वी पूर्व में हुआ होगा बुद्ध ग्रन्थों से यह भी स्पष्ट मालूम होता है कि बुद्ध ने उन्तालीस वर्ष की अवस्था में उपदेश देना प्रारम्भ किया था। इस हिसाब से यदि हम देखें तो भी बुद्ध क़रीब एक वर्ष तक भगवान् महावीर के समकालीन रहे थे।

उपरोक्त विवेचन से यही मतलब निकलता है कि भगवान् महावीर का काल बहुत कुछ सोचने पर भी यही ठहरता है कि जो उनका प्रचलित संवत् कहता है और इस विषय का खुलासा काफ़ी तौर पर अनेक ग्रन्थों में हो चुका है इस लिये इस जगह हम विशेष तौर पर न लिख कर यहीं समाप्त करना उचित समझते हैं।

महावीर स्वामी के पीछे जैन धर्म की रक्षा—महावीर स्वामी के पीछे ग्यारह अङ्ग और चौदह पूर्वों का ज्ञान संवत् २१२ विक्रमीय अर्थात् ईस्वी सन १५६ वर्ष पर्यन्त प्रचलित रहा कहते हैं, कि महावीर के पीछे ६२ वर्ष पर्यन्त गौतम (इन्द्रभूति) सुधर्म और जम्बू नामक तीन केवलियों ने जैनधर्म को सुरक्षित रक्खा। अनन्तर, ईसा से ३५१ वर्ष पूर्व पर्यन्त भद्रबाहु आदि पांच श्रुति केवलियों ने इस धर्म के तत्वों की संरक्षा की। उसके बाद ५२१ वर्ष अर्थात् ईस्वी सन २७० तक दश पूर्वियों, ग्यारह अङ्गियों, चतुरङ्गियों और एकाङ्गियों ने जैन धर्म को अबाधित रखा।

महावीर के ४७० वर्ष बाद विक्रमादित्य ने अपना संवत् चलाया जिसे १९८१ वर्ष हो गये, इससे सिद्ध होता है कि आज से ४७०+१९८१=२४५१ वर्ष पहिले तो भूत भविष्य और वर्तमान के जानने वाले-सब संशयों के दूर करने वाले पुरुष संसार में प्रत्यक्ष मौजूद थे और किसी को कर्म-सिद्धान्त दया भाव और जैन धर्म पर शंका करने का कोई कारण ही नहीं था।

कहा जाता है कि एक बार शकेन्द्र महावीर देव की वन्दना करने को आया था उसने पूछा कि "भगवन् ! आपके जन्म नक्षत्र में तीसरा भस्म ग्रह २००० वर्ष की स्थिति का बैठा है यह क्या सूचना देता है"? भगवान् ने उत्तर दिया कि "२००० वर्ष तक श्रमण-निर्ग्रंथ-साधु साध्वी-श्रावक, श्राविका की उदय पूजा नहीं होगी। इस भस्मग्रह के उतर जाने के बाद फिर धर्म चमक उठेगा और पूज्य पुरुषों का आदर सत्कार होगा।"

श्रीमहावीर के बड़े शिष्य गौतम ऋषि को कार्तिक शुक्ला १ के दिन प्रभात समय में केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई और वे १२ वर्ष तक तप करके कर्मों का नाश करते हुए मोक्ष धाम को गये।

(१) श्रीगौतम को जिस दिन केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई उस दिन श्रीमहावीर के पाट पर पांचवें गणधर सुधर्म-

स्वामी का बिठाये गये। ये सुधर्म स्वामी कोलक गांव क वैश्यायन गोत्री थे। ये ५० वर्ष गृहस्थाश्रम में रहे, ३० वर्ष भगवान् की सेवा में रहे, १२ वर्ष तक गुप्त-रीति से आचार्य पद पर रहे और फिर केवल ज्ञानी हो ८ वर्ष के बाद (महावीर के २० वर्ष बाद) मोक्ष-धाम को गये।

(२) इनके बाद जम्बू स्वामी पाट पर विराजे इनका जन्म राजगृह नगर के काश्यप गोत्री ऋषभदत्त सेठ की धर्मपत्नी धारिणी की कूख से हुआ था। १६ वर्ष तक गृहस्थाश्रम चलाया, बाद ८ स्त्री निन्नानवे करोड़ का माल मत्ता छोड़ ५२७ मनुष्यों के साथ दीक्षा ली। और ८० वर्ष की अवस्था में मोक्ष को पधारे। श्रीमहावीर स्वामी के मोक्ष को जाने के बाद १२ वर्ष तक गौतम स्वामी ८ वर्ष तक सुधर्म स्वामी और ४४ वर्ष तक जम्बू स्वामी केवली के पद से सुशोभित रहे। इन के बाद कोई केवली उत्पन्न नहीं हुआ—अर्थात् केवल ज्ञान का विच्छेद हुआ।

जम्बू स्वामी के मोक्ष-गमन के समय (विक्रम से ४०६ वर्ष पहिले) दस बोल का विच्छेद हुआ। (१) मनः पर्यव ज्ञान (२) परमावधि ज्ञान (३) पुलाक लब्धि (४) आहारिक शरीर (५) कैवल्य (६) क्षायक सम्यक्त्व (७) जिन कल्पी साधु (८) परिहार विशुद्ध चारित्र (९) सूक्ष्म संपराय चारित्र और (१०) यथाख्यात चारित्र ये दस बोल जाते रहे।

(३) जम्बू स्वामी के बाद प्रभव स्वामी हुए। ये वीर संवत् ७६ में देव लोक को गये फिर (४) स्वयम्भव स्वामी ९८ वें में यशोभद्र स्वामी १४८ में और (६) संभूति विजय १५६ वें वर्ष में देवलोक हुए। इन के बादः—

(७) भद्रबाहु १७० वें वर्ष में
(८) स्थूलीभद्र २१५ ,,
(६) महागिरी स्वामी २४६ ,,
(१०) सुहस्ती स्वामी २६५ ,,
(११) सुप्रति बुद्ध ३१६ ,,
(१२) इन्द्र दीन
(१३) आर्यदीन
(१४) वयर स्वामी ३१३—५८४
(१५) व्रजसेन स्वामी ६२० ,,

में देवलोक गये। अब इनमें से १४ वें तक का संक्षिप्त परिचय यहां पर देते हैं:—

(३) प्रभव स्वामी:—विन्ध्य पर्वत के पास जयपुर नाम नगर के राजा विन्ध्य के ये बेटे थे। राजा के साथ विरोध हो जाने से ये बाहर निकले थे, इनका गोत्र कात्यायन था। ३० वर्ष तक गृह वास कर इस वीर ने दीक्षा ग्रहण की थी। वीर के ७५ वें वर्ष में इसने अपना १०५ वर्ष का आयु पूर्ण किया (विक्रम के ३९५ वर्ष पहिले)

(४) स्वयम्भव स्वामी:—राजगृह के इस वात्स्यायन गोत्री महाशय ने २८ वर्ष गृहस्थाश्रम का पालन कर दीक्षा ली और ११ वर्ष पश्चात् युग प्रधान की पदवी प्राप्त की और ६२ वर्ष की उम्र भोग ९८ वें वीर संवत् में स्वर्गवास किया (वि० पू० ३७२ वें वर्ष में)

(५) यशोभद्र स्वामीः—तुंगीयायन गोत्र; २२ वर्ष गृह वास, १४ वर्ष व्रत पर्याय, ५० वर्ष युग साधन पदवी ८६ वर्ष की उम्र में स्वर्गवास (वीर संवत् १४८ और विक्रम पूर्व ३२२ वर्ष)

(६) सम्भूति विजय स्वामीः—माढर गोत्र, ४२ वर्ष गृह-वास, ४० वर्ष व्रत पर्याय, ८ वर्ष युग-प्रधान पदवी, ६० वर्ष उम्र (वीर संवत् १५६ वि० पू० ३१४ में) स्वर्गवास।

(७) भद्रबाहु स्वामीः—प्राचीन गोत्री ४६ वर्ष गृहवास, १७ वर्ष व्रतपर्याय, १४ वर्ष युग प्रधान पदवी, ७६ वर्ष की उम्र में (वीर संवत् १७० वि० पू० ३००) स्वर्गवास। इनके भाई का नाम वराह मिहिर था। इन्होंने जैन-साधुपन छोड़ कर "वराह संहिता" बनाई। मुझे मिली हुई पुस्तकों में से एक में लिखा है किः—ये मुनि आखीरी चौदह पूर्वधारी थे। इनके समय में अकाल पड़ने से चतुर्विधसंघ को बड़ा सङ्कट हुआ। उस समय पाटली पुत्र शहर में श्रावकों का संघ इकट्ठा हुआ और सूत्रों के अध्ययन आदि का निश्चय किया तो कुछ फेरफार जान पड़ा। ऐसा देख कर इन्होंने दो साधुओं को नेपाल देश से भद्रबाहु स्वामी को बुलाने के लिये भेजा। उन्होंने संयोगों का विचार कर १२ वर्ष बाद आने को कहा। बारह वर्ष का अकाल पूरा होजाने पर साधु इकट्ठे होकर सूत्रों को मिलाने लगे। ज्ञान का विच्छेद होता देख कर स्थूल भद्रादि ५ साधुओं को फिर भद्रबाहु स्वामी के पास नेपाल भेजे। चार साधु तो हिम्मत हार गये परन्तु

स्थूल भद्र ने १० पूर्व ज्ञान का अभ्यास किया। ग्यारहवें पूर्व का अभ्यास करते समय उन्हें विद्या आज़माने की इच्छा हुई। इससे जब भद्रबाहु स्वामी बाहर गये तब स्थूलभद्र सिंह का रूप कर उपाश्रय में बैठे। गुरु ने पीछे आकर यह सब देखा इस से उन्हें विचार आया कि अब ऐसा समय नहीं रहा कि विद्या को क़ायम रख सकें या पचा सकें। और आगे पढ़ाना बंद कर दिया ऐसा करने पर भी जब श्री संघ का बड़ा ही आग्रह देखा तब बाक़ी के पूर्व का मूल मात्र पाठ सिखाया, अर्थ नहीं बतांया। स्थूलभद्र के समय के बाद चार पूर्व और प्रथम संघेन, प्रथम संस्थान का विच्छेद होगया।

(८) स्थूलभद्र स्वामी:--पाटली पुत्र के गौतम गोत्री सगडाल के बेटे, ३० वर्ष गृह-वास, २४ वर्ष व्रत पर्याय, ४५ वर्ष युग प्रधान पदवी, ९९ वर्ष की उम्र में (वीर सम्वत् २१५ वर्ष में विक्रम पूर्व २५५ में) स्वर्गवास।

(९) श्रीआर्य महागिरि स्वामी:— लापत्य गोत्र, ३० वर्ष गृह वास, ४० वर्ष व्रत पर्याय, ३० वर्ष युग प्रधान पदवी, १०० वर्ष उम्र में (वीर सम्वत् २४५, वि० पू० २२५ में) स्वर्गवास। इस समय में आर्य महागिरि के शिष्य बलीश इन के शिष्य उमा स्वामी और इन के शिष्य श्यामाचार्य ने प्रज्ञापना (पन्नवणा) सूत्र की रचना की और वीर सम्वत् ३७६ में स्वर्गवास पाया।

(१०) बलि सिंह जी. (११) सोवन स्वामी. (१२) वीर स्वामी. (१३) स्थंडिल स्वामी. (१४) जीवधर स्वामी.

(१५) आर्य समेद स्वामी. (१६) नंदील स्वामी. (१७) नाग हस्ति स्वामी. (१८) रेवंत स्वामी. (१९) सिंह गणि जी. (२०) थंडिलाचार्य. (२१) हेमवंत स्वामी. (२२) नागजित स्वामी (२३) गोविन्द स्वामी. (२४) भूतदीन स्वामी. (२५) छोगगणि जी. (२६) दुःसह गणि जी. और (२७) देवर्धिगणि जी क्षमाश्रमण हुए।

वीर संवत् ९८० और विक्रम संवत् ५१० में देवर्धिगणि क्षमाश्रमणने महावीर स्वामी प्ररूपित तत्त्वोंको वल्लभीपुर नगर में पुस्तक रूप दिया। अर्थात् सूत्रों का लिपि वद्ध होना इन्हीं के समय से प्रारम्भ हुआ। इस विषय में यह प्रसिद्ध है कि एक वार देवर्धिगणि क्षमा श्रमण एक सूंठका गांठिया वेर कर लाये थे परन्तु उस को काम में लेना भूल गये। थोड़ी देर के वाद उन के ध्यान आया तो सोचने लगे कि अभी से मनुष्यों की स्मरण शक्ति कम होने लग गई तो आगे चल कर और भी कम हो जायगी और शास्त्र याद न रहेंगे इससे अच्छा हो कि पुस्तक तैयार की जायँ ताकि सब शास्त्र लिपि वद्ध हो जायं और इन में अभाव हो जाने की आशङ्का सदा के लिये मिट जाय। निदान इसी दूरदर्शिता से प्रेरित होकर शास्त्रों को लिपि वद्ध किया गया।

देवर्धिगणि क्षमा श्रमण के पाट पर अनुक्रम से (२८) वीर भद्र. (२९) शंकर भद्र. (३०) यशोभद्र. (३१) वीर सेन. (३२) वीरसंग्राम. (३३) जिनसेन. (३४) हरिसेन. (३५) जयसेन. (३६) जगमाल. (३७) देवऋषि (३८) भीमऋषि. (३९) कर्म ऋषि. (४०) राज ऋषि. (४१) देव-

सेन. (४२) शंकरसेन. (४३) लक्ष्मीलाभ. (४४) राम-ऋषि. (४५) पद्मसूरि. (४६) हरि स्वामी. (४७) कुशलदत्त. (४८) उवनी ऋषि. (४९) जयसेन. (५०) विजय ऋषि. (५१) देवसेन. (५२) सूरसेन. (५३) महासूरसेन. (५४) महासेन. (५५) गजसेन. (५६) जयराज. (५७) मिश्रसेन. (५८) विजयसेन. (५९) शिवराज जी. (६०) लालजी ऋषि. (६१) ज्ञान जी ऋषि हुए। इन के पश्चात् (६२) भाण जी ऋषि. (६३) रूप जी ऋषि. (६४) जीव-राज जी ऋषि. (६५) तेजराज जी ऋषि. (६६) कुंवर जी स्वामी. (६७) हर्ष ऋषि जी (६८) गोधा जी स्वामी. (६९) परशुराम जी स्वामी. (७०) लोकपाल जी स्वामी. (७१) महाराज जी स्वामी. (७२) दौलतराम जी स्वामी. (७३) लालचंद जी स्वामी. (७४) हुकमीचंद जी स्वामी. (७५) शिवलाल जी स्वामी. (७६) उदयचंद्र जी स्वामी. (७७) चौथमल जी स्वामी. । फिरः—

(७७) चौथमल जी स्वामी.

|

पूज्य श्रीश्रीलालजी महराज — पूज्य श्रीमन्नालालजी महाराज

पूज्य श्रीमन्नालालजी महाराज की सम्प्रदाय में हीरा-लाल जी महाराज हुए जिन के शिष्य हमारे चरित नायक जी हैं। उपर्युक्त सब पूज्य मुनिवरों का जीवन वृत्त लिखा जाय

तो अनेक वृहद् ग्रन्थ बन सकते हैं इस कारण विस्तार भय से यहां केवल उनका नाम-निर्देश कर देना ही ठीक समझा गया। आगे ग्रन्थारम्भ से पूर्व पूज्य श्रीमन्नालालजी महाराज तथा हमारे चरित नायक जी के गुरुवर हीरालालजी महाराज का सूक्ष्म परिचय दे देना अनुपयुक्त न होगाः—

पूज्य श्रीमन्नालालजी महाराज

आप का जन्म सम्वत् १९२६ में हुआ। आप ओसवाल वंश के जैनी है आप की माता का नाम नादो बाई और पिता का नाम अमर चन्द जी था। जब आप के पिता जी ने आप से दीक्षा के लिये अनुमति ली तो उत्तर में आप तुरन्त बोल उठे कि आपके साथ ही मैं भी दीक्षा अंगीकार करूंगा। पिताजी ने कहा कि तेरी छोटी अवस्था है और साधुपना बड़ा कठिन है। इस पर आपने उत्तर दिया कि कठिनाई कायरों को हुआ करती है। आखिर आप व आपके पिता श्री ने सम्वत् १९३८ में पूज्य श्री उदयचन्द जी महाराज के सहवासी रतनचन्द जी महाराज के पास दीक्षा ली। तब से लेकर १८ वर्ष तक आप पूज्य श्री की सेवा में रहे और ज्ञानाभ्यास किया। थोड़े ही समय में अनेक शास्त्र कण्ठस्थ कर लिये। आपकी बुद्धि आरम्भ से ही बड़ी प्रखर है। साथ ही स्वभाव भी बड़ा सुशील। द्वेष तो आप से कोसों दूर भागता है। एक बार दर्शन करने वाला हमेशा आपका भक्त बन जाता है। आपने मालवा, मेवाड़, मारवाड़ आदि प्रान्तों में विचरण कर जैन-जनता का बहुत उपकार किया है। अनेकों को त्याग-प्रत्याख्यान कराया। मारवाड़ से विचरते हुए एक बार आप पंजाब

प्रान्त में पधारे। वहां आपने स्यालकोट, अमृतशहर, रावलपिण्डी और जम्बू का भ्रमण किया। आपके साथ जो तपस्वी बालचन्द जी महाराज हैं वे हर समय आपको धार्मिक सहायता देते रहते हैं और पूज्य श्री भी तपस्वी जी की प्रत्येक विषय में अनुमति लिया करते हैं। तपस्वी जी एकान्तर करते हैं। पालने * में सब प्रकार का मीठा व घृत तेल में तली हुई वस्तु को सदा के लिये छोड़ रखा है। पांच द्रव्य (जल, रोटी, रंधीन थूली आदि, साग, दूध) से अधिक त्याग हैं। बीच २ में बेले, तेले, चोले पचोले किया ही करते हैं। तपस्वी जी की परोपकार में बड़ी दीर्घ दृष्टि है। जब आप जम्बू (काश्मीर) में विराजते थे तो वहां ८००० गौ को अभयदान कराया था। इस बात की और तपस्वी जी की तपस्या की स्वयम् काश्मीर महाराजा सर प्रतापसिंह जी साहब समय २ पर प्रशंसा करते रहते हैं। अस्तु वहां तपस्वी जी चलने में अशक्त होगये थे। ८ वर्ष तक वहीं विराजे। इस अवसर पर श्री मन्नालाल जी महाराज को सम्वत् १९७२ वैशाख शुक्ला १० के दिन आचार्य्य पद पर आरूढ़ किये गये और साथ ही मुनियों की ओर से शास्त्र-विशारद की उपाधि भी दीगई। आपका ज्ञान दर्शन व चारित्र प्रशंसनीय एवम् अनुकरणीय है। जिस समय आप उपदेश देते हैं (उदाहरणार्थ, भगवती जी पन्नवणा जी स्थानाङ्ग जी आदि का मूल पृति पादित करते हैं) तब लोगों को यही मालूम होता है कि आपको सर्वशास्त्र कण्ठस्थ हैं। और वस्तुतः है भी कुछ ऐसा ही।

---

* तपस्या की प्रतिज्ञा करने पर उसकी समाप्ति पर जो भोजन किया जाय उसे पारण या पालना कहते हैं।

पैर में कुछ आराम होजाने पर जम्बू से धीरे धीरे विहार कर बीच २ में उपदेश देते और चतुर्मास करते हुए आप रतलाम पधारे। सो अभी तक वहीं हैं। आपकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है आपके विषय में मुनि श्री प्यारचन्द जी महाराज व बालकृष्णजी ने संस्कृत में कुछ रचना की है जो इस प्रकार है:—

अथ पट्टावलिरुच्यते

शार्दूल विक्रीड़ितं वृत्तम्

सज्ज्ञानं निजतत्त्वबोधिनिचयं सार्वज्ञमात्पमदं
सद्भिर्वेद्यमलं स्वकीयसुधिया सद्दर्शनेनाङ्कितम्
साधूनां चरितैरलंकृतमुखो विज्ञाय विज्ञीभवन्
पूज्यांघ्रिः श्रमणोत्तमो विजयतां हुक्मीन्दुनामा मुनिः॥१॥

साधुओं के चरित्र-कथन से मुख को भूषित करने वाले, ...त्र भूत सम्यक्त्व को बढ़ाने वाले मुक्तिदायक सत्य-दर्शन से ...न्हित सज्जनों के जानने योग्य जिनेश्वरों के शुद्ध ज्ञान के अपनी शुद्ध बुद्धि से जान कर विज्ञ कहलाने वाले पूज्य पाद साधु शिरोमणि श्री हुक्मीचन्द जी महाराज की विजय हो॥ १ ॥

तत्पट्टे परमोऽत्र कीर्तिसहितो लोकेषु विख्यापयन्
मार्गं धर्ममयं दयामयममुं निर्वाणचिन्तामणिम्
वन्द्यो भव्यजनैर्जिनार्यविदितः संमाननीयाग्रणीः
साधुश्रावकशंसनीयसुयशाः शिवाख्यनामा जयेत् ॥२॥

उनके पट्ट पर उत्तम कीर्तिमान् तथा मोक्ष के लिये चिन्ता-मणि-रूप दया-पूर्ण इस धर्म मार्ग को जगत् में फैलाते हुए, भव्य लोगों के वन्दनीय, माननियों में अग्रणी और जिनके यश को साधु-श्रावक सभी गाते हैं ऐसे जैनाचार्य शिवलाल जी महाराज की विजय हो ॥ २ ॥

विद्या--कैरविणीविकासनकरो व्याख्यानपीयूषवान्
जैनश्राद्धचकोरकान् प्रमदयन् नित्यं कलंकोज्झितः ।
काषायातितमिस्रनाशनपरस्तन्वन् वचोंऽशून्निजान्
पूर्णात्मोदयचन्द्रचन्द्र इह वै संघाम्बरे राजतु ॥ ३ ॥

विद्यारूप कुमुदिनी को प्रफुल्लित करने वाले, व्याख्यान रूप अमृत बरसाने वाले, जैन श्रावक रूप चकोरों को प्रसन्न करने वाले, काषाय रूप महान्धकार को मिटाने वाले, अपने वचन रूप किरणों को फैलाने वाले, नित्य निष्कलङ्क पूर्ण मुनि उदयचन्द्र जी रूप चन्द्रमा इस संघ रूप आकाश में शोभा को प्राप्त हो ॥ ३ ॥

भव्याम्भोधिसमुन्नतौ हिमकरः शास्त्रांगसारार्थवित्
सिद्धान्तैः पुरुषार्थसाधनपरैर्जैनं पथं दर्शयन् ।
स्वाचारे निरतो जितेन्द्रियतया श्रीचौथमल्लो मुनिः
सोऽयं साधुशिरोमणिर्विजयतां सद्भारतीयक्षितौ ॥४॥

भव्यरूप या कल्याण समुद्र को बढ़ाने में चन्द्र-रूप, शास्त्रों के अंगों सार अर्थ जानने वाले, पुरुषार्थ सिद्ध करने वाले, सिद्धान्तों से जैन मार्ग को बतलाने वाले, जितेन्द्रिय होने से अपने आचार में तत्पर, साधुशिरोमणि पूज्य मुनि श्री चौथमल जी महाराज की भारतभूमि पर विजय हो ॥ ४ ॥

देशे यो विदिशं दिशं परमयन्नुद्गीत विद्यायशा
व्याख्यानेन नरान्नतान् हिततमान् शिक्षा नयन स्तूयते ।
सोऽयं संततमुद्धरन् भवमहाम्भोधौ निमग्नाञ्जनान्
मन्नालालमुनिश्चिरं विजयतामाचार्यवर्योगुणी ॥५॥

जिनका विद्यायश गाया गया है ऐसे जोकि देश में दिशा विदिशा में भ्रमण करके व्याख्यान के द्वारा परमहित भक्त लोगों को शिक्षित करते हुए सराहे जारहे हैं। संसार समुद्र में डूबे हुए लोगों का निरन्तर उद्धार करने वाले गुणी आचार्य वे मुनि मन्नालाल जी महाराज चिरकाल तक विजय पावें ॥ ५ ॥

श्रीरामगोपालसुतेन चारु-शार्दूलच्छटेन विनिर्मितानि ।
श्रीबालकृष्णेन हि शास्त्रिणा वै पद्यानि सन्मोदकराणि सन्तु ॥

श्रीरामगोपाल जी के पुत्र बालकृष्ण शास्त्री के शार्दूल विक्रीडित छन्द में रचे हुये श्लोक सज्जनों के आनन्ददायक हों ।

मुनिसद्गुणवर्णनम्

शार्दूलविक्रीडितम्

योगीशव्रतिहुक्मचन्द्र-विमलोद्यत्सम्प्रदायाम्बर-
संराजत्किरणार्करूप उदयं बिभ्रद्धि पूज्योऽनिशम्।
अर्हच्छास्त्रविशारदोऽमलमतिः सिद्धान्ततत्त्वे पटु-
मुन्नालालमुनिः[1] सदा विजयते सज्जैनभाग्यांकुरः ॥ १ ॥

योगीन्द्र-व्रत धारी हुक्मीचन्द जी महाराज के निर्मल संप्रदाय रूप आकाश चमकीली किरणों वाले सूर्य रूप निरन्तर उदय पाते हुए, जैनागम में निपुण, निर्मल-बुद्धि, सिद्धान्त के तत्वों में पारंगत, जैन लोगों के भाग्य के अङ्कुर पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज की सदा जय हो ॥ १ ॥

---

१ -मुन्नालालः -मुदा हर्षेण धर्मध्यानानन्देन इत्यर्थः तेन युक्त ना पुरुषः इति मुन्ना तथा धर्मोपदेशेन लालयति प्रमोदयतीति लालः । मुन्नालालः । अर्थात् धर्म ध्यान के आनन्द से युक्त होकर आगमोपदेश द्वारा लोगों को प्रसन्न करने वाले

श्रीमान हिज हाइनिस महाराजा सर मल्हारराव बाबासाहेब पँवार के. सी. एस. आई. देवास २ (मालवा) सॅन्ट्रल इन्डीया.

परिचय—प्रकरण ३२ परिशिष्ट प्र० ३

यो जैनागममार्गमार्गगमणिः संदेहिनां देहिनां,
शंकायाः सुसमाहितिं प्रकुरुते सम्यङ्मनस्तोषिणीम् ।
शुद्धज्ञानसुवर्णवर्णनकषं तं शान्तचित्तं परं,
मन्नालाल मुनिं मनोविषयिणं कुर्वे च कुर्वे नमः ॥२॥

जो जैनागमों के मार्ग के पथिक (यात्री) बनकर संदेह में पड़े हुए लोगों का अच्छी तरह संतोषजनक समाधान करते हैं, शुद्ध ज्ञान रूपी सुवर्ण के परखने की कसौटी परम शान्त-चित्त उन पूज्य श्री मन्नालाल जी महाराज को मैं स्मरण करता हूं और नमस्कार करता हूँ ॥ २ ॥

तपोराशिर्जैनागममननविचारण—मुखैः,
सुकार्यैर्यः कालं विलसति नयन् योगनिरतः ।
मुनिर्मुन्नालालो ललिततरभालो मृदुवचाः,
स तीर्थेशध्यानामृतरसरसी राजतुतराम् ॥३ ॥

जो तपोनिधि जैन सिद्धान्तों का मनन और विचारण आदि सुकार्यों से और योगनिष्ट होकर आप अपना समय बिताते हैं, सुन्दर ललाट वाले, कोमल वचन वाले और तीर्थंकरों के ध्यान रूप अमृत-रस के रसिक वे पूज्य मुनि श्री मुन्नालाल जी महाराज खूब यश पावें ।

२ मन्नालालः—माद्यन्ति मत्ता भवन्तीति मदः कामक्रोधादयः तान् न आलालयति प्रमोदयति, परास्तीकरोतीत्यर्थः । मन्नाकालः । अर्थात् कामक्रोधादि को नहीं बढ़ने देने वाले ।

सदा यो व्याख्यानामृतरससुपानाद्विनयतो,
नतानां श्राद्धानां मन उपगतानां प्रमदयन् ।
स्वभक्तानां काम्यं सलिलधरसाम्यं प्रकुरुते,
मुनिर्मुन्नालालो जयति स समालोचन परः ॥४॥

जो आये हुए विनय से नम्र अपने भक्त श्रावकों के मन को व्याख्यान रूपी अमृत पिलाकर प्रसन्न करते हुए मनोवाञ्छित मेघ की बराबरी करते हैं। वे तत्त्वों की परीक्षा करने वाले पूज्य श्री मन्नालालजी महाराज की सदैव जय हो ॥४॥

देष्णोर्ज्ञानधनं सदा जलदवल्लोके गुणोद्द्योतकं,
वीचीराशिविशोभितेन रविणा नो तुल्यता ते मुने ? ।
लाभो नोऽधिकमीक्ष्यतेऽत्र विबुधैर्दैनान्धकारापहं,
लब्धमज्ञानकरैरहर्निशमहो नाशान्धकारापह ॥५॥

हे पूज्य मुनि महाराज ! गुणकारी मेघ के सदृश ज्ञान रूपी धन को देने वाले आपकी बराबरी प्रकाश राशि से चमकते हुए सूरज से नहीं हो सकती । क्योंकि विद्वज्जन केवल सूरज से दैनिक अन्धकार मिटाने के सिवा और अधिक लाभ नहीं देख सकते । पर आप ज्ञान-रूपी किरणों से मनुष्यों के हृदय स्थित अज्ञान-रूपी अन्धकार को मिटाके रात दिन प्रकाश करने वाले हैं ॥ ५ ॥

मुग्धानां जगतीह मोहदलने ते वाक् सदाऽसीयते[1],
निस्तेऽस्मात् समुद्रो पदाम्बुजनखाभा त्वां गुरोर्वन्दने ।

---

1 असीयते — असिः खड्ग इवाचरतीति असीयते ।

वन्द्य लोकजनैः सुरैश्च दिवि तैः कीर्तिर्मुदा गीयते,
देयं मोक्षसुखं जरादिरहितं भूयोऽपि वन्दे स्वयम् ॥६॥

हे पूज्य मुनि महाराज ! इस जगत में आपकी वाणी मोही लोगों के मोह काटने में तलवार के समान है। इसी से प्रसन्न हुए गुरु जी महाराज को वन्दना करने के समय उन के चरण-कमलों के नखों की कांति आप पर पड़ती है। इसी बात से यहां के लोग और स्वर्ग में देवता आनन्द से आप की कीर्ति को गाते हैं। अतः मैं भी आपको बारम्बार वन्दना कर आपसे यही याचना करता हूं कि जन्म मरण आदि दुःख रहित मोक्ष सुख को देवें ॥६॥

प्रसिद्धवक्तृ पण्डित मुनि श्रीचतुर्थमल्लजिन्महाराज:-
शिष्येन साहित्यप्रेमि पण्डित मुनिना प्रियचन्द्रेण निर्मितानि
-पद्यानि

प्रसिद्ध वक्ता पण्डित मुनि श्री चौथमल जी महाराज के शिष्य साहित्य प्रेमी पण्डित मुनि श्री प्यारचन्द जी महाराज ने उपरोक्त पद्यों की रचना की।

मुनि श्री हीरालाल जी महाराज

आप हमारे चरित नायक जी के गुरु हैं। आप का जन्म इन्दौर स्टेट के रामपुरे जिले में कंफार्डा गांव में सम्वत् १९०६ में हुआ। आप के पिता श्री का नाम रतनचन्द जी था। वे वीसा वंश के जैनी थे। आप की माता श्रीमती राजा बाई तथा एक ज्येष्ठ भ्राता जवाहिरलाल जी थे। उनका

जन्म सम्वत् १९०३ में हुआ था और एक छोटे भ्राता थे जिनका जन्म सम्वत् १९१२ में हुआ था। कुछ दिन के पश्चात् प्रातः स्मरणीय पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी महाराज की सम्प्रदाय के राजमल जी महाराज का उस कंभार्डा ग्राम में पदार्पण हुआ। उनका वैराग्योत्पादक उपदेश सुनकर रतनचन्द जी ने सं० १९१४ में अपने तीन पुत्रों व पत्नी को त्याग कर दीक्षा ग्रहण की। तदनुसार कुछ समय पश्चात् सांसारिक कुटुम्ब को प्रतिबोधित करने के लिये सम्वत् १९२० में कंभार्डे पधारे और उपदेश दिया। तब तीनों ही पुत्र और मातेश्वरी ने मुनि महाराज की अत्यन्त मधुर वाणी सुनकर वैराग्य भाव ग्रहण किया और इस जगत को निःसार जानकर माता जी तीनों पुत्रों को साथ लेकर पूज्य श्री शिवलाल जी महाराज व रतन-चन्द जी महाराज के पास आकर कहने लगीं कि हे पूज्य मुनियों! ये मेरे तीनों ही लाल मुझे अतीव प्रिय हैं। पर आपका उपदेश सुनकर मेरी अटल सुखकी प्राप्तिके लिए संयम लेनेकी इच्छा है। अतः आप अनुग्रह कर मुझे और साथही इन तीनों को दीक्षा दीजिये इसमें मेरी आज्ञा है। अतः आज्ञा होनेके बाद पूज्य श्री ने तीनोंको दीक्षा ग्रहण कराई। यद्यपि बालकों की अवस्था कम थी तथापि उन्होंने प्रसन्नता और आनन्द पूर्वक दीक्षा ली। पूज्य जी ने ज्येष्ठ पुत्र जवाहिरलाल जी को उनके पिता श्री रतनचन्द जी महाराज का शिष्य बनाया तीनों शिष्यों ने समय पाकर अपने गुरू श्री रतनचन्द जी महाराज से विनय पूर्वक ज्ञानाभ्यास किया। थोड़े ही समय में स्वशास्त्र, परशास्त्र में निपुण होगये। जो कोई भी प्रश्न करता उसका सन्तोषजनक उत्तर देते। हमारे चरित नायक जी के दादा गुरु का इतना उच्च ज्ञान था कि (वेद कल्प उत्तराध्ययन)

दशवैकालिक आदि सूत्रों का अर्थ चाहे जिस समय पूछा जावे उसे वे ज़ुबानी समझा देते थे। प्राचीन इतिहासों की कई मौक़े की बातें उन्हें याद थीं। आप की आत्मा राग द्वेष कदाग्रह, मत्सरता, ईर्षा-भाव आदि से दूर रहती थी। आप क्षमा वैराग्य, धैर्य्य, विनय आदि की सांक्षात मूर्ति थे। आप की सेवा में राजा, महाराजा, दीवान, सेठ चाहे सो आवे परन्तु, उनसे आप 'दयापालो' इतना ही उच्चारण किया करते आप के हाथों में जपनी (ईश्वर स्मरण माला) तो सदैव रहा करती थी। आप बड़े आत्म-ज्ञानी और शान्त मुद्रा वाले थे। उन्हीं के शिष्य कविवर सरल स्वभावी मुनि श्री हीरालालजी महाराज जो हमारे चरित्रनायक जी के गुरूथे, आप के शिष्य समुदाय में चरित्रनायकके सिवा और भी निम्नोक्त शिष्य ये थे। मुनि श्री शाकरचन्दजी महाराज पण्डित मुनि श्री हजारीमल जी महाराज मुनि श्री गुलाबचन्द जी महाराज तपस्वी मुनि श्री हजारीमल जी महाराजमुनि श्री शोभालाल जी महाराज मुनि श्री मयाचन्दजी महाराज मुनि श्री मूलचन्दजी महाराज उक्त शिष्यसमुदाय में पण्डित मुनि श्री हजारीमल जी महाराज के सुशिष्य और चरित्रनायक के गुरुवर के पौत्र शिष्य व्याख्यानी मुनि श्री नाथूलालजी महाराज हैं। अस्तु चरित्रनायक के गुरुवर्य बड़े ही सरल स्वभावी और आशुकवि थे। उनकी कविता अबतक जनता को उपदेश दे रही है। उनका उपदेश बड़ा मनोहर, मधुर और प्रभावोत्पादक होता था। काल की गति विचित्र है। आप सम्वत् १९७४ में देवलोक होगये।

आप के छोटे भ्राता मुनि श्री नन्दलाल जी महाराज विद्यमान हैं। आप भी बड़े ही विद्वान हैं आप की उपदेश-पद्धति

अतीव प्रशंसनीय है। आप के शिष्य मुनि श्री खूबचन्द जी महाराज बड़े शान्त स्वभावी प्रति समय स्वाध्याय करते हैं आप के बनाये सैकड़ों स्तवन लावनियें हैं। उनमें से कुछ प्रकाशित हो चुकी हैं।

हमारे चरित नायक जी के दादा गुरु श्री जवाहरलाल जी महाराज के शिष्य तपस्वी माणिकचन्द जी महाराज थे उनके शिष्य मुनि श्री देवीलाल जी महाराज हैं। आप बड़े विद्वान् और शास्त्रवेत्ता हैं। आप का उपदेश भी प्रभावोत्पाक होता है आप ने जैनोपयोगी कई ग्रन्थों की रचना की हैं जिनमें से कुछ प्रकाशित हुई और कुछ होंगी। आप के बनाये हुए अनेक मधुर स्तवन आदि भी हैं। आप का जीवन चरित्र (मास्टर विश्वम्भर नाथ जी द्वारा) दिल्ली से प्रकाशित हुआ है।

———
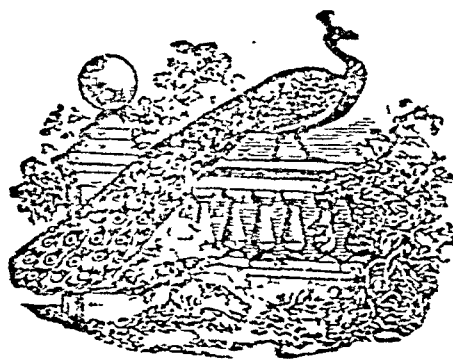
॥ वन्दे श्रीजिनवरम् ॥

प्रकरण पहला ।

वंश-परिचय
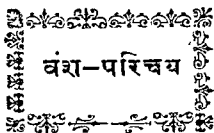
हमारे चरित नायक के स्वर्गीय दादा साहब श्रीयुत ओंकार जी ओसवंश के चोरड़िया जैनी थे। आप दारु (ग्वालियर) के ठाकुर साहब के यहां कामदार के पद पर नियुक्त थे। दैव-वशात् एक दिन ठाकुर साहब और उनमें कुछ मनमुटाव हो गया; जिसके कारण वे मध्य भारतान्तर्गत् बी० बी० एण्ड सी० आई० रेल्वे के किनारे, नीमच गांव में जा बसे। वहां उनके पुत्र रत्न गंगाराम जी का शुभ जन्म हुआ। जिन का विवाह श्रीमती केशरबाई के साथ हुआ। इन के घर गृहस्थी की स्थिति उस समय बड़ी ही साधारण थी। श्रीयुत गंगारामजी विशेष कर घीका व्यापार किया करते थे। और उसी पर आपके समस्त सांसारिक जीवन का दारोमदार था। इस के अतिरिक्त अपने गार्हस्थ्य जीवन को सुख शान्ति पूर्वक चलाने के लिए आपके पास उपयुक्त साधन के अतिरिक्त पैतृक-सम्पत्ति में थोड़ी ज़मीन, कुछ आम के पेड़ और एक कुआं भी था। थे साधारण गृहस्थ, परन्तु नगर में मान की दृष्टि से देखे जाते थे। जैसे गंगाराम जी एक भले मानस थे,

उसी प्रकार श्रीमती केशरांवाई भी परम विदुषी थीं। श्री चौथमल जी महाराज इन्हीं गंगाराम जी और श्रीमती केशरांवाई के सुपुत्र हैं। आपके दो भाई और तीन वहिनें थीं। भाइयों में आपसे वड़े का नाम कालूराम जी और छोटे का फ़तहचन्द जी तथा वहिनों के नाम नवलवाई, सुन्दरवाई थे। नवलवाई वड़ी थी जो मौजूद नहीं है। और छोटी सुन्दरवाई मौजूद है। तथा सव से वड़ी और थीं, जो असमय में हो देवलोक हो गईं।

प्रकरण २ रा

गर्भाधान में माता के विचार

और उनका

गर्भस्थित बालक पर प्रभाव।

गतामर्षो मर्षेण च जनित हर्षेण सहितः ।
समायो निर्मायो विषदसमायोग रचनाः
स्वमुक्त्यै यस्तृष्णां दधदपिच तृष्णां परिजहः—
चतुर्थ सन्मानो मुनिरयमानो विजयते ॥

एक रात्रि को ब्रह्म-मुहूर्त में हमारे चरित्र नायक जी की माता [सौभाग्यवती केशरांवाई धर्मपत्नी—श्रीयुत गंगाराम जी] को जब कि वे कुछ २ निद्रित और कुछ २ जागृतावस्था में सोती हुई थीं, आम का एक शुभ स्वप्न हुआ। स्वप्न दर्शन होते ही मातेश्वरी सजग होकर धर्म स्मरण करने लगीं

प्यारे पाठकों! गर्भाधान की अवस्था में स्वप्न दर्शन प्रायः सभी माताओं को होता है; पर अन्तर केवल इतना ही है, कि यदि गर्भस्थित बालक सदाचारी, धर्मनिष्ठ, सत्यव्रत और जिज्ञासु होने वाला हो, तो शुभ स्वप्न दर्शन होता है। और इसके विपरीत यदि गर्भस्थित बालक—

अत्यन्त कोपा च कुटिला च वाणी दरिद्रता बन्धु-
जनश्च वैरम्।
नीचः प्रसंग पर दार सेवा नरकस्य चिन्हम् वसन्ति देहे"॥

—चाणक्य नीति।

इस कथन को चरितार्थ करनेवाला होता है, तो अवश्य ही अशुभ स्वप्न दर्शन होता है। ऐसे अवसर पर जब कि शुभ स्वप्न दर्शन होता है, प्रत्येक माता को स्मरण रखना चाहिए, कि वह शुभ स्वप्न के पश्चात् रात्रि के अवशेष भाग में निद्रा न ले, अन्यथा उस शुभ-स्वप्न का फल नष्ट हो जाता है स्वप्नके शुभाशुभ फलोंको जानने वाले विद्वानों की धारणा है, कि अशुभ स्वप्न दर्शन पर निद्रा लेने से उसके अशुभ फल में न्यूनता हो जाती है। और शुभ स्वप्न दर्शन पर उसके फल में कमी हो जाती है। हमारे चरित नायक जी की माता को आम का स्वप्नाभास हुआ था। यह उन्होंने भी श्रीमुख से स्वीकार किया था, कि "जिस दिन चौथमल मेरे गर्भ में आया था, उस दिन ब्राह्म-मुहूर्त में मुझे आम का स्वप्न दर्शन हुआ था"। अस्तु। हम ऊपर कह आये हैं कि आम का स्वप्न दर्शन होते ही मातेश्वरी केशरांबाई सजग होकर उठ बैठीं और

परमात्मा का चिन्तवन करने लगीं । तत्पश्चात् आप शौच, स्नान और नैमित्तिक कार्यों से निवृत हो गृहोचित कार्यों में लगीं । इस प्रकार कुछ दिन व्यतीत होने पर, जब मासिक अवर्तन के समय रजो दर्शन न हुआ, तब आप को विश्वास होगया कि "मैं गर्भवती हूँ" । उसी दिन से आप ऐसी बातें पर ध्यान रखना अपना ध्येय समझने लगीं, जिनका जानना और पालन करना प्रत्येक स्त्री का कर्तव्य है ।

माता का गर्भाधान प्रकृति देवी की एक अद्भुत और अलौकिक प्रयोग शाला है । इस प्रयोग शाला में माता पिता के जिस २ प्रकार के चित्त और चरित्र, आचार और विचार, सौजन्यता और दुष्टता, रहन और सहन, आहार और विहार, विद्या और बुद्धि, वीरता और कायरता, दानशीलता और कदर्यता, परहितपरता और स्वार्थपरता, आदि का रासायनिक प्रयोग होता है । बस, उसीके ठीक अनुरूप सन्तान रसायन की उत्पत्ति होती है । या यों कहिये कि माता के इस गर्भाशयरूपी प्रयोगशाला में बहु मूल्य तथा अमूल्य और सस्ते तथा निकम्मे हर तरह के मनुष्य रत्न ठीक उसी तरह तैयार होते हैं, जिस प्रकार कि रसायनशाला में भिन्न २ रसों के मिश्रण और प्रयोग से रसमात्राएं । जिस प्रकार रसायनशाला में रासायनिक की बुद्धि, यन्त्रों की उत्तमता और पदार्थों के उचित अंश के मिश्रण पर औषधियों की उपयोगिता में अधिकता या न्यूनता होती है, कांच के कारखाने में कांच के मावे की जाति के अनुसार जिस प्रकार न्यूनाधिक उज्ज्वल, निर्मल और पारदर्शक कांच की वस्तुएँ बनती हैं, कारीगर के ज्ञान और मशीन की उत्तमता के अनुसार जिस प्रकार सुन्दर या टिकाऊ या भद्दे काम

चलाऊ तथा कमज़ोर कपड़े वनते हैं, जिस प्रकार कि मिट्टी का व्यवहार कुम्हार करता है, चाक के ऊपर घुमा फिराकर जैसा २ उसे आकार प्रकार देता है, जिस सावधानी और चतुरता से उन्हें पकाता है, वैसे ही उत्तम या निकम्मे पात्र तैयार होते हैं, भट्टी में से निकलने के पश्चात्, पात्रों पर फिर चाहे जैसा रंग चढ़ाया जाय, चाहे जैसी उनपर पालिश की जाय, या कैसी ही चित्रकारी और पचीकारी उनपर की जाय, परन्तु स्मरण रहे कि यों करने से उनकी सुन्दरता में कुछ घटा वढ़ी अवश्य हो सकती है। परन्तु, पात्रों का वास्तविक मूल्य तो उनके निर्माण समय में लाई हुई मृत्तिका से, सांचे में चाक पर दिये हुए आकार-प्रकार से और भट्टी में चतुरता पूर्वक पकाने से ही आंका जाता है। उसी प्रकार वालक रूपी पुतला भी माताके गर्भ रूपी सांचेमें ढलकर तैयार होता है। और जैसे २ उत्तम या अधम, मध्यम या निकृष्ट, सात्विक, राजसिक और तामसिक पदार्थों का रासायनिक प्रयोग, गर्भाधान के समय ही से, इस महान रसशाला में किया जाता है, वैसा ही उत्तम या अधम, मध्यम या निकृष्ट सन्तान रूपी पुतला तैयार होता है। यदि चतुर पारखी और रासायनिक माता पिता ने हीरा वनाने का मसाला इकट्ठा करके, उसे उचित समय में और निश्चित रीति से, सावधानी के साथ मिलाया, तो वह वहु मूल्य अथवा अमूल्य हीरा वनता है। यदि नीलम के कुछ नीचे मसाले से काम लिया तो नीलम तैयार होता है। अथवा यदि कम क़ीमत के कांच वनाने के पदार्थों का सम्मिश्रण किया तो कांच ही प्राप्त होता है। राम और रावण, कृष्ण और कंस, युधिष्ठिर और दुर्योधन, पृथ्वीराज और जयचन्द आदि उत्तम और अधम मनुष्यों

की रचना माता के इसी गर्भाशय रूपी अलौकिक रसशाला में हुई, और होती है, तथा होती रहेगी। अन्तर केवल रासायनिक पदार्थों की उत्तमता और अधमता का रहता आया है। बस, जैसे ही पदार्थों का सम्मिश्रण हुआ, प्राकृतिक प्रयोग-शाला में वैसी ही रसायन भी बन कर बाहर निकली। महावीर, ऋषभ और पारस से महा पुरुषों तथा रावण, कंस और हिरण्य कशिपु से राक्षसों का पैदा करना अब भी हमारे ही हाथ में है—हमारे ही आधीन है। जैसे ही मसालों का प्रयोग किया जायगा। वैसी ही दयालु और क्रूर, दानी और कृपण, वीर और कायर, परोपकारी और स्वार्थी सन्तति माता के प्रयोग-शाला से तैय्यार होकर बाहर निकलेगी। प्रकृति देवी का यह अटल और निर्विवाद नियम है। अस्तु' हर एक उत्तम माता का परम कर्त्तव्य और एक मात्र धर्म है, कि वह अपनी इच्छानुसार और उत्तम सन्तान उत्पन्न करने के लिये इन बातों पर ध्यान रक्खें:—

१. प्राकृतिक प्रयोगशाला गर्भाशय का रहस्य।

२. वंश परम्परा से उतरने वाले गुण।

३. पुरुष तथा स्त्री की मनः शक्ति और प्रेम का प्रभाव।

४. सन्तान के पालन पोषण तथा शिक्षण का सुप्रबन्ध।

इस प्रकार के अनेक सद्विचार हमारे चरित नायक की माता भी नित्य प्रति किया करती थीं। जिस से गर्भस्थ सन्तति के ऊपर सम्पूर्ण स्वर्गीय गुणों का पूरा पूरा रङ्ग बैठ जाय; जिस से उसकी गर्भस्थ सन्तति मनुष्य के रूप में सच्ची

मनुष्यता लिये हुए इस जगतीतल में प्रकटे और जिस के द्वारा सदाचार, सत्य निष्ठा दृढ़ निश्चय, बुद्धि की विलक्षणता व्यवहार चातुर्य्य सम्पन्नता, उदारता, कर्त्तव्य परायणता, अध्यवसाय, आत्म-निर्भरता, उद्योग, विनय, धैर्य्य, सन्तोष, परोपकारिता, कृतज्ञता, निष्कपटता, साहित्य प्रेम, देशप्रेम, प्रकृति-प्रेम, धार्मिक भाव आदि देवोपम गुणों का उस के साथियों में, उस के कुटुम्ब में, उस के समाज में, उस की जाति में, तथा उस के पड़ोसी किसी भी साम्प्रदायिक संसार में विशेष विकास और वृद्धि हो।

यस कहना ही नहीं होगा, कि माता ने अपने उपयुक्त पवित्र विचारों के अनुसार अपने गर्भ जात (चौथमल) पर कितना विचित्र और आदर्श प्रभाव डाला, और उसके द्वारा मध्य भारतीय वर्तमान जैन श्वेताम्बरियों में—श्वेताम्बरीय समाज में तथा अन्य दर्शकों में किस जागृति का विद्युत सञ्चार हुआ। यह पाठकों को प्रत्यक्ष और भली प्रकार से विदित है। इस पुस्तक में भी यथा स्थान और प्रसङ्गानुकूल उसका विवेचन किया जायगा।

इस प्रकार मातेश्वरी केशरांबाई ने आनन्द मुद्रा के साथ गर्भस्थित बालक की प्रति पालना करते हुए क्रम से दो मास, तीन मास, पांच मास व्यतीत किये। बाद में अच्छी २ भावनाएं अर्थात् दिव्य दोहले का विचारोत्पन्न हुआ। तदनुसार आप के पतिदेव ने यथाशक्ति धर्म पत्नि की अभिरुचि के अनुसार उन्हें पूर्ण किया। यों करते २ साढ़े सात अहोरात्र होने पर नौ मास और दश दिन की अवधि पूरी हुई और हमारे चरित नायक का इस जगती तल में शुभ जन्म हुआ।

आगे चलकर आप में उन्हीं सद्गुणों और साधु-भावनाओं का प्रत्यक्ष और प्रचुरता से प्रदुर्भाव हुआ, जिन सद्भावनाओं और स्वर्गीय गुणों का आभास, आप पर माता ने अपने गर्भाधान के समय से गर्भ स्राव के समय तक, अपने सत्कार्यों से डाला था।

प्रकरण ३ रा

जन्म ।
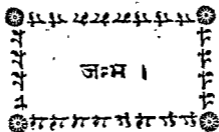
श्री मुनि महाराज का शुभ जन्म कार्तिक शुक्ला १२ रविवार सम्वत् १६३४ विक्रमीय के दिन ५० घडी १३ पल समय व्यतीत होने पर अश्विनी नक्षत्र के तृतीय चरण में ६० घड़ी के पश्चात् व्यतीत योग में सूर्य ७—५ इष्ट घड़ी ३५—६ के शुभ योग में दैवी गुण और सिंह वर्ग के साथ मध्य भारतान्तर्गत 'नीमच' नगर में हुआ था। दैवी प्रकृति का आश्रय लेकर जन्म धारण करने वालों में, श्री कृष्ण चन्द्र के कथनानुसार निम्नलिखित छब्बीस धर्म होते हैं।

"अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥१॥
अहिंसा सत्यम् क्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥२॥
तेजः क्षमा धृतिः शौचम् द्रोहो नाति मानिता ।
भवन्ति सम्पदं दैवी मभिजातस्य भारत ॥३॥

[श्रीमद्भगवद्गीता अ० १६ श्लोक १,२,३

अर्थात् श्रीकृष्ण बोले, कि "हे अर्जुन! (१) अभय (२) शुद्ध सात्विक वृत्ति (३) ज्ञान योग, व्यवस्थिति अर्थात् ज्ञान (मार्ग) और (कर्म) योग की तारतम्य से व्यवस्था (४) दान (५) दम (६) यज्ञ (७) स्वाध्याय और स्वधर्म के अनुसार आचरण। (८) तप (९) सरलता (१०) अहिंसा (११) सत्य (१२) क्रोधहीनता (१३) कर्म फल का त्याग (१४) शांति (१५) अपैशुन्य अर्थात् दोष दृष्टि छोड़कर उदार भाव रखना (१६) सब प्राणियों के प्रति दया। (१७) तृष्णा न रखना। (१८) मृदुता [१९] लज्जा [२०] अचपलता अर्थात् फिजूल कार्यों का छूट जाना। [२१] तेजस्विता [२२] क्षमा [२३] धैर्य [२४] शुद्धता [२५] द्रोह न करना और [२६] अति मान न करना, ये छब्बीस धर्म दैवी प्रकृति का आश्रय लेकर जन्म धारण करने वालों में होते हैं।

नीमच नगर लगभग २५° उत्तरी अक्षाँस और ७५° पूर्वी देशान्तर पर, महाराजा सेंधिया के राज्य में राजपूताना मालवा रेलवे लाइन के किनारे पर अवस्थित है। यहां श्वेताम्बर स्थानकवासी समाज के वीतराग मुनियों की खासी स्थिति और सत्संगति रहती है। इस का प्रधान कारण, यहां की लोक संख्या में अधिकांश भाग स्थानकवासी जैन बन्धुओं ही का है। इसके अतिरिक्त यहां एक रेलवे स्टेशन और आस पास के गावों की व्यापारिक मण्डी होने से भी कई साधू सन्त लोग, यहां समय २ पर विचरते हुए आ निकलते हैं। और अपने पावन चरण तथा पीयूष वर्षी वचन वृष्टि से यहां की भूमि और नागरिक जनों की हृदय रसा प्लावित करते रहते हैं। आगे चल कर हमारे चरित नायक जी पर इस स्थान और यहां समय २ पर पधारे

श्रीमान् धर्मप्रेमी मिश्रीमलजी मुणोत ब्यावर

परिचय–परिशिष्ट प्रकरण ३

हुए साधुओं का बड़ा प्रभाव पड़ा। प्रभाव ही नहीं पड़ा, बल्कि उन की प्रति दिन की संगति और वचन संघर्ष से आप का गार्हस्थ्य जीवन एक दम सन्यस्थ जीवन के रूप में बदल गया। इस परिणति के साथ ही साथ आप का संकुचित कौटुम्बिक प्रेम भी विश्व बन्धुत्व के व्यापक प्रेम से जा मिला। अब आपका निज का सुख जीवमात्र का सुख हो गया, आपका जीवन अब अपने ही जीवन के लिए नहीं रहा, वरन् उसने प्राणी-मात्र के जीवन का जामा पहिन लिया। आंगिक क्रियाएं और चेष्टाएं अपने ही अंगों के भरण पोषण के लिए नहीं रही वरन उनका सम्पूर्ण व्यापार और चालन अब विश्व के विराट शरीर के भरण पोषणार्थ है। व्यक्ति गत माया ममता ने अब विश्व की माया ममता से अपना नेह नाता जोड़ लिया। अन्ततः अब आप के निज के सम्पूर्ण स्वार्थ युक्त काम काज अनन्त और आनन्दमय विराट विश्वात्मा के काम काज हो रहे हैं, जिसमें आप का, अपना सच्चा और परम स्वान्तः सुखाय है।

चरित नायक जी की जन्म कुण्डली:—

जन्म कुण्डली

चलित चक्रम्
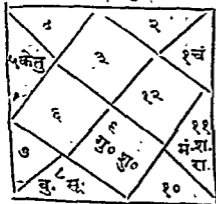
आप का शुभ जन्म होने पर कुटुम्बियों का हृदय सहज ही में आनन्दित हो उठा। और समस्त पारिवारिक लोगों ने वड़ा उत्सव मनाया। उन्होंने श्रद्धा और प्रेम से दीन हीन लोगों को अनेक प्रकार के दान दिये। आपके पिता के सब मित्र, स्नेही और वन्धु वान्धवों ने भी इस आनन्द में उन को वधाई दी। सब ने मिल कर आशीर्वाद दिया कि ईश्वर करे आप की यह संतान चिरायु हो। और भविष्य में यह वालक दीर्घायु होकर ख़ूब यश और मान प्राप्त करे। यद्यपि यह आशीर्वाद केवल वर्तमान समय के विचारों पर दृष्टि रख कर साधारण रीति से ही दिया गया था। जैसा कि प्रायः होता है। तथापि समय पाकर वह सार्थक हुआ। पहिले दिन 'जात कर्म' किया गया। दूसरे दिन जाग्रण हुआ तीसरे दिन वालक को चन्द्र सूर्य के दर्शन कराये गए। इस प्रकार एक के वाद एक क्रियाओं को करते हुए दस दिन पूरे हुए। ग्यारहवें दिन अशौच कर्म से निवर्तन कार्य की विधि पूरी की गई। और वारहवें दिन यथाशक्ति सम्वन्धियों और ब्राह्मणों को भोजन वनवा कर खिलाया पिलाया गया। उसी दिन विद्वान् ब्राह्मणों को वुलवा कर आपके पिता जी ने उन की उचित अभ्यर्थना की और उनके द्वारा "नाम करण" संस्कार की विधि पूरी कराई। तदनुसार ब्राह्मणों ने वालक के शारीरिक लक्षणों और अनु व्यञ्जनों की परीक्षा कर उस का नाम "चतुर्थमल" रक्खा। अहा! ज्योतिष भी क्या ही विचित्र विद्या है जिसका वास्तविक ज्ञान प्राप्त होजाने पर; भूत भविष्य और वर्तमान तीनों कालों को ज्योतिर्विद एक ही साथ अपनी गोदी में खेल खिला सकता है। बस, ज्योतिषियों ने भी हमारे चरित नायक का ज्योतिष

की जानकारी से वही नाम रखा जिससे भविष्य में चलकर बालक में वे ही सब गुण उतरें और जिससे "यथा नाम तथा गुणाः" की उक्ति पूर्णतया चरितार्थ हो। इस प्रकार गर्भजात बालक प्रति-दिन चन्द्रकला की भांति बढ़ता हुआ अपने अड़ोस पड़ोस के समस्त लोगों को सुख देने लगा। जोधपुर के पण्डित श्री नित्यानन्द जी आशु कवि ने आप के विषय में कहा है, यथाः—

युगत्रये पूर्वमतीतपूर्वे जातास्तु जाता खलु धर्ममल्लाः।
अयं चतुर्थो भवताच्चतुर्थे धातेति सृष्टोऽस्ति चतुर्थमल्लः॥

अर्थात् पहिले के तीनों युग में कई धर्मोपदेशक तथा धर्म प्रवर्तक हो चुके हैं परन्तु चौथे युग में भी कोई एक प्रतिभाशाली चौथा उपदेशक होना चाहिये इसी विचार से विधाता ने आप की रचना की।

प्रकरण ४ था
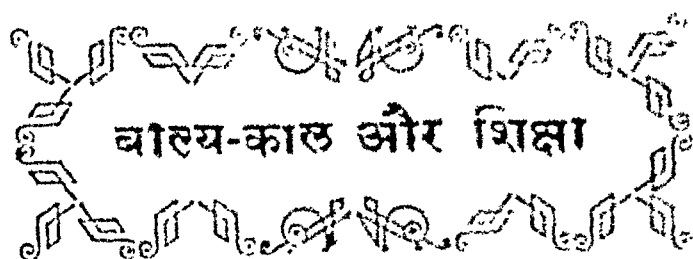
आप एक मास के हुए, दो मास के हुए, और छः मास के हुए। घुटनों के चल सरकने लगे ६ मास के होते ही तोतले वचनों से अपने अभिभावकों को प्रमुदित करने लगे यथाः—

"बालक की सुनि तोतरि बाता।
मुदित होहिं मन पितु अरु माता" ॥

पिता जी ने आप को चिड़ियों का झूंठा जल पिलाया जिसका अभिप्राय यह था कि बालक बड़ा होने पर स्पष्ट और चतुरता से बोलेगा। गर्भावस्था में माता की संयम शीलता और अब शैशव काल में सदाचारी पिता एवम् माता दोनों की सुयोग्यता से मुख्य उपदेशक होने का सूत्र पाठ प्रारम्भ हुआ। सुयोग्य माता पिता सन्तान समय पाकर कैसी सच्चरित्र और आदर्श होती है, इसका हमारे चरित नायक जी ज्वलन्त उदाहरण हैं।

सात वर्ष तक अपने माता पिता की सुशीतल छत्र छाया और लालन पालन में रहने के अनन्तर नियमानुसार आप का

विद्यारम्भ हुआ। शुभ मुहूर्त में आप को गांव की पाठशाला (चटशाला) में प्रविष्ट कराया गया। जहां आप ने गणित आदि के साथ साधारण हिंदी का ज्ञान प्राप्त किया, और कुछ अंग्रेजी और पांचवीं पुस्तक तक उर्दू का अध्ययन किया। अवस्थानुसार आप को गान विद्या का भी शौक हो चला। स्वर आप का बड़ा कर्णप्रिय और मधुर था। आगे चलकर आप ने कुछ काव्य ग्रन्थ और फुटकर कविताओं की रचना भी की, जिनका उल्लेख अन्यत्र किया जायगा। पन्द्रह वर्ष की अवस्था तक आप की आरम्भिक शिक्षा हुई। पुस्तक-प्रेम आप को वाल्यकाल से ही खूब था। उस समय आप प्रायः वहां नन्दराम जी पसारी (पुस्तक विक्रेता) की दूकान पर बैठे पुस्तकें पढ़ते रहते थे।

इस प्रकार आप का बाल्य काल खेल कूद में, और तरुणावस्था का आरम्भिक समय पठन-पाठन में, व्यतीत हुआ। मनुष्य की अवस्था का यह समय वास्तव में बड़ा आनन्ददायी होता है घर की स्थिति चाहे साधारण ही क्यों न हो, किंतु मनुष्य सांसारिक चिन्ताओं से रहित होने के कारण इस अवस्था में अपने जीवन को बड़ी सुख-शांति से व्यतीत करता है। माता पिता की सुखद छत्र छाया, उसी के अनुरूप ज्येष्ठ भ्राता का नेतृत्व, और स्वतन्त्र जीवन; इन सब सुख साधनों से युक्त हमारे चरितनायक जी का जीवन बड़े आमोद प्रमोद में व्यतीत होरहा था। किंतु, यदि आप के जीवन का लक्ष्य सांसारिक सुख-प्राप्ति ही रहता तो न हमें आज प्रस्तुत विषय पर इस प्रकार रचना करने का अवसर आता और न आपका चरित्र ही आदर्श होता। वरन लोकोपकार के बदले

बहुत करके आप के द्वारा संसार का अपकार ही होता। उस विधाता प्रेरक को लाख २ धन्यवाद है, जिसकी प्रेरणा ने मुनि महाराज के लक्ष्य को एक दम बदल दिया।

प्रकरण ५ वां

भाई का वियोग और माता का धैर्य्य

आपके ज्येष्ठ भ्राता कालूराम जी उस समय पटवारी थे। कुसङ्गति में पड़ कर वे जुआ खेलने लगे थे। पाठक जानते ही होंगे कि यह कैसी बुरी चाट है, और आये दिन इसके फल स्वरूप जो दुष्परिणाम होजाते हैं, उन्हें सब जानते हैं। अतः इस विषय पर कुछ अधिक लिखना व्यर्थ का विस्तार करना है। अस्तु। कालूराम जी अपने जुआरी मित्रों के साथ हमेशा जुआ खेला करते थे। एक दिन वे लोग इन्हें किसी बहाने से जंगल में जुआ खेलने को लेगये और वहां इनके पास का सारा द्रव्य छीन कर उन्हें मार डाला। यह बात सम्वत् १६४८ विक्रमीय की है। उसी रात्रि को उनकी माताने स्वप्न में देखा कि मेरे पुत्र को किसी ने मार डाला है। दूसरे दिन जब यह प्रकट होगया कि उन्हें किसी ने मार डाला है तो माता पिता और कुटुम्बियों को अपार दुःख हुआ। कुछ समय पश्चात् संयोग से घातकों का भी पता चल गया। किन्तु, जब कुटुम्बियों ने उन पर मुकद्दमा चलाने का विचार किया तो चौथमलजी की माता ने जो बड़ी धर्मनिष्ठा और परदुःख कातरा थीं- उसका निषेध करके कहा कि ऐसा न करो। जो कुछ हुआ सो हमारे भाग्य का। गई वस्तु लौट नहीं सकती। व्यर्थ में परस्पर वैमनस्य बढ़ाना, अथवा अपनी ऐसी हानि की क्षति पूर्ति की आशा करना, जिस की पूर्ति और बदला हो ही नहीं

सकता, सर्वथा अनुपयुक्त है । उस में किसी का वश नहीं। घात कारियों ने या तो कर्मों का बदला लिया हो अथवा कुछ और हुआ हो । किन्तु, अब बात यहीं समाप्त करो। प्रिय वाचक ! देखा आप अपने सम्यक्त्व का लक्षण! अहा! कैसी दिव्य भावना है! त्याग का कैसा अद्भुत उदाहरण है!! कम से कम इस कलिकाल में तो ऐसा उदाहरण विरला ही मिलेगा । हां, हमारे चरित नायक जी की माता के इस त्याग में सतयुग की झलक अवश्य है। धन्य है, उस मातृ हृदय को! जो परोपकार, त्याग, और "आत्मवत् सर्वभूतेषु" से भरा हो ।

हमारी जैसी साधारण लेखनी की क्या शक्ति जो उसका गुण-गान कर सके। वास्तव में त्याग और धर्म की साक्षात् मूर्ति ऐसी ही माताएं किसी भी देश के इतिहास को गौरवान्वित करने वाली होती हैं। स्वर्णाक्षरों से लिखे जाने योग्य ऐसी ही माताओं के चरित्र होते हैं। केसरां बाई तुम धन्य हो।

प्रकरण ६ ठा

विवाह
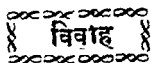
पहिले कह चुके हैं, कि हमारे चरित नायक जी के तीन बहिनें भी थीं। इन में से दो बड़ी थीं जिन का विवाह होचुका था, और एक छोटी थी जिन के लिये आप की माता जी यह सोच रही थीं कि यदि यह होशियार होजाय तो मैं और यह दोनों साध्वी बन जायं। परन्तुः—

"अपने मन कुछ और है कर्त्ता के कुछ और"

अनुसार माता जी की यह इच्छा पूर्ण न होसकी। बीच ही में उस बाई का देहान्त होगया।

इसके पश्चात् हमारे चरित नायक जी का विवाह का विचार किया गया कि प्रतापगढ़ (राजपूताना) वाले जो सगाई का दस्तूर मिलाने का आग्रह कर रहे हैं। स्वीकार कर लिया जाय। विचारनन्तर आपकी सगाई प्रतापगढ़ होगई और शीघ्रही विवाह का शुभ मुहूर्त भी निश्चित होगया। परिस्थिति अनुकूल न होने के कारण आप के पिता को विवाह कार्य्य के लिये अपनी खेती की ज़मीन और आम के पेड़ बेच देने पड़े।

प्रतापगढ़ पहुंच कर उन्हों ने सम्वत् १९५० विक्रमी मे चतुर्थमलजी का विवाह (बैठा विवाह) कर दिया। अपनी शक्ति के अनुसार विवाह कार्य अच्छे आनन्द और समारोह से सम्पन्न हुआ। इसके पश्चात् नव वधू को अपने साथ लेकर ये लोग नीमच आगये।

प्रकरण ७ वां

युवावस्था
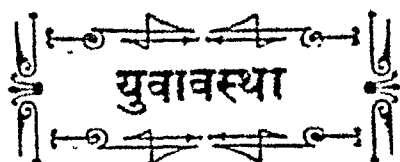
(संसार से उपरति और वैराग्य)

वहां से हमारे चरितनायक महोदय पैमायश सीखने को गये। परन्तु जिस के पास गये थे वह इन से भोजन बनवाता था, और इन्हें भोजन बनाना आता नहीं था। इस कारण कुछ ही दिनों में घबरा कर आप वापिस चले आये हमेशा साधु-सन्तों की सेवा में रहना और उनका सदुपदेश ग्रहण करना ही आपका ध्येय होगया। शनैः २ संसार से विरक्ति होती गई। इसी समय अर्थात् संवत १९५० में आप को पितृ वियोग का दुःसह दुःख झेलना पड़ा। स्त्री पुत्रादि को छोड़ कर आपके पिता स्वर्ग गामी हुए। जब पिता के क्रिया कर्म से निवृत्त होगये तो आप की माता ने दीक्षा लेने का विचार प्रगट किया और इन से पूछा कि बेटा, तेरी क्या सम्मति है? इस पर चौथमल जी ने भी अपनी दीक्षा लेने का विचार प्रकट किया और कहाः—

"माता जी! मैं आप से पहिले ही दीक्षा लेने का दृढ़ निश्चय कर चुका हूं। आप प्रसन्नता पूर्वक दीक्षा लें, साथ में मैं भी दीक्षा लूंगा "परन्तु माता जी बोलीं कि "बेटा। तेरी यह अवस्था सांसारिक सुख भोगने

की है न कि वैराग्य ग्रहण करने की ? यदि तेरी ऐसी ही इच्छा है तो समय पाकर तू भी दीक्षा लेलेना। किन्तु अभी तो गृहस्थाश्रम में प्रवृत्त हो। तेरा तो अभी विवाह ही हुआ है ? ऐसी दशा में तू कैसे दीक्षा ले सकता है"

इस प्रकार आपको माता और साथ ही कुटुम्बियों ने बहुत समझाया किन्तु मन पर जो रंग चढ़ गया था वह किसी के उतारे न उतरा, बल्कि सबके कहने सुनने से और चढ़ गया। जब माताजी ने देखा कि यह न मानेगा तो यह कह कर टाल दिया कि अच्छा तेरी स्त्री को पीहर से लेआ। यदि वह अनुमति देदे अथवा तेरे साथ ही साध्वी होजाय तो तू भी दीक्षा लेलेना। इस पर चौथमल जी स्त्री को ले आये और अपने विचार उससे प्रगट किये तो उसने साफ इन्कार कर दिया। पुत्र और माताने मिल कर खूब उपदेश दिया किन्तु उस पर इसका कुछ प्रभाव न हुआ। बल्कि उल्टा घर में एक प्रकार का क्लेश आखड़ा हुआ। इनकी स्त्रीने कहा—और ठीक ही कहा कि यदि तुम्हें दीक्षा ही लेनी थी तो फिर विवाह क्यों किया ? अब जब विवाह कर लिया तो पहिले अपना सांसारिक और गृहस्थ धर्म्म का पालन करो। फिर समय आने पर ऐसा विचार करना। इस प्रकार स्त्री ने अपनी अकाट्य युक्तियों और दलीलों को पेशकिया। किंतु जिस प्रकार स्त्री इनसे सहमत न हुई इसी प्रकार ये भी अपने दृढ़ सङ्कल्प से विचलित नहीं हुए। मत-विभिन्नता के कारण जब घर में क्लेश रहने लगा तो ये अपनी स्त्री को अपने ममिया ससुर के यहां छोड़ आये। इस प्रकार इनका मार्ग एक प्रकार से

निष्कण्टक होगया। और अब इन्हें वैराग्यचिन्तवन का खूब अवसर मिलने लगा। इधर जब इन्हों ने अपना व्यौपार भी कम कर दिया तो यह बात फैलती हुई इनके ससुराल में पहुंची इनके ससुर नीमच आये और वहां हाकिमों से कोशिश करके इन्हें हवालात में रखवा दिया। और कहने लगेः—देखता हूँ, अब तुम्हें कौन छुड़ाता है। ६ दिन तक आप हवालात में रहे। छटे रोज आपके ससुर आये और कहने लगे किः— "जवांइजी" आनन्द से तो हो। जगह पसन्द आगई? यदि पसन्द न हो और मौज से रहना चाहो तो यह इकरार करना पड़ेगा कि मैं दीक्षा नहीं लूंगा। इस पर आपने सोचा कि हवालात में बैठे २ तो कुछ होगा नहीं। क्या हर्ज़ है यदि इनके सामने इकरार कर लिया जाय कि मैं दीक्षा नहीं लूंगा।

यह सोच कर आपने कह दिया किः— "मैं दीक्षा नहीं लूंगा।" नियमानुसार आप से २००) रुपये का मुचलका और इकरार नामा लिखवाया गया। परन्तु आप ने भी राज कर्मचारियों से कह कर अपने ससुर का २००) रुपये का मुचलका लिखवाया। इस शर्त का कि वे मुझे कुछ कष्ट न देंगे। इस के पश्चात् ससुर महाशय आप को और साथ ही आप की माता को भी धमोतर [प्रतापगढ़] ले गये। वहां इन की पूरी निगरानी रक्खी जाने लगी। इस लिए कि कहीं चले न जायं। एक दिन किसी कारण वश हमारे चरित्र नायक अपनी माता के साथ गांव में जा रहे थे कि मार्ग में एक मकान आया जिसके लिए आप ने पूछा कि माता जी! यह किस का घर है? इस पर आप की माता ने कहाः— कि बेटा! यह मकान रंगू जी सबी का है। इस का यहां

ससुराल है। यह बाल विधवा हो गयी थी। अपने शील और धर्म की रक्षा करती हुई यहां रहती थीं। वह बड़ी रूपवती थी। बाल्यावस्था में ही विधवा हो गई थी। और तभी से अपने दुःख मय जीवन के दिन ज्ञान धर्म में ही व्यतीत करती थी। नित्य प्रातःकाल चार बजे प्रभु स्मरण करना। फिर स्वाध्याय करके सूर्योदय के पश्चात् साधु मुनि जनों का सदुपदेश सुनना। इसके पश्चात् दान धर्म करना। दोपहरी में भी कोई धार्मिक ग्रन्थ पढ़ते रहना और सन्ध्या समय प्रति क्रमणादि कर अपना धर्म साधन करना, यही उसका ध्येय था। इस प्रकार सांसारिक सुखों से विरक्त हो वह अपना जीवन वैराग्य वृत्ति में ही बिताया करती थी। दुर्दैव का वायु तो वह ही रहा था जिस ने उस सौभाग्यवती के सौभाग्य सूर्य [पति देव] को असमय में ही छीन कर उस के जीवन को दुःख और अशान्तिमय बना दिया। किंतु इसी अवस्था में उस के सन्मुख एक और बड़ा हृदय द्रावक प्रसङ्ग आ उपस्थित हुआ। इसी गांव में उस समय यहां एक सम्पति शाली सत्तात्मक क्षत्रिय था जो अपनी तरुणाई के जोश में बड़ा कामान्ध बना फिरता था। उस की नीयत उस पर बिगड़ गई यदा कदा वह दुष्ट सतृष्ण नेत्रों से उसकी अपूर्व सुन्दरता को देखा करता। रंगूजी की अनुपम सुन्दरता और उसके सुडौल अंगों की कोमलता आदि देखकर उस पापी के मन में पाप वासना जाग उठी अपनी घृणित इच्छा को पूरी करने के लिये वह पापी रात दिन प्रयत्न में लगा रहता। इसे देख कर धर्म परायणा रंगूजी की क्रोध ज्वाला धधक उठी। उसकी दुष्टता देखकर उसको अपनी सतीत्वरक्षा की बड़ी चिंता हुई। एक दिन उसने विनयपूर्वक

उस क्षत्रिय से कहलवाया कि "आप क्षत्रिय हैं, और दूसरे मेरे पिता के तुल्य। ऐसी अवस्था में आप की यह चेष्टा अत्याचार में परिणत हो रही है जो आप को शोभा नहीं देती। दया कर अपनी इस कुवासना को छोड़ दीजिए।

परन्तु, मन्दमति क्षत्रिय के चित्त पर इस का कुछ भी प्रभाव नहीं हुआ। वह बराबर अपने प्रयत्न में लगा ही रहा। उसने उस को पाने के लिये भांति भांति के प्रयत्न किये। रंगूजी को उसने कई प्रकार के प्रलोभन दिये किन्तु उस सती ने अपने धर्म से विचलित होने की कल्पना तक नहीं की। जब अपने प्रयत्न में वे सफल न हुए। तो एक बार २-४ मनुष्यों को वहां भेजा और उन्हें सिखा दिया कि जैसे बने वैसे उसे यहां ले आओ। जब सती को सन्देह हुआ कि मेरे शील और धर्म को बिगाड़ने की चेष्टा हो रही है तो उस ने विचार किया कि अब क्या करूं ? यह दुष्ट तो अपनी दुष्टता से बाज न आवेगा और मैं अपने जीते जी अपने धर्म शील से भ्रष्ट हो जाऊं, यह असम्भव है। अन्त में उस नर पिशाच से किसी प्रकार छुटकारा न मिलते जान कर रंगूजी ने मकान के पिछवाड़े से गिर कर प्राण दे देने का विचार किया। वे दुमंज़िली खिड़की में से कूदती ही थीं, कि क्या देखती हैं कि एक मनुष्य ऊंट पर बैठे हुए खिड़की से लगकर कह रहा है कि:—"सती ! आ ऊंट पर बैठ जा, मैं तुझे जहां तू चाहे, छोड़ आऊं।" उसकी बातों से रंगूजी को विश्वास हो गया कि यह मेरा कोई रक्षक अवश्य है। वह शीघ्र ही ऊंट पर बैठ गई। क्षण भर में उसने देखा कि मैं अपने पीहर में आ गई हूं।

बहुत सम्भव है, लोगों को यह घटना शङ्का भरी प्रतीत हो। किन्तु, वास्तव में देखा जाय तो सच्ची पतिव्रताओं के लिए यह कोई असम्भव बात नहीं है। जिस रमणी ने अपने पति के सिवाय स्वप्न में भी किसी पर पुरुष का चिन्तवन न किया हो, जिसने मन, वचन, कर्म से आजन्म पति की सेवा में ही समय विताया हो, और जो अपना समस्त धर्म, कर्म पति के चरणों में अर्पित कर अपने को कृतार्थ समझती रही हो। उसके लिए यह कोई बड़ी बात नहीं है। क्यों कि सतीत्व में असाध्य को भी साध्य कर देने की शक्ति है। सतीत्व एक कठोर व्रत, कठिन तपस्या तथा विकट साधना है। इस साधना की साधिका को सिद्धि प्राप्त करने के लिए बड़ा कठिन संयम करना पड़ता है। सती अपने पति की जीवितावस्था में उसी में ईश्वर की सत्ता का अनुभव कर उसकी सेवा को ही सब धर्मों का सार तत्त्व समझती है। और उसकी मृत्यु के पश्चात् भी अपने शील व्रत का पालन करती हुई परमात्म चिन्तवन को अपना ध्येय बना लेती है। यह अवश्य है कि सतीत्व कोई सहज व्यापार नहीं है। वह घोर तपस्या है। उस तपस्या के फल से सती के हृदय में जिस अद्भुत आत्म शक्ति की सृष्टि होती है वह एक ईश्वरीय शक्ति है जिससे संसार के असम्भव से असम्भव कार्य भी सहज हो जाते हैं। अस्तु, वह मनुष्य उसको गांव से बाहर छोड़कर चला गया। इसके पश्चात् सती गांव में गई और उसने यहां आकर दीक्षा ले ली। इस प्रकार माता जी के द्वारा सती रंगूजी का वृत्तान्त सुनकर हमारे चरित नायक जी के हृदय में वैराग्य का सञ्चार हुआ। जब इनकी प्रवृत्ति अधिक

तर वैराग्य की ओर ही देखी तो एक दिन पूनमचन्द जी (चरित नायक जी के ससुर) इनकी माता से कहने लगे किः—"ओ" बुढी व्याण जी! मेरे जंवाई को दीक्षा दिलाती है। मुझे नहीं जानती कि मैं कौन हूं? मेरा नाम पूनमचन्द है। देखता हूँ मेरे जीते जी कौन इन्हें दीक्षा दिलाता है?" इस पर माता जी ने उत्तर दिया किः—"मैं बैठी हूँ इस को दीक्षा दिलाने वाली, यदि अपने पुत्र को दीक्षा दिलाकर तुझ को पूनमियाँ का अमावस्या बनाऊँ, तो मेरा नाम केसर है।" आदि और भी बातचीत हुई।

कुछ दिन और इसी प्रकार निकल गए। परन्तु, अब इन के ससुर को इनके भाग जाने की उतनी आशङ्का न रही थी। क्योंकि रहते २ कुछ समय हो गया था और कभी २ प्रायः गाँव में या गांव से बाहर भी जाते आते रहते थे। एक दिन आप सवारी भाड़े कर चुपके से वहां से नीमच को चल दिए। वहां आकर एक दिन किसी मृतक की दाह क्रिया में श्मशान गये। यह पहिला ही अवसर था जब इन्होंने मृतक की दाह-क्रिया देखी। इस पर से इनको विचार हुआ कि एक दिन अपने को भी इसी मार्ग से चलना होगा। आदि २ विचारों से आपको संसार से और भी विरक्ति हुई और शनैः २ आप की प्रवृत्ति ईश्वर-भक्ति में प्रवृत्त हुई।

इसके पश्चात् हमारे चरित नायक प्रतापगढ़ आये। उन दिनों वहां अमोलक ऋषि जी विराजते थे। आपने उनके दर्शन

माताजी के शब्दः—

म्हारा पुत्र ने दीक्षा देवाड़ी ने तने पूनमियाँ को अमावस्यो बणाऊँ तो म्हारो नाम केसर हैं।

चरित्र नायकजीके परमभक्त,
श्रीमान् जीवनसिंहजी साहिब हाकिम आसिन्द (मेवाड)
परिचय प्रकरण २३

किये तथा व्याख्यान सुने जिस से वैराग्य और भी दृढ़ हुआ वहां से एक पूंजणी (जिसे लघुजीव रक्षिका) की डांडी भी तैयार करा कर लाये। वहां से आप छोटी सादड़ी (मेवाड़) गये जहाँ मुनि श्रीलालजी महाराज और शंकरलालजी महाराज विराजते थे। उस समय श्रीलालजी महाराज को पूज्य पदवी नहीं थी। उनके दर्शन किये और उनके आदेश से चार रात्रि का आगार रख तेविहार (रात्रि भोजन) का यावज्जीवन त्याग कर दिया। चार रात्रि का जो आगार * रक्खा था वह माता से प्रकट नहीं किया। एक दिन रात्रि के समय आपने दही वड़े खा लिये। रात्रि भोजन का परित्याग कर चुकने के कारण उनको रात्रि में खाने से इन्हें स्वाद नहीं आया अच्छे नहीं लगे। इसका, और साथ ही अपनी प्रतिज्ञा का भी ध्यान आने पर इन्हें दुःख और पछतावा हुआ। घर पर आकर चुपके से हाथ धो रहे थे कि माता जी ने कहाः—बेटा! मालूम होता है आज तूने कुछ खाया है? किसी बात की प्रतिज्ञा करके उसको भंग न करना चाहिये अभी तेरी छोटी अवस्था है। अपने मन और इन्द्रियोंको वश में न रखेगा तो वे आगे चलकर स्वच्छन्द हो जायंगी और तेरे जीवन को कलुषित बना देंगी।

इस पर माता पुत्र में परस्पर वार्तालाप होकर संसार परित्याग की दृढ़ प्रतिज्ञा हो गई। अवशिष्ट आम के पेड़ तथा

[१] आगारः—भूल से किसी दिन रात्रि भोजन कर लिया जाय उसको कहते हैं। चार रात्रि का आगार रखने से यह मतलब है कि महीने में चार बार यदि रात्रि भोजन कर लिया जाय तो वह क्षन्तव्य हो सके।

ज़मीन और कुएं को बेच दिया। किसी का मकान गहने रख रखा था उससे रुपये लेकर मकान उसको सौंप दिया। माता ने कहाः—कि "चौथमल! तेरी बड़ी बहिन का विवाह किया था उस समय १५०) रु० दहेज में लिये थे। किसी प्रकार वे रुपये देदेने चाहिये" इस पर विचार कर वे रुपये दे दिये गये। एक दिन घर का नाई बाल बनाने को आया और बोलाः… जजमान! अब तो आपके न रहने से मेरे एक घर की कमी हो जांयगी। आपके घर से मुझे जो प्राप्ति होती थी वह अब न रहेगी। इस पर माता जी ने कहा किः…"बेटा! इस घर के नाई को भी कुछ न कुछ देना चाहिए।" बस, माता का इतना कहना था कि आपने कान में से सोने की मुरकियें निकाल कर नाई को दे दीं।

प्रकरण ८ वां।

दीक्षा और उसमें हुए विघ्न

सम्वत् १९५२।

उन्हीं दिनों वहां निम्बाहेड़ा निवासी खूबचन्द जी वैरागी नीमच आये। उन्होंने आप ही के यहां भोजन किया और वहीं ठहरे। जब चलने लगे तो कह गये कि—भाई तुम भी जल्दी ही आना। इधर दोनों मां बेटे नीमच से चलकर उदयपुर पहुँचे। वहां नन्दलाल जी महाराज का चतुर्मास था। दोनों मां बेटे वहां रह कर प्रतिक्रमण आदि सीखने लगे। कोई भोजन के लिये कह जाता तो उसके यहां जाकर भोजन कर आते। यदि कहीं का निमन्त्रण न आता तो बाजार से लाकर खा लेते। इस प्रकार कुछ समय तक वहां रह कर प्रतिक्रमण तथा दशवैकालिक के तीन अध्याय सीख गये।

फिर वहां से नये शहर (ब्यावर) आये। वहां चौथमल जी की सगी मौसी (मांसी) साध्वी रत्ना जी थीं। उन के दर्शन किये। वहां से बीकानेर गये। और बत्तीस शास्त्र की ज्ञाता गट्टू बाई के यहां ठहरे। वहीं महासती नन्दकुंवरि जी की साध्वियें भी थीं। उन्हों ने चौथमल जी से कहा कि कच्चे पानी को पीने का त्याग करले। इस पर आपने उत्तर में

यह कहा कि यह तो ठीक है परन्तु, रेल में निभना मुश्किल है। इस लिये कुछ समय बाद इसका त्याग करूंगा जब मैं यह समझलूं कि अब निभ जायगा। वहां से रवाना होकर भीना सर आये। वहां हज़ारीमलजी बांठिया ने कुछ शास्त्र दिये उन्हें लेकर वहां से देशनूर आये। वहां पूज्य हुकमीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय के रघुनाथजी महाराज और हज़ारीमलजी महाराज के दर्शन किये। सेवा में बैठे तो रघुनाथ जी महाराज ने कहा कि कौन हो? कहां रहते हो? और कैसे आये हो? उत्तर में चौथमल जी ने कहा कि वैरागी हैं। नीमच रहते हैं। दर्शन के लिये आये हैं। तब रघुनाथ जी महाराज ने कहा कि ठीक है, दीक्षा लो। क्या पहिले कुछ सीखा भी है? इस पर आपने कहा कि हां, प्रतिक्रमण और दशवैकालिक सीखा है। स्वामीजी ने कहाः—"अच्छा, सज्झा (स्वाध्याय) करो। इस पर चौथमल जी ने सज्झा की जो स्वामी जी को बड़ी प्रिय लगी। तब उन्हों ने कहा कि तुम हमारे पास ही दीक्षा लेलो। एकान्तर * करना होगा। यदि यह न सधे तो एक बार खाना"। तब आपने कहा कि दीक्षा तो नन्दलाल जी हीरालाल जी महाराज के पास लूंगा। इस पर स्वामी जी ने कहा कि वे तो बारह बजे आहार पानी से निवृत्त होते हैं फिर कब ज्ञान ध्यान करोगे इत्यादि। तब चौथमल जी ने कहा कि अभी तो मैं सन्तों की सेवा करूंगा यह कह कर वहां से विदा हुए और जयपुर गये वहां जौहरी काशीनाथ जी के यहां ठहरे। वहां से निम्बाहेड़ा

* एकान्तर—एक दिन भोजन करना और दूसरे दिन निराहार रहना तथा तीसरे दिन भोजन करके चौथे दिन निराहार रहना इसको एकान्तर कहते हैं।

(टोंक) गये जहां हीरालाल जी महाराज विद्यमान थे। उनके दर्शन कर शास्त्र, पात्र, ओघा पूंजणी वस्त्रादि लेकर जावद (ग्वालियर) गये । वहां पूज्य चौथमल जी महाराज और श्रीलाल जी महाराज विराजते थे। पूज्य चौथमल जी महाराज ने आप से कहा कि:— " तू म्हारा कने दीक्षा लई ले " इसी प्रकार श्रीलाल जी महाराज ने भी कहा । तव आपने विचार किया कि चौथमल जी महाराज तो वृद्ध हैं। और श्रीलाल जी महाराज वरावरी के । इस कारण दीक्षा तो इन्हीं से लेनी चाहिये। यहां पर यह लिखना अप्रासङ्गिक न होगा कि हमारे चरित नायक जी में एक गुण विशेषतः वाल्यावस्था से ही देखा जाता था। वह यह कि आप को देख कर कोई मनुष्य सहज ही आपकी ओर आकर्षित होजाता था । यह सव आपकी वुद्धिमता, चतुरता, शान्त-वृत्ति, धार्म्मिक-भाव आदिके कारण था। जो कोई भी आप से मिलता वड़े प्रेम और अनुराग से आगे चल कर आप में जिन गुणों का समावेश हुआ उनका आविर्भाव आप में लड़कपन से ही होगया था। तभी तो जैसा कि ऊपर कहा गया है प्रत्येक व्यक्ति आपको हृदय से चाहता था। उत्तम वस्तु किस को प्रिय नहीं होती सभी चाहते हैं कि वह मेरे पास आ जाय। अस्तु, ओघे, पात्र, जावद ही रख कर आप फिर निम्वाहेड़े आए। और वहां से हीरालाल जी महाराज के साथ २ केरी (टोंक स्टेट) यहां से फूलचन्द जी और मोगीदासजी चौथमलजी को दीक्षा देने की आज्ञा लेने को प्रतापगढ़ गये। सेठ जो गुमान-मल जी के यहां ठहरे। और चौथमल जी के ससुर पूनमचन्द जी को वुलवा कर आज्ञा के विषय में पूछा तो वे लाल नेत्र कर तमक कर वोले, कि खवरदार! याद रखना । यह मेरे

पास दो नाली बन्दूक है। एक नाल से गुरु को और दूसरी से शिष्य को परमधाम पहुंचा दूंगा। बस, इतना सुनते ही वे लोग वहां से चल दिए। जब केरी लौट कर आए तो सब वृत्तान्त कह सुनाया। इससे साधु चमके और पूज्य चौथमल जी महाराज ने दीक्षा देने से साफ इन्कार कर दिया। इसी समय हीरालाल जी महाराज ने वहाँ से मन्दसौर विहार किया। और इन से कहा कि तुम वहां दया पालो (अर्थात् वहां आओ) हम दीक्षा देंगे। पीछे चौथमल जी महाराज अपनी माता के साथ मन्दसौर आये और रहने लगे। उन दिनों आप ज़रा सफ़ेद पोश (जेन्टिलमैन) रहा करते थे। वहां गौतम जी बागिया नामक एक शास्त्र-वेत्ता श्रावक थे। वे चौथमल जी के रहन सहन को देखकर कहने लगे कि तुम से क्या साधुपना निभेगा। मेरे विचार से तो तुम्हारी यह चेष्टा व्यर्थ है। अच्छा, तो यही है कि तुम बुगली* में दूकान लगाकर निर्वाह करो। और भी कई लोग ऐसे थे जो प्रायः इन का उपहास कर कहा करते थे कि:...."चौथमल जी" जाओ साधु बन कर अपने ससुराल से भिक्षा ले आओ।" आदि एक दिन आपकी माता बोली कि बेटा, यदि तू कहे तो अपने पास जो ज़ेवर है उसे तेरे ससुर को दे आऊं। और उन से आज्ञापत्र लिखवा लाऊं ताकि तुझको दीक्षा देने में किसी को आपत्ति न हो। इस पर चौथमल जी सहमत हो गये। माता इनके ससुर के पास जो उस समय धर्मोत्तर थे, गईं। और उनसे जाकर कहा कि यह अपना कुल ज़ेवर मैं तुम्हें देती हूं। हमको दीक्षा मिल जाने के लिये तुम आज्ञा लिख दो।

---

*बुगली = मन्दसौर का एक बाज़ार।

इसको पूनमचन्द जी ने स्वीकार कर लिया। परन्तु उनसे ज़ेवर लेकर कपट किया। जो इस प्रकार है कि:—उन्होंने जो आज्ञापत्र लिखा उसमें लिख दिया कि मेरी व्याणजी अगर दीक्षा लें तो मुझे कोई ऐतराज़ नहीं। लेकिन अपने जंवाई के लिये मेरी आज्ञा नहीं है। उस पत्र में दो व्यक्तियों की साक्षी भी करवा दी। जब माता जी ने उस पत्र को कहीं और जगह जाकर पढ़ाया तो पूनमचन्द जी की कुटिलता पर उन्हें बड़ा विचार हुआ। किन्तु, क्या करती? वहां से ठाकुर साहब के पास गई और उन से सारा वृत्तान्त कह कर मन्दसौर आ गई। अपने पुत्र से कहने लगीं कि बेटा! अब कोई भय की बात नहीं है। मैं बहू के लिए सारा ज़ेवर तेरे ससुर को सौंप आई हूं। अब वह यह न कहेगा कि मेरा कुछ प्रबन्ध न किया इसके पश्चात् हीरालाल जी महाराज जावरे पधारे। तब माता और पुत्र दोनों वहां पहुंचे। किन्तु वहां भी ससुर की आज्ञा न होने से श्री संघने दीक्षा होने में आपत्ति की। फिर जब हीरालाल जी महाराज बड़लिये होते हुए ताल पधारे तो मार्गमें चम्बल नदी पर ठहरे साथमें चौथमल जी, आपकी माता और हज़ारीमल जी वैरागी भी थे। संयम का सामान सब साथ में था। पात्र भी मन्दसौर में रंगाये थे वे मौजूद थे। उनमें से एक पात्र आपने निकाल कर उस को नदी में फेंक कर तिराया और उसके द्वारा बड़ा कौतूहल किया। हीरालाल जी महाराज वहां से ताल उर्णेल होते हुए बोलिये (इन्दौर स्टेट) पधारे। वहां पर चौथमल जी व आपकी माता ने विचार किया कि अब तो संसार परित्याग कर देना चाहिये। इस प्रकार कहां तक फिरते रहेंगे यह चौथमल जी ने भी ठीक समझा, और माता से कहा कि

अपने उत्सव से क्या काम है। साधुपने से गरज़ है। उत्सव से केवल लोग दिखावा होता है। अब जब हमें संसार से विरक्त ही होना है तो फिर लोग दिखावे का ढोंग भी व्यर्थ है। आदि। इसके पश्चात् आपने केवल हाथ पैरों में मेंहदी* लगवाई। फिर आपके भावी गुरू हीरालालजी महाराज ने जब छावनी (झालरापाटन राजपूताना) की ओर विहार किया तो आप भी माता सहित साथ हो लिये। मार्गमें वोलिये से थोड़ी दूर पर एक नदी आती है जिसके एक किनारे की ओर वट वृक्ष है-उसके नीचे जाकर आपकी माता केसर वाई ने सम्वत् १६५२ की फाल्गुण शुक्ला ५ रविवार पुष्य (पुष्यक) नक्षत्र में आपको साधुवेष धारण कराया। इसके पश्चात् आपको हीरालाल जी महाराज के सन्मुख खड़े किये और प्रार्थना की कि आपको शिष्य रूप भिक्षा देती हूँ इसे स्वीकार कीजिये मुनि हीरालाल जी महाराज ने शिष्य की परीक्षा तो कर ही ली थी। अतः भिक्षा स्वीकार कर दीक्षा देदी। इसके पश्चात् आप जब वहां से विहार करते पचपहाड़ पधारे तो पीछे से केसर वाई भी वहां आगई और इस प्रकार हमारे चरित नायक जो की सातवें दिन (अर्थात फाल्गुण शु० १२ सम्वत् १६५२) को खूब समारोह के साथ बड़ी दीक्षा हुई।

---

* दीक्षा लेने से पहिले जिसको दीक्षा दी जाती है उसके मेंहदी लगाई जाती है। और इसी प्रकार के और भी उत्सव आदि किये जाते हैं जैसा कि विवाह के समय होता हैं।

प्रकरण ९ वां

संवत १९५२
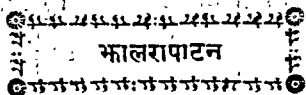
झालरापाटन

धार्मिक ग्रन्थ परिचय ।

इसके अनन्तर नये शिष्य और गुरु (हीरालाल जी महाराज) छावनी (झालरापाटन) पधारे। उधर केसरबाई पचपहाड़ से विदा होकर जावरे गई। वहां आपने भी फूंदाजी आर्या जी महाराज से दीक्षाली। हीरालाल जी महाराज जब छावनी का चतुर्मास स्वीकार कर वापिस जावरे पधारे और फिर नये शिष्य चौथमल जी महाराज तथा हज़ारीमल जी महाराज (जिन्हों ने चौथमलजी महाराज के पश्चात् दीक्षा लीथी)के साथ सम्वत १९५३का चतुर्मास छावनी किया। इस चतुर्मास में चौथमलजी महाराज ने दशवैकालिक के शब्दार्थ का अध्ययन किया, अणुत्तरोववाई वांची और कुछ थोकड़े* भी सीखे। आप अपने गुरु की सेवा भक्ति में बिल्कुल त्रुटि न होने देते थे। ज्ञान भी विनय पूर्वक सीखते थे, और अपना अध्ययन भी नियमित रूप से कर रहे थे।

---

* तत्वों का समूह।

प्रकरण १० वां।

सम्वत १९५४—५५

रामपुरा और बड़ी सादड़ी (मेवाड़)

छावनी (झालावाड़) का चतुर्मास शान्ति और आनन्द पूर्वक पूर्ण होने पर हीरालाल जी महाराज ने वहां से विहार किया। उस समय आपके साथ चैनराम जी महाराज तथा कालूरामजी महाराज भी थे। दो (तोंग*) किए। चैनराम जी महाराज और चौथमलजी महाराज छोटे २ गांवों में होते हुए कोटे पधारे। तब चैनराम जी महाराज पूछने लगे कि चौथमल जी, व्याख्यान कौन वांचेगा? इसका मुझे बड़ा विचार है। तब आपने उत्तर दिया कि मैं वांचूंगा। वहां आपने दो व्याख्यान दिये। इसके पश्चात् हीरालाल जी महाराज भी पधार गये। कुछ दिन के पश्चात् वहां से फिर हीरालाल जी महाराज ने विहार किया तो श्रावक लोग कहने लगे कि नये महाराज (चौथमल जी महाराज) के मुख से एक व्याख्यान सुनने की हमारी और इच्छा है। आप की व्याख्यान शैली वहीं से ऐसी तीव्र और हृदय ग्राही हो गई

---

* विभाग।

थी। तभी तो श्रावकों की इच्छा और व्याख्यान सुनने की हुई। परन्तु गुरु देव की सेवा से विलग न रह सकने के कारण आप भानपुरा, रामपुरा, मणांसा और नीमच होते हुए जावरे पधारे। वहां कुछ दिन ठहर कर फिर सम्वत् १६५४ का चतुर्मास आपने गुरुदेव के पास रामपुरे में आकर किया। इस चतुर्मास में आप ने अपनी बुद्धि के अनुसार ज्ञान ध्यान सीखा। और फिर चतुर्मास की समाप्ति पर गुरु के साथ ही जावरे पधारे। जावरे अधिक आने जाने का प्रयोजन यह था कि वहां हमारे चरित नायक जी के परदादा गुरु (रतनचन्द जी महाराज) विराजते थे। उनके दर्शन तथा सेवा भक्ति कर आपने सम्वत् १६५५ का चतुर्मास गुरुदेव के साथ बड़ी सादडी (मेवाड) में किया। वहां भी आप ने ज्ञान ध्यान की खूब वृद्धि की।

प्रकरण ११ वां,

सम्वत १९५६—५७—५८

जावरा रामपुरा, मंदसौर
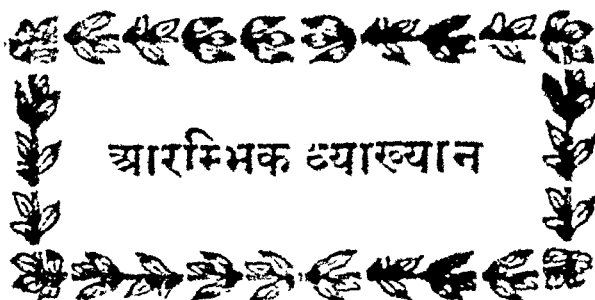
आरम्भिक व्याख्यान

बड़ी सादड़ी का चतुर्मास पूर्ण होने पर वहां से निम्बाहेड़ा और चित्तौड़ होते हुए पारसोली (मेवाड़) पधारे। वहां राव जी साहब रत्नसिंहजी जो (श्रीमान् मेवाड़ाधीश हिन्दवा सूर्य्य) महाराणा साहब के सोलह जागीरदारों में से एक थे। जैन धर्म्म से परिचित थे और उसमें आप की श्रद्धा भी थी। जैन मुनियों को बड़े आदर और भक्ति की दृष्टि से देखते और उनका सन्मान करते थे। वे प्रायः कहा करते थे कि जैन साधुओं जैसा त्याग और वृत्ति अन्यत्र नहीं पाई जाती।

रावजी साहब के हृदय में जैन-धर्म के प्रति इतनी श्रद्धा और भक्ति तपस्वी महाभागी रतनचन्द जी महाराज, गुरु जवाहरलालजी महाराज, पन्डित मुनि श्री नन्दलाल जी महाराज, सरल स्वभावी कविवर हीरालाल जी महाराज की सत्सङ्गति के कारण हुई थी।

उपर्युक्त मुनियों का रावजी पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे स्वयम् कहा करते थे कि यदि मुझे कोई लकड़ी वा पत्थर से मारभी दे तो मैं उससे बदला लेने की चेष्टा नहीं करूंगा और न कुछ दण्ड ही दूंगा। शिकार खेलने का विचार तो उनके हृदय से बिल्कुल निकल ही गयाथा। यदि उनको जैन-श्रावक की पदवी दीजाय तो भी अनुचित न होगा। क्योंकि उनके आचार विचार वैसे ही थे जैसे एक श्रावक के होने चाहिये। एक दिन रावजी साहब ने चौथमल जी महाराज से शिक्षा के तौर पर कुछ कहा कि आपकी अवस्था अभी थोड़ी है अतएव जितना भी ज्ञान उपार्जन किया जासके, कीजिये। इसके साथ ही गुरु की सेवा और भक्ति में तत्पर रहना भी आपका ख़ास लक्ष्य होना चाहिये। आपने दुपहर और सायंकाल को जो व्याख्यान दिया बहुत ही उत्तम था। उसको सुन कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है। और भविष्य के लिये पूर्ण विश्वास होगया है कि यदि आपकी यही गति रही तो गुरुदेव के शुभाशीर्वाद से समय पाकर जैन सिद्धान्त के धार्मिक क्षेत्र में आपका एक ख़ास और अत्यन्त आदरणीय स्थान होगा आदि वहां से विहार कर आप नारायण गढ़ पधारे। वहां नृसिंहजी महाराज का स्वास्थ्य अच्छा नहीं था अतः गुरुदेव (हीरालालजी महाराज) आप को उनकी सेवा में छोड़ गये। जब नृसिंहजी महाराज का स्वास्थ्य ठीक होगया तो आप वहां से विहार कर मन्दसौर पधारे। एक दिन भूरा मगनीराम जी महाराज ने आपसे कहा कि चौथमल जी आज तुम व्याख्यान वांचो। इसी समय वही शास्त्र वेत्ता मोतीलाल जी बागिया जो चौथमल जी महाराज से पहिले कहा करते थे कि तुम में साधु होने के लक्षण नहीं हैं, साधुस्थित उपाश्रय में आकर

पूछने लगे कि आज व्याख्यान कौन बांचेगा ? उत्तर में कहा गया कि चौथमल जी बांचेंगे। यह सुनकर "ठीक" कह कर व्याख्यान—मण्डप में जाकर बैठ गये। गौतमजी बागिया भगवती पन्नवणादि के सूक्ष्म तत्त्वों के ज्ञाता थे। उनकी उपस्थिति में क्या मजाल जो कोई ह्रस्व दीर्घ तक की अशुद्धि कर जाय। बहुत से साधु तक उनके सामने सूत्र बांचने में झिझका करते थे। किन्तु, चौथमल जी महाराज ने धारा प्रवाह व्याख्यान दिया। और धड़ाके से आचाराङ्ग सूत्र का * भावार्थ समझाया। आखिर उक्त श्रावक जी को कहना पड़ा कि- "चौथमलजी महाराज! आपने थोड़े ही समय में अच्छा परिश्रम किया और खूब योग्यता सम्पादन की हम ऐसा नहीं जानते थे कि आपके व्याख्यान की शैली इतनी हृदयग्राही और प्रभावोत्पादक होजायगी। वैराग्यावस्था में आपसे मैंने जो कुछ शब्द कहेथे उनके लिये मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ।"

कुछ दिन वहां निवास कर आप फिर जावरे पधारे और गुरुवर जवाहरलाल जी महाराज आदि की सेवा में रहने लगे। जब चतुर्मास निकट आया तो गुरू जवाहर लालजी महाराज, नन्दलालजी महाराज आदि सब ने हमारे चरित नायक को ही वहां के लिये उपयुक्त और आवश्यक समझ कर रक्खा। इस प्रकार संवत १९५६ का चतुर्मास आप का वहीं (जावरे) हुआ। चतुर्मास में आपने श्रावक बालकों को सामायिक, प्रतिक्रमण, थोकड़े, स्तवन आदि सिखाये। इसी

---

* इस सूत्रका अन्वय, और भावार्थ करना तथा सन्धि और समास की व्याख्या करना अतीव कठिन है।

अवधि में पण्डित नंदलालजी महाराज ने त्रिस्तुतिक * राजेन्द्र सूरिसे धार्मिक चर्चा की। जो प्रकाशित होचुकी है। यही मुनि श्री व्याख्यान फरमाते और पर्युषण में प्रथम चौथमलजी महाराज अन्तगढ़ सूत्र का भावार्थ फरमाते। और पश्चात् नन्दलाल जी महाराज उपदेश फरमाते। इस प्रकार जवाहिरलाल जी महाराज से चौथमल जी महाराज ने तत्त्व ज्ञान के रहस्यों का बोध प्राप्त किया।

जावरे का चतुर्मास पूर्ण होने पर चौथमल जी महाराज वहां से विहार कर निम्बाहेड़े पधारे क्योंकि वहां पर आपकी मांसी जी रत्ना जी आर्याजी अस्वस्थ थीं, और वे आपके दर्शन की इच्छुक थीं। वहां कुछ दिन ठहर विहार करते हुए कुकड़ेश्वर (होल्कर स्टेट) पधारे। उधर गुरुवर हीरालाल जी महाराज भी कुकड़ेश्वर पधार गये थे। वहां जड़ावचन्द जी छगनलाल जी के पास आठ वर्ष का एक पृथ्वीराज नाम का बालक था। उसके लिये जड़ावचन्दजी आदि श्रावकों ने गुरुवर हीरालाल जी महाराज से प्रार्थना की कि इस लड़के को दीक्षा देने की कृपा करें। इस पर हीरालाल जी महाराज ने सब सन्तों की उपस्थिति में यह उत्तर दिया कि दीक्षा तो देदें परन्तु यह अभी बच्चा है इसकी सार सम्हाल कौन करेगा? तब चौथमल जी महाराज बोले कि सार सम्हाल तो हम करेंगे। शिष्य बनाने के लिये आपकी इच्छा हो उन्हीं के बनावें। पश्चात् पृथ्वीराज से पूछा कि दीक्षा लोगे? तो उसने उत्तर में कहा कि "हां हां" इस प्रकार शुभ मुहूर्त देख कर पृथ्वीराज को दीक्षा दे दी

* तीन थुई मंदिर मार्गियों के अगुगण्य।

गई और उसको गुरुदेव ने चौथमल जी महाराज ही का शिष्य बना दिया। उसके पश्चात् वहां से विहार कर रामपुरे पधारे। गुरुवर के साथ रह कर सम्वत् १९५८ का चतुर्मास रामपुरे किया। इस अवसर पर ज्ञान ध्यान में और भी वृद्धि हुई। कई बालकों को तत्वज्ञान सिखा कर होशियार किया। समय २ पर व्याख्यान भी दिये।

रामपुरे का चतुर्मास पूर्ण होने पर वहां से विहार कर हमारे चरितनायक मन्दसौर पधारे। मार्ग में व्याख्यान के द्वारा अनेक त्याग और प्रत्याख्यान हुए। सम्वत् १९५८ का आपका चतुर्मास स्वतन्त्र रूप मन्दसौर में हुआ एवम् गुरु जवाहरलाल जी महाराज तथा हीरालाल जी महाराज का झनकपुरा मन्दसौर में। चौथमल जी महाराज के व्याख्यान चार मास तक बराबर धड़ाके से शहर में होते रहे। जनता सुन २ कर चकित होती थी कि देखो पूर्व जन्म के पुण्य के व्याख्यान की कैसी उत्तम शक्ति आगई। आदि।
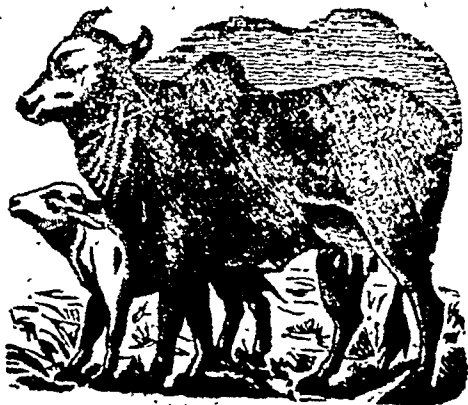
श्रीमान् तुकोजीराव बापु साहिब महाराज पँवार

के. सी. एस. आई.

देवास मालवा. (सेन्ट्रल इन्डिया)

परिचय-प्रकरण २२

प्रकरण १२ वां

संवत् १९५९ नीमच।

प्रसिद्ध वक्ता।
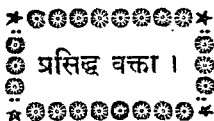
मन्दसौर का चतुर्मास पूर्ण होने पर वहां से गुरू महाराज व चौथमल जी महाराज विहार कर खाचरोद पधारे। वहां चौथमल जी महाराज, गुरू जवाहरलालजी महाराज की सेवा में रहे। नन्दलालजी महाराज हीरालालजी महाराज आदि मुनिवर वहां से धार इन्दौर की ओर पधारे। और वहां से विचरते हुए खाचरोद ही में सब सन्तों का संगठन होगया। वर्षा के दिन भी निकट आगयेथे अतः इन्दौर से श्री संघ की विनती, धार से मोतीलाल जी सेठ आदि श्री ंघ, और उज्जैन से श्रीयुन हजारीमल जी आदि श्रीसंघ चतुर्मास के लिए अपनी २ प्रार्थना लेकर खाचरोद आये। इसमें उज्जैन श्री संघ ने खास तौर पर चौथमलजी महाराज के लिए प्रार्थना की किंतु, उनके भाग्य में यह नहीं था कि आप की पीयूष वाणी से लाभ उठावें। गुरुवर ताल (जावरा स्टेट) के लिये आज्ञा देने वाले थे इतने ही म बड़ी सादड़ी (मेवाड़) का श्री संघ खाचरोद आगया। तब चौथमल जी महाराज ने विचार किया कि ताल में श्रावकों के घर थोड़े हैं और सादड़ी में अधिक। अतः वहां व्याख्यान में अधिकांश लोग आवेंगे और

ज्ञान प्रचार का अच्छा सुयोग रहेगा। यह सोचकर आप ने गुरुवर से सादड़ी का चतुर्मास करने की आज्ञा मांगी जिसे गुरुदेव ने स्वीकार किया। आप के साथ नवदीक्षित हज़ारी मल जी महाराज को भी भेजे। वहां से आप दोनों ने सादड़ी (मेवाड़) विहार करने का विचार किया तो हज़ारीमल जी महाराज के पांव में नहरू का छाला पड़ गया तब आप ने गुरुवर से कहा कि इनके पैर से नहरू निकलता दीखता है यदि मार्ग में चलने से अधिक सूजन आगई तो बड़ा कष्ट होगा, इस पर गुरुवर ने फरमाया कि ऐसा हो तो कहीं भी चतुर्मास कर लेना। क्योंकि मार्ग में कई बड़े २ गाँव आते हैं। इस प्रकार वहां से विहार करते हुए मन्दसौर पधारे शहर मन्दसौर में दो रात्रि से अधिक नहीं कल्प सकता था अतः खानपुरे में निवास किया। जब शहर में यह सूचना हुई तो वहाँ के निवासी दर्शनार्थ आये और प्रसिद्ध श्रावक श्रीयुत पन्नालाल जी कीमती ने महाराज श्री से शहर में पधारने के लिये प्रार्थना की। आपने फरमाया कि दो रात्रि से अधिक शहर में कल्पता नहीं है। इस पर पन्ना-लाल जी ने निवेदन किया कि केवल दो रात्रि के लिये ही पधारिये। आख़िर उनके विशेष आग्रह करने पर आप शहर में पधारे और दो व्याख्यान दिये जिनका ऐसा प्रभाव पड़ा कि सुप्रसिद्ध श्रावक श्रीमान् पन्नालालजी कीमती तथा उनकी धर्मपत्नी दोनों ने व्याख्यान मण्डप में खड़े होकर हमेशा के लिये शील—व्रत धारण किया। इसके अतिरिक्त अन्यान्य लोगों पर भी अच्छा प्रभाव पड़ा। वहां से विहार कर आप नीमच पधारे। वहां जैन तथा अजैन जनता को उपदेश दिया। वहां आप के उपदेश का ख़ूब प्रभाव पड़ा। एक १८

चर्य के ओसवाल बालक हुकमचन्द ने आकर दीक्षा लेने की प्रार्थना की। उससे महाराज श्री ने फरमाया कि हम यहां तो नहीं ठहर सकते। बड़ी सादड़ी चतुर्मास करेंगे सो तुम भी साथ में दया पालो * यह कह कर वहां से विहार किया तो मार्ग में एक काले नाग ने आड़े आकर मार्गावरोध कर दिया। तब आपने सोचा कि सादड़ी जाने में कुछ लाभ नहीं मालूम होता। किन्तु फिर भी वहां से चलकर बगाण (नीमच) रात रहे। जहां बड़े ज़ोर की वर्षा हुई। वहीं पर हजारीमल जी महाराज के पैर में नहरू ने ज़ोर दे दिया। इस से आपको चलते समय बड़ा कष्ट होने लगा। नीमच जाने का विचार करही रहे थे कि इतने ही में नीमच से श्रीमान् पन्नालालजी चौधरी तथा मन्नालाल जी राठोड़ आदि श्रावक वहां पर आकर कहने लगे कि नीमच पधारिये। इस पर महाराज श्री ने फ़रमाया कि आप लोग क्यों आये हम तो आ ही रहे थे। सब को साथ लेकर नीमच पधारे वहीं चतुर्मास हुआ और बड़ा आनन्द रहा। कई श्रावकों को आपने ज्ञान ध्यान से प्रतिबोधित किये। जनता व्याख्यान सुन २ कर चकित और अचम्भित होगई। शहर में सब जगह यही चर्चा होने लगी कि हम नहीं समझते थे कि चौथमल जी दीक्षा लेकर ऐसे होशियार और प्रसिद्ध व्याख्याता हो जायंगे। हम तो वैराग्यावस्था में इनकी हंसी किया करते थे। बल्कि यहांतक कहा करते थे कि लोगों को ठगने का उपाय रच रहे हैं आदि। परन्तु यह तो बात ही कुछ और हो गई। इस प्रकार संवत १९५९ का चतुर्मास नीमच में बड़ी शान्ति और आनन्द से व्यतीत हुआ

* साथ चलो।

इसी अवधिमें वैरागी हुकमीचन्दजी को प्रतिक्रमणादि भी सिखा दिये। तब उनकी दीक्षा के लिये नीमच श्री संघ ने—महाराज श्री से प्रार्थना की जिसे आपने स्वीकार किया। वैरागी हुकमीचन्दजी के श्री संघ ने विनौरा विठाया। और दीक्षा दिलाने का उपक्रम प्रारम्भ किया। किन्तु, जैसा कि प्रायः देखा—जाता है शुभ-कार्य में विघ्न आ ही जाते हैं, यह कार्य भी निर्विघ्नता से कैसे सम्पूर्ण हो सकता था। कवि ने क्या ही ठीक कहा है:—"श्रेयांसि बहु विघ्नानि" इनकी दीक्षा में रोक लगाने वाला कोई कुटम्बी न मिला तो राज की ओर से सूबे साहिब ने दीक्षा होना रोक दिया। इससे श्री संघ में बड़ी खलबली मची। श्रीमान् पन्नालालजी चौधरी ने कहा कि सूबा साहब हुकम नहीं देंगे तो लश्कर (गवालियर) जाकर ले आऊंगा। ऐसा निश्चय करके स्टेशन पर आये। सूबा साहिब भी कार्य वश कहीं जा रहे थे वहां उनकी पन्नालाल जी से भेंट हुई। सूबा साहिब ने पन्नालाल जी से पूछा कि आप कहां जा रहे हो? तब उत्तर में कहा कि:—"लश्कर दीक्षा का हुक्म लेने को" इस पर सूबा साहिब ने स्वयं ही कह दिया कि जाओ, मेरा हुक्म है कि खुशी के साथ उस वैरागी को दीक्षा दी जाय। बस। पन्नालाल जी लौटकर शहर में आ गये और हाथी के हौदे पर विठला हुकमीचंद जी को मंगसर वुदि १ सम्वत १९५९ के दिन बड़े समारोह से दीक्षा दी गई।

प्रकरण १३वां

संवत् १९६० नाथद्वारा

अस्वस्थता और धारा प्रवाह व्याख्यान

श्रोताओं की अपार भीड़

नीमच से विहार कर छावनी जावद होते हुए आप कर्णेरे पधारे। मार्ग के सब स्थानों में व्याख्यान सुनने को जैन और अजैन सभी लोग वहुत अधिक संख्या में आते थे। अनेकों ने कई प्रकार के त्याग—प्रत्याख्यान किये। वहां से विहार कर महाराज श्री ठाणां ३ से* भट्ठार्णे पधारे। वहां भी सब स्थानों की भांति जैन, अजैन, मज़दूर, काश्तकार वहुत वड़ी संख्या में सम्मिलित हुए। वहां के रावजी साहव ने भी कई वार व्याख्यान में योग देकर लाभ लिया। महाराज श्री की मुक्त—कण्ठ से प्रशंसा की। वहां से विहार कर आप केरी, निम्वाहेड़े, नकुम, भदेसर और सावे होते हुए चित्तौड़ पधारे। वहां भी व्याख्यान का वड़ा आनन्द आया इन दिनों महाराज श्री निर्वल होगये थे। और होते जा रहे थे कारण कि आपको सम्वत् १९५७ से पेट में फोये+ की तकलीफ़ थी। इस से स्वास्थ्य प्रायः विगड़ा हुआ रहा करता था। उन दिनों वहां किसी रोगी का इलाज करने को वोंसडे से एक नाई आता था। उसको आपने अपना पेट

---

* तीन साधुओं से   + रोग विशेष।

दिखा कर एक दवा ली। और उसका तीन दिन तक सेवन किया, जिस से आपको बहुत कुछ लाभ प्रतीत हुआ। इस पर नाई ने कहा कि दो रोज़ तक और ले लीजिये तो आपका यह रोग समूल नष्ट होजायगा। परन्तु आप बहुत अशक्त होगये इस लिये बोले कि अब मुझ से यह दवा नहीं ली जाती। इस पर उस नाई ने कहा कि खैर दवा न लेना चाहें तो मत लीजिये। इतना अवश्य करते रहें कि भोजन कर चुकने के पश्चात् बाईं ओर कुछ मलना (मालिश करवाना) और उसी बाज़ू लेट जाना। ऐसा करने से भी आपका यह रोग जाता रहेगा। आपने कुछ दिन तक ऐसा ही किया तो आपका वह उदर रोग समूल नष्ट होगया। वहाँ से आप कपासण होते हुए सारोल पधारे। वहां प्रताप बाई, धर्म पत्नी रूपचन्दजी सियाल, को २० वर्ष अन्न जल ग्रहण किये होगये थे। न उस को भूख लगती थी और न प्यास और घर गृहस्थी के सब कार्य्य वह बराबर किया करती थी। अस्तु आपने इस के पश्चात् विहार करने का विचार किया कि किधर चलना चाहिये। यहां से नाथद्वारा सन्निकट है और दूर २ के लोग वहां आते हैं यदि वहां श्वेताम्बर स्थानक वासियों के भी घर हों तो वहां चलना ठीक है। किसी जैन श्रावक से पूछने पर विदित हुआ कि वहां श्रावकों के घर हैं। तब महाराज श्री विहार कर नाथद्वारे पधारे। बाज़ार में पहुंचे तो सब श्रावकों ने अपनी २ दुकान पर खड़े हो होकर आपको वन्दना की। महाराज श्री ने पूछा कि निवास स्थान कहां है तब उत्तर मिला कि द्वारकाधीश की खड्ग पर। तब महाराज श्री वहीं जाकर ठहरे और दूसरे दिन प्रातः काल से व्याख्यान शुरू किया। वहां आरम्भ में केवल जैन सम्प्रदाय के मनुष्य आते थे। व्याख्यान स्थल भी

बीच बाज़ार में नहीं था। इन सब कारणों से श्रोताओं की उपस्थिति में वृद्धि नहीं हुई। इतना अवश्य था कि साम्प्रदायिक लोग व्याख्यान सुन २ कर लट्टू हो जाते थे। व्याख्यान का स्थान शहर के एक कोने में था जिससे अधिक लोग लाभ नहीं ले सके थे अतः यह आपको ठीक नहीं जचा। तब एक दिन आपने श्रोताओं से कहा कि व्याख्यान बाज़ार में होना चाहिये ताकि और २ लोगों को भी लाभ हो। इस पर लोगों ने कहा कि:—महात्मन्! बाज़ार का नाम न लीजिये यह तो विष्णुपुरी है। यहां प्रथम तो अजैन लोग आयँगे नहीं और यदि आगये और कोई कुछ प्रश्न कर बैठा तो आप क्या उत्तर देंगे। आपको दीक्षा लिये हुए थोड़ा ही समय हुआ है। इस लिये यहीं पर व्याख्यान देना अच्छा है इस पर महाराज श्री ने बेधड़क होकर उन से कहा कि:—श्रावको! हम अलग विचरने को आये हैं तो गुरु महाराज की कृपा से किसी के भरोसे नहीं। तुम को इन बातों से क्या प्रयोजन? हम सब कुछ विचार कर व्याख्यान देंगे और जो व्यक्ति जैसा प्रश्न या शङ्का करेगा उसको उसी के अनुसार उत्तर देंगे और उसका समाधान करेंगे। किन्तु इसका भी श्रावकों के हृदय में कुछ प्रभाव न हुआ। उदयपुर निवासी राजमलजी ताकरियां ने महाराजश्री से प्रार्थना की मैं अच्छा व्याख्यान-स्थल बताता हूं। महाराज श्री ने फ़रमाया कि बतलाओ, और वहां बैठकर व्याख्यान सुनो। तब राजमल जी ने लिलिया कुण्ड की जगह बतलाई। महाराज श्री भी पुट्ठा* लेकर लिलिया कुण्डकी पेड़ी पर जा विराजे। और सन्मुख ही राजमल जी व्याख्यान सुनने को बैठ गये। व्याख्यान आरम्भ होने पर श्रावकों को विदित

* शास्त्रादि व्याख्यान की सामग्री।

हुआ तो उन्होंने इसे ठीक नहीं समझा। उन्हें भय होने लगा कि अब न जाने क्या होगा। आखिर किसी प्रकार १०—१२ श्रावक और ३—४ श्राविकाएं व्याख्यान में आईं, लगभग २०-२५ अजैन भी आये। उस दिन का व्याख्यान अजैनों ने बड़ी रुचि और ध्यान से सुना और वह उन्हें बड़ा प्रिय मालूम हुआ। दूसरे दिन १००--१५० अजैन लोग आये। यह देख कर श्रावकों का भय दूर हुआ। और अब वे बड़ी प्रसन्नता से अधिकाधिक संख्या में योग देने लगे। केवल पांच व्याख्यान होते न होते जैन अजैन श्राताओं की संख्या ८०० होगई, और तेरहवें व्याख्यान में यही बढ़कर १३०० होगई। अब व्याख्यान भी शहर में होने लगा था। जैन श्रावकों की सख्या १२५ से अधिक न थी शेष सब लोग अजैन थे जो प्रति दिन महाराज श्री के व्याख्यान का लाभ ले रहे थे। शहर कोतवाल राज कर्म्मचारी आदि भी व्याख्यान सुनने को आते थे और श्री नाथ जी के भक्त लोग भी योग देते थे। यही नहीं, अपने घर से गोचरी तक कराते थे। इस प्रकार सारा नगर और सब धर्म के लोग आपको प्रेम और श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे। एक दिन व्याख्यान में किसी व्यक्ति ने प्रश्न किया जिसका महाराज श्री ने यथोचित उत्तर दिया। दूसरे दिन फिर वह कुछ दूर खड़ा होकर भरे व्याख्यान में बोला कि "अये लोगों! गीता में कहा है कि आत्मा के टुकड़े नहीं होते इस लिये! दया! दया कह कर लोगों के कान नहीं फोड़ना चाहिये"। इस पर महाराज श्री ने गीता में से ही "अहिंसा परमो धर्म्मः" का निरुपण कर सिद्ध किया कि "दया करना मनुष्य का परम धर्म्म" है। यह बात चारों ओर फैल गई। राज्य कर्मचारी

कहने लगे कि उस व्यक्ति ने जो यह कहा कि आत्मा मारी नहीं मरती तो इसका उत्तर तो साधारण हैं। इसके दो चार ठोक दी जायं, बस इसकी परीक्षा अभी होजायगी कि आत्मा मारने से मरती है। क्या और साथ में यह भी कि उसे कष्ट पहुंचता है या नहीं।

इधर व्याख्यानों से सारे शहर में महाराज की बड़ी प्रशंसा और जयध्वनि होने लगी इसके पश्चात् कुछ दिन और वहां ठहर कर-और व्याख्यान-देकर जब आपने विहार किया तो सारे नगर निवासी जैन, अजैन, हिन्दू-मुसलमान आपको विदा करने के लिये आये और उसी समय बड़े प्रेम और आग्रह से चतुर्मास का निमन्त्रण श्री चरणों में रख दिया। वहां से विहार कर कोठारिये पधारे जहां अच्छा उप दर्शनीय उपकार हुआ। गंगापुर श्री संघ का संदेशा आया कि यहां पर विपक्षी पूज्य आये हुए हैं अतः महाराज श्री के पधारने की अत्यन्त आवश्यक्ता है! और यहां की अजैन प्रजा भी हृदय से इच्छुक है कि नाथ द्वारे वाले महाराज श्री का यहां पदार्पण हो तो हमें बड़ा आनन्द लाभ हो। इस पर आप वहां से विहार कर गंगापुर पधारे जहां कर्मचद जी महाराज आदि विराजे हुए थे। उनके निकट ही आप भी तीन साधुओं सहित उतर गये। आपका पदार्पण होते ही गांव में बिजली की तरह खबर दौड़ गई कि नाथ द्वारे वाले चौथमल जी महाराज यहां पधारे हैं। उस रोज़ कर्मचन्द जी महाराज का व्याख्यान समाप्त हो जाने पर अजैन लोगों ने कुछ प्रश्न किये तो आप ने उन को उत्तर दिये और गीता तथा श्री मद् भागवत् के प्रमाणों से उनकी शंका समाधान की। सब लोगों के हृदयों में यह बात बैठ गई कि ये साधु बड़े चमत्कारी हैं। यदि

इन्हीं का व्याख्यान हो तो अति उत्तम । सबने मिलकर आप से प्रार्थना की । जिसे आपने सहर्ष स्वीकार कर लिया । व्याख्यान आरम्भ हुआ । श्रोताओं की संख्या दिन प्रति दिन बढ़ने लगी । रात्रि में भी व्याख्यान देना शुरू कर दिया । श्रोताओं से सारा बाज़ार ठसाठस भर जाता था । और लोग बड़े ध्यान से आप का उपदेशामृत पान करते थे । उस मार्ग से होकर ठाकुर जी का विमान जाया करता था । एक दिन जब कि विमान आया तो श्रोताओं के कारण वहां विमान निकल जाने तक को जगह नहीं मिली । सारा रास्ता रुका हुआ था । इस कारण लोग विमान को दूसरे रास्ते से घुमाकर लेगये । धार्म्मिक ऐक्यता और मेल का यह भी एक प्रमाण है । और उसका श्रेय हमारे चरित नायक जी को ही है इसके पश्चात् महाराज श्री वहां से विहार कर चित्तौड़ होते हुए संजीत (जावरा) पधारे और वहां गुरू श्री हीरालाल जी महाराज का दर्शन लाभ किया । वहां गुरु देव की सेवा में तपस्वी हज़ारीमल जी महाराज छाछ के आधार से तपस्या कर रहे थे । उसका पारणा* भी वहीं हुआ और गुरु श्री ने कस्तूरा बाई को सम्वत् १९६० की वैशाख सुदि ८ के दिन दीक्षा भी दी । इसके पश्चात् चौथमल जी महाराज गुरुदेव के साथ वहां से विहार कर जावरे पधारे । वहां नाथ द्वारे का श्री संघ महाराज श्री के चतुर्मास के लिये फिर प्रार्थना लेकर आया । यह देख कर जावरा के श्री संघ को बड़ा आश्चर्य हुआ रतलाम निवासी तत्त्वज्ञ श्रीमान् सेठ अमीरचन्द जी साहब पीतलिये ने पूछा कि महाराज क्या नाथ द्वारे

---

* पालना । उपवास के अनंतर भोजन करना ।

में भी जैनियों के घर हैं? इस पर नाथ द्वारा श्री संघ ने उत्तर दिया कि हां हैं तो सही परन्तु थोड़े।

महाराज चौथमल जी के लिये तो हमारा इसी लिये आग्रह है कि नाथ द्वारे के जैन, अजैन, हिन्दू मुसलमान सब उत्सुकता से महाराज के पधारने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। यहां तक कि श्रीनाथ जी के भक्त तक महाराज श्री को हृदय से चाह रहे हैं। इस पर अमीरचन्द जी ने कहा कि 'यदि ऐसा है तो महाराज श्री का चतुर्मास वहां जरूर कराना चाहिये' अस्तु आपने नाथ द्वारा श्री संघ की प्रार्थना स्वीकार की और वहां से साधुओं सहित विहार कर रतलाम पधारे। उस समय वहां कतिपय साम्प्रदायिक मुनि विराजे हुए थे। उन्हों ने आप से व्याख्यान के लिये कहा तो आपने व्याख्यान दिया। एक घण्टे तक शास्त्र जी बांचे। उसके पश्चात् अमरचन्द जी श्रावक जी ने प्रार्थना की कि 'महाराज अब कुछ ऐसे उपदेशात्मक चुटकले फरमाइये जिन से मनोरंजन भी हों। इस पर आपने सर्व साधारण के समझने योग्य कुछ रुचि कर उपदेश सुनाया। फिर वहां से विहार कर जावरे पधारे। वहां से सम्वत् १९६० का चतुर्मास नाथ द्वारे करने के लिये तीन साधुओं सहित विहार किया। मार्ग में कई प्रकार के उपकार कराते हुए यथा समय श्री नाथ द्वारे पहुंचे।

सैकड़ों स्त्री पुरुष स्वागत के लिये नगर से बाहर आये और आपके शुभागमन पर बड़ा हर्ष प्रकट किया। इस प्रकार वीर जयध्वनि के साथ आप का नगर में पदार्पण हुआ। और उसी द्वारिकाधीश की सड़क पर निवास किया। इस चतुर्मास

में लोगों ने व्याख्यान का खूब लाभ लिया। जैन श्रावकों ने जो जीव दया का उपकार किया वह तो ठीक है। किन्तु, अजैन लोगों ने भी जैन रीत्यानुसार ३०० व्रत उपवासादि किये। चतुर्मास पूर्ण होने पर महाराज श्री ने वहां से विहार किया, उस दिन का दृश्य भी अद्भुत और दर्शनीय था। सभी सम्प्रदाय के लोग आपके वियोग से व्यथित हो होकर आंसू बहा रहे थे।

प्रकरण १४वां

संवत् १९६१ खाचरोद
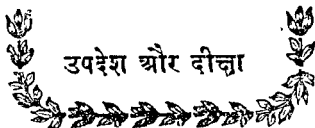
नाथद्वारे से आप हारोल देलवाला (मेवाड़) होते हुए उन्तूक (मेवाड़) पधारे। वहां पर आप ने पूज्य श्रीलालजी महाराज के दर्शन किये और उस रात्रि को वहीं निवास किया रात्रि के व्याख्यान के लिये पूज्य श्री ने महाराज श्री से कहा कि व्याख्यान दो तब महाराज श्रीने व्याख्यान दिया। पूज्य श्री दूसरे दिन वहां से विहार कर उठाड़े (मेवाड़) पधारे और पुनः दर्शन लाभ लिया। वहां से आप देलवाड़े पधारे। वहां नाथद्वारे के श्रावकगण तांगे में बैठ कर महाराज श्री को लेने के लिये आये। आप वहां पर चतुर्मास तो कर चुके थे परन्तु तपस्वी हज़ारीमल जी महाराज ने भाइयों से कहा कि हमें चौथमल जी महाराज से मिलना है, उस कारण उन्हें यहाँ लाओ। तब श्रावकगण महाराज श्री को विहार कराकर नाथद्वारे ले गये। महाराज श्रीने हज़ारीमल जी महाराज के दर्शन किये और हज़ारीमल जी महाराज के पास साधु थे, उन्होंने आप की वन्दना आदि सत्कार किया। तथा बड़ा प्रेम दिखलाया। तपस्वी जी ने महाराज श्री से कहा कि मेरे साथ बीकानेर चलो। तुम्हारे व्याख्यान बहुत अच्छे होते हैं इस

कारण बड़ा आनन्द आयगा। इस पर महाराज श्री ने उत्तर दिया कि गुरुवर की आज्ञा लेना आवश्यक है। इस पर तपस्वी जी ने कहा कि मैं नये शहर में तुम्हारी प्रतिक्षा करूंगा वहां पर तुम आज्ञा लेकर आ जाना। तदनुसार आप वहां से विहार कर उदयपुर पधारे। वहां भी व्याख्यान होने लगे और सदा की भांति वहां भी सब सम्प्रदाय के लोग बड़ी संख्या में इकट्ठे होने लगे। राज्य कर्मचारी भी आते थे। सुप्रसिद्ध कोठारी बलवन्तसिंह जी जागीरदार तथा भूतपूर्व दीवान उदयपुर स्टेट भी प्रेमपूर्वक व्याख्यान लाभ लेते थे। वहां खूब धर्म-वृद्धि हुई। रतनलाल जी महता आदि चार श्रावकों ने यावज्जीवन हमेशा चार २ सामयिक * करने की महाराज श्री से प्रतिज्ञा की. इसी प्रकार की और भी धर्म-वृद्धि हुई। तत्पश्चात् महाराज श्री वहां से विहार कर बड़े गांव पधारे। वहां के कृषिकों ने आपके उपदेश से जीव हिंसा का परित्याग किया। वहां से लौटकर उदयपुर भिण्डर होते हुए कानोड़ पधारे। कानोड़ से डूंगरे पधारे वहां भी कई त्याग हुए। एक दिन महाराज श्री विराजे हुए थे कि प्रतापमल जी डगा की दूकान पर बैठे हुए एक लड़के की ओर आप की दृष्टि गई। आप ने अनुमान किया कि यह लड़का स्वतन्त्र और निराश्रित है। दीक्षा के लिये उपयुक्त दिखता है। यह सोचकर आपने उसको बुलवाया और पूछा कि तुम कौन हो? इस पर उसने उत्तर दिया कि मेरा नाम शंकर है। जाति का राजपूत हूं। पहिले धरियावद रहता था। माता पिता कोई न होने और

---

* ४८ मिनिट तक सांसारिक विचारों को छोड़ कर एकाग्र चित्त से ईश्वर की वन्दना करने को सामयिक कहते हैं।

धर्म प्रेमी श्रीमान सेठ मुकनमलजी वालियाके सुपुत्र
हस्तिमलजी मोहनलालजी पाली. (मारवाड)
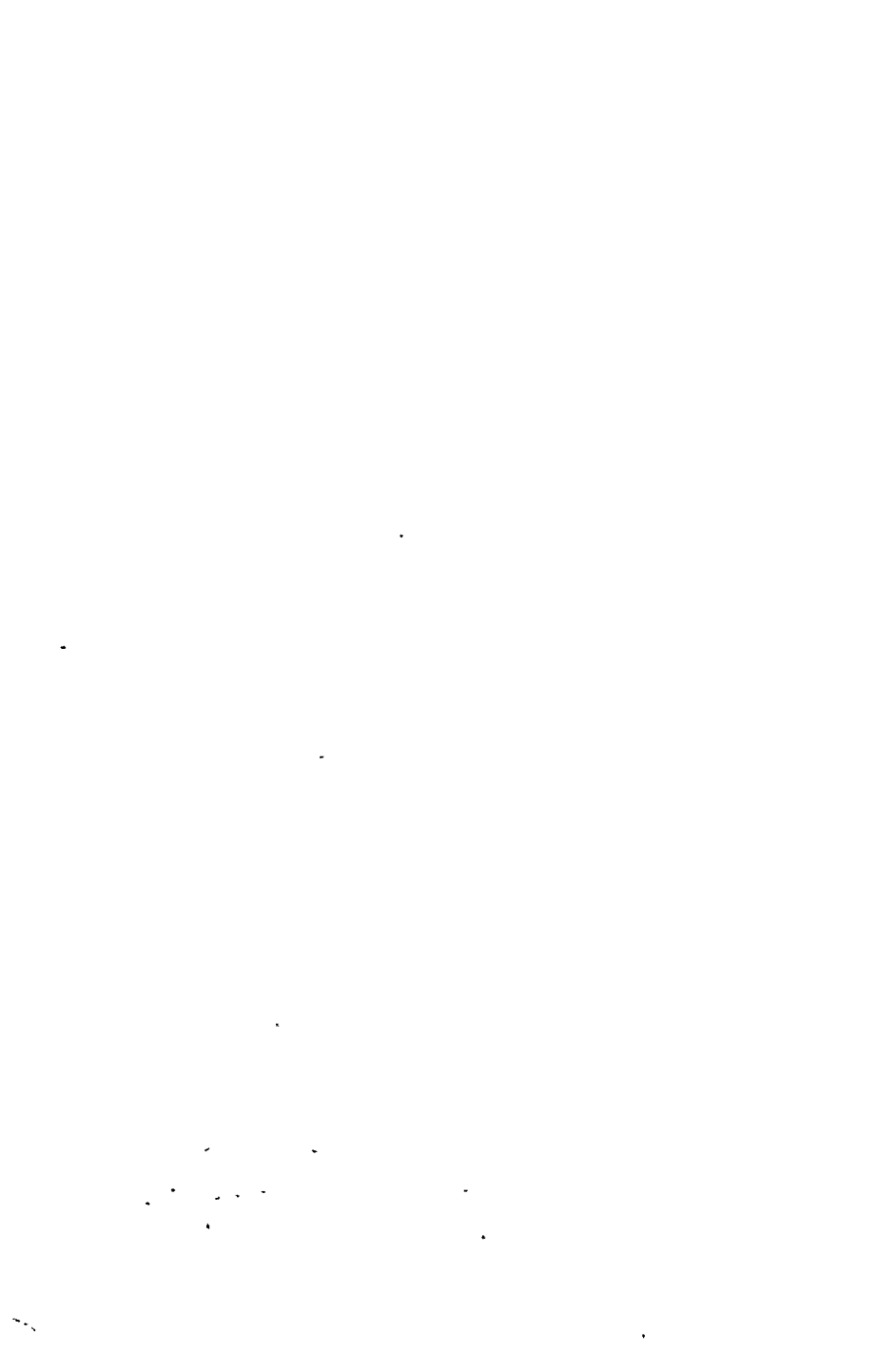
प्रकरण १५ वां ।

सम्वत् १९६२।

रतलाम

माताजी का संथारा और देहांत

खाचरोद का चतुर्मास शान्तिपूर्वक हुआ ही था कि रतलाम से प्रतापमल जी महाराज की अस्वस्थता का समाचार आ गया। तब आपने लक्ष्मीचन्द जी महाराज दो साधू सहित भेजे। परन्तु वे नव दीक्षित थे। इस कारण पीछे से आप स्वयम् भी पधारे। आखिर प्रतापमल जी महाराज का स्वास्थ्य ठीक नहीं हुआ और वे देवलोक होगये। वहां से आपने विहार करने का विचार किया। आपकी माता जी का स्वास्थ्य अच्छा नहीं था। अतः उन्होंने आपसे कहा, कि मेरा जीवन थोड़े ही दिनों में अशेष होने वाला है अतः आप आसपास ही विचरना ताकि समय पर मुझे आपके द्वारा कुछ ऐसा उपदेश मिल सके जिससे परलोक में मेरा हित सम्भव हो। इस पर आप "जो आज्ञा" कह कर रतलाम के निकटवर्ती स्थान धामणोद होते हुए सैलाने पधारे। पीछे से माताजी की तबियत कुछ ठीक होने लगी और सैलाने में ही उनके स्वास्थ्य समाचार मिले तो आप कुछ निश्चिन्त से होकर नीमच पधार गये। जहां नन्दलाल जी महाराज आदि विराजते थे। यहां

रतलाम श्री सङ्घ की ओर से श्रीमान तेजा जी साहिब आदि श्रावक चतुर्मास की विनती के लिए आए उन्हें उत्तर मिला कि सब सन्तों का सङ्गठन रामपुरे होगा अतः चतुर्मास का भी वहीं निर्णय हो सकेगा। फिर वहां से महाराज श्री विहार कर रामपुरे पधारे। वहां सब मुनिवरों का सङ्गठन हुआ। रतलाम श्रीसङ्घ चतुर्मास की प्रार्थना के लिए रामपुरे आया। उसने बड़े आग्रह से चतुर्मास के लिए अनुनय विनय की जो स्वीकार हुई। कुछ दिन पश्चात् अमावस्या के दिन महाराज श्री को एक रात्रि के पिछले पहर में स्वप्न आया। मानों माताजी सन्मुख खड़ी हैं और कह रही हैं कि मुझे बड़ा कष्ट हो गया था तब मैंने सन्थारा किया और अब देवलोक होगई हूं। वास्तव में माता जी का चतुर्दशी को देहान्त हो चुका था। अस्तुः, महाराज श्री निद्रावस्था में इससे अधिक और कुछ न पूछ सके, इतने ही में नींद खुल गई और प्रातः-काल हो गया। गुरुवर से स्वप्न का वृत्तान्त कहा। गुरु जवाहरलाल जी महाराज आदि विचार कर ही रहे थे कि इतने ही में एकम को रतलाम से माता जी के संथारे का पत्र आया। वृद्ध मुनिवर (जवाहरलाल जी महाराज) बोले कि—निकट होते तो हम भी चलते परन्तु बहुत दूर है, हमसे जल्दी चला नहीं जाता। तब महाराज श्री वहां से विहार करते हुए जावरे के पास कलारे पधारे।

वहां आपको विदित हुआ कि माता जी देवलोक होगई सुनकर पश्चात्ताप हुआ कि माता जी ने मुझसे आस पास ही विचरने को कहा था किन्तु मैं दूर चला गया। यदि मैं वहीं होता तो उन्हें अन्तिम समय पर कुछ ज्ञान चर्चा सुनाता

ख़ैर! जो कुछ हुआ सो ठीक। मोह से कर्म बंधते हैं ऐसा विचार कर वहां से वापिस लौटते थे कि इतने ही में जावरा श्री सङ्घ वहां आकर आपको जावरे ले गया। अहा! मातृप्रेम भी संसार में कैसी अद्भुत वस्तु है। जिसका यथार्थ रूप से वर्णन करना मनुष्य की शक्ति से बाहर है। सन्सार में परमात्मा ने मनुष्य-मात्र को जितने सद्गुण दिए हैं, उनमें मातृ भक्ति एक असाधारण और अलौकिक है। अन्यथा क्या यह सम्भव था कि सांसारिक ममता से वैराग्य रखने वाले निर्गुणब्रह्म के ज्ञाता, अहंकारादि से पराँगमुख और काम, क्रोध, लोभ, मोह के परित्यागी सच्चे साधु मुनि महाराज मृत्यु के अनन्तर पञ्च तत्त्वों में विभक्त और मृतिका के रूप में परिणत मानुषिक शरीर पर शोक प्रकट करते हैं? किन्तु, यह संसार में जन्म-ग्रहण करने के कारण जीव के उस स्वाभाविक मातृ-प्रेम का एक प्रमाण है कि जिससे जगत की तुच्छ से तुच्छ जातियाँ और पशु-पक्षी आदि भी शून्य नहीं हैं। अस्तु! जावरे जाकर आपने माता जी के सँथारे का हाल सुना कि एक दो दिन तो आपको स्मरण करती रहीं फिर कहने लगीं कि किसका पुत्र है? अपना तो शरीर तक नहीं है। फिर मोह ममत्व किस लिए किया जाय। इस पर रतलाम श्री सङ्घ उनकी चेष्टा देखकर बोला कि इनकी अवस्था तो ठीक है, फिर संथारा क्यों कराया जाय? एक साध्वी ने कहा कि मैंने इन्हें तेविहार कराया है। इस पर माताजी बोलीं कि नहीं, मैंने तो चौविहार किया है। यदि राज्य की ओर से तुम लोगों को कुछ भय हो तो मैं अन्यत्र चली जाऊं ··· आदि इस प्रकार बड़ी दृढ़ता के साथ आपने शरीर छोड़ा इस प्रकार माता जी का कथन सुन कर महाराजश्री कहने लगे कि मेरी

यही भावना है कि उस आत्मा को शीघ्र मोक्ष मिले।

इसके पश्चात् सम्वत् १९६२ के चतुर्मास के लिये आप रतलाम पधारे। सैकड़ों नर नारी आप के स्वागत के लिये नगर से बाहर उपस्थित थे। उस समय का दृश्य देखने योग्य था। श्रावकों में उस समय बड़ी एकता थी। अतः धर्म ध्यान त्याग प्रत्याख्यान अच्छा हुआ, सो क्षमापन्ना में यथा समय प्रकाशित हो चुका है। इस चतुर्मास में बम्बई निवासी वाडीलाल मोतीलाल शाह आपके दर्शनार्थ रतलाम आये। उन्होंने कभी भी उपवास नहीं किया था। किंतु महाराज श्री के उपदेश से उन्होंने व्रत किया। और पौषध* बम्बई जाकर किया। रतलाम श्री संघ ने इस चतुर्मास में आपकी बड़ी भक्ति और उत्साह से सेवा की। फिर जब वहां प्लेग शुरू हो गया और उसका ज़ोर बढ़ने लगा तो श्री संघ ने महाराज श्री से पार्थना की कि सब श्रावकगण जा रहे हैं आप यहां से विहार करें इस पर स्वामी भैरव ऋषि जी ने भी महाराज श्री से कहा कि पहिले आप यहां से विहार करें तब हम करेंगे क्योंकि यदि हम पहिले करेंगे तो वह लोक विरुद्ध होगा लोग कहेंगे कि लघुवय वाले चौथमल जी महाराज तो यहीं विराजमान हैं और वृद्धावस्था वाले विहार कर गये। तब महाराज श्री रतलाम से विहार कर पंचेड़ पधारे। वहां पर महाराज श्री दोनों समय व्याख्यान देते शास्त्र वांचते। पंचेड़ वालों को उनके भाग्य और पुण्योदय से ही ऐसा अवसर प्राप्त हुआ था। व्याख्यान में बहुत लोग आते थे। वहां के ठाकुर

---

* रात्रि को उपाश्रय आदि किसी एकान्त धर्मस्थान में विश्राम करना।

साहब रघुनाथसिंह जी व उनके सुयोग्य भ्राता चैनसिंह जी जैन धर्म से पहिले पहिल इसी वार महाराज श्री के द्वारा परिचित हुए। आप पर मुनि महाराज के व्याख्यान और सदुपदेशों का ऐसा प्रभाव पड़ा कि आप ने कतिपय जानवरों को न मारने की प्रतिज्ञा कर ली।

नोट—पूज्य श्रीलाल जी महाराज के जीवन चरित्र में जो ऐसा उल्लेख है कि "आप ने सवत् १९६२ का चतुर्मास रतलाम किया" सो ऐसा नहीं है। उस वर्ष उनका चतुर्मास जोधपुर में था। सवत् १९६२ में तो हमारे चरित नायक जी का ही चतुर्मास रतलाम में हुवा है।

अस्तु। पंचेड़ के ठाकुर साहब का परिचय जैन, साधु से प्रथम वार महाराज श्री से ही हुआ था और आप ही के उपदेशामृत का उन पर ऐसा प्रभाव पड़ा। तब से उनकी जैन धर्म और जैन साधुओं में बड़ी श्रद्धा हो गई।

इस प्रकार उस वर्ष के चतुर्मास में रतलाम में और भी अगणित त्याग प्रत्याख्यान हुए। वहां से नीमच, जावद और कणेर होते हुए बेगम पधारे। इन सब स्थानों पर भी खूब धर्म प्रचार और त्याग प्रत्याख्यान हुआ। अनेक मांसाहारियों ने मांस परित्याग किया। मदिरा छोड़ी और धर्म से स्नेह जोड़ा। फिर वहां से विहार कर कुछ श्रावकों के साथ मांडल गढ़ पधारते थे कि मार्ग में उधर से आने वाले लोगों ने आप से कहा कि आप इधर से न पधारिये क्योंकि आगे की भाड़ियों में कुछ मनुष्य बन्दूकें ले लेकर बैठे हैं। तब श्रावकों ने कहा कि सत्य है। यह मार्ग ऐसा ही है कि दिन दहाड़े लोग लुट जाते हैं। महाराज श्री ने फरमाया कि अब तुमको

है, और भय की वस्तु भी तुम्हारे ही पास है। हमने तो जब से दीक्षा ली तभी से चौकीदार (ब्रह्मचर्य) हमारे साथ है इतना कहने पर भी वे श्रावक तो गांव में चौकीदार को लेने गये। किन्तु,इधर महाराजश्री निर्भय होकर उसी मार्ग से मांडलगढ़ पधार गये पीछे से श्रावक लोग भी आये वहां बहुत कम निवास हुआ किन्तु उस अत्यल्प समय में ही अच्छा धर्म प्रचार हुआ। फिर वहाँ से विहार कर पुनः बेगम पधारे। वहां यह सूचना मिली कि प्रवर्तिनी रत्नाजी ने जो आपकी संसार पक्ष की मांसी जी और धार्मिक-पक्ष की साध्वी थी संथारा किया है अतः आप यहां से विहार कर शीघ्र गति के साथ सर वाणिये, नीमच, मल्हारगढ़ मन्दसौर होते हुए जावरे पधारे। वहां ऐसा संवाद मिला कि आपकी मांसी जी आर्य्या-जी देव लोक हो गई तव आप रतलाम न जा कर मन्दसौर होते हुए मल्हारगढ़ पधारे। वहां साधु लोग कम ठहरा करते थे इस कारण आप से वहां की जनता ने कुछ ठहरनेका आग्रह किया। तव महाराज श्री कुछ दिन वहां ठहरे और उपदेश किया। इसके पश्चात् नारायणगढ़ पधारे वहाँ बाज़ार में कई व्याख्यान हुए। उन दिनों वहां मंदिरमार्गी श्वेताम्वर आम्नाय के अमीविजयजी साधु थे उनसे वार्तालाप हुआ। वहां से महाराज श्री जावद पधारे जहां पूज्य श्रीलालजी महाराज विराजते थे। और साथ में मुनिवर थे। वहां पर आपको संवाद मिला कि कंभेड़े में एक भाई दीक्षा लेने वाला है। इस पर सब ने विचार किया कि उसकी भावोत्तेजना के लिये किसको वहां भेजा जाय। पूज्य श्री ने महाराज श्री को आज्ञा दी कि तुम जावो और इस कार्य को करो। तव आपने पूज्य श्री से विनय की कि मुझ से कैसे होगा—

और क्या होगा। इस पर पूज्य श्री ने अपने मुखारविंद से फ़रमाया कि जाओ तुम्हारे तो जंगल में मंगल हो जाता है, और दूसरी बात यह कि मैं तुम्हारा चतुर्मास कानोड़ का स्वीकार कर आया हूँ। वहां वालोंने मेरे और तुम्हारे लिये—बहुत आग्रह किया है। इस कारण अपने दोनों में से किसी एक को चतुर्मास अवश्य करना चाहिये। आज्ञा पाकर महाराज श्री कन्भेड़ा पधारे वहां उपदेश द्वारा उस वैरागी को उत्तेजित कर महाराज श्री भाटखेड़ी पधारे और फिर वहां से मणांसे। अस्वस्थ थे किंतु उस अवस्था में भी वहाँ अपनी मधुर वाणी से आपने सब को प्रफुल्लित किया। ऐसे आदर्श महात्मा के उपदेश का किस पर प्रभाव नहीं पड़ता जो रुग्णावस्था और विवशता के समय भी परोपकार और समाजोन्नति के लक्ष्य को हृदय में रक्खे। अस्तु वहां के निवासी कजौड़ीमल जी बोहथरे को भी आपके उपदेश से वैराग्य उत्पन्न हो गया स्त्री पुत्र तथा धन सम्पत्ति सब को छोड़कर उन्होंने दीक्षा लेने की प्रतिज्ञा प्रकट की और इस के लिये प्रार्थना की तो महाराज श्री ने फरमाया कि जब तुम्हारा यही विचार है तो क्षण मात्र का भी प्रमाद मत करो और अपनी इच्छा को शीघ्र पूर्ण करो। इतना फ़रमाकर आप वहां से विहार कर नीमच पधार गये। और नीमच से छोटी बड़ी सादड़ी होकर सम्वत् १९६३ के चतुर्मास के लिये कानोड़े पधारे।

प्रकरण १६ वां

संवत् १९६२

इस चतुर्मास में वहां दया पौषध तथा स्कन्ध* आदि बहुत हुए। रात्रिके समय महाराज श्री ने अन्यान्य उपदेशों के साथ रुक्मिणी काइतिहास फ़रमाया। एक दिन ठाकुर जी का विमान उसी मार्ग से निकला और लोग उसे रोकने लगे तब महाराज श्री ने कहा कि:—" भाइयो! झगड़ा न करो। यह रास्ता आम है।" किन्तु, फिरभी लोगों को अज्ञानता वश जोश आगया और उन्होंने विमान को रोक दिया। इस पर महाराज श्री ने अपना उपदेश बन्द कर दिया इस पर से प्रत्यक्ष है कि आपकी प्रकृति कितनी शान्त है। आपके जीवन में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है जिनसे आपकी शांत प्रकृति के प्रमाण प्रत्यक्ष न मिलते हो। कानोड़ से चतुर्मास के पश्चात् विहार कर आप धर्म प्रचार करते हुए जावरे पधारे। मार्ग के सब स्थानों में अच्छा उपकार हुआ।

---

*स्कन्ध चार प्रकार के होते हैं यथा: =

१ पहिला स्कन्ध—रात्रि भोजन न करना।

२ दूसरा स्कन्ध—सब्ज़ी हरी साग का त्याग।

३ तीसरा स्कन्ध—कच्चे जल का त्याग।

४ चौथा स्कन्ध - ब्रह्मचर्य्य से रहना।

प्रकरण ३७ वां।

सम्वत् १९६४

जावरा।
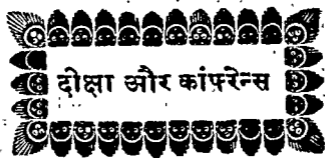
दीक्षा और कांफरेन्स

सं० १९६४ का चतुर्मास आपने जावरे किया वहां भी खूब उपकार हुआ चतुर्मास में ही मणासे से वैरागी कजोडीमल जी वहाँ आगये थे। इनके परिवार में इनके बड़े भाई, उनका पुत्र तथा पत्नी मौजूद थीं। जब उन्होंने दीक्षा की आज्ञा के लिए सब से स्वीकृति मांगी और वह न मिली तो वह जावरे आगये। और साधु-वेष धारण कर लिया चतुर्मास की समाप्ति पर महाराज श्री उनको अपने साथ लेकर उनके ससुराल निम्बाहेड़े में गए और वहां वालों को समझाया। साथ ही उनकी स्त्री को भी उपदेश देकर राज़ी किया। उन्होंने आज्ञापत्र लिखा दिया फिर आप वहां से विहार कर रामपुरा पधारे वहां गुरुवर के दर्शन लाभ कर उनके साथ डग, वडौद, सारंगपुर, सीहोर की छावनी, भूपाल, आष्टा काष्टा होते हुए देवास पधारे। इन सब स्थानों में भी अच्छा धर्म्म-प्रचार और उपकार हुआ। देवास में रतलाम के श्रीमान् अमरचन्द जी पीतलिये की ओर से निमन्त्रण मिला कि यहां

पर कांफ्रेन्स होने वाली है। अतः कृपा कर अवश्य पधारे तब महाराज श्री वहां से विहार कर उज्जैन पधारे और बाज़ार में पब्लिक व्याख्यान दिया आपको हमेशा से बन्द मकान में व्याख्यान देना पसन्द नहीं है, अतः प्रायः बाज़ार में ही व्याख्यान दिया करते हैं और तभी सर्व साधारण को लाभ भी होता है। अस्तु। यथासमय आप रतलाम पधारे, वहां और भी कई संत विराजमान थे। बाहर से भी हज़ारों लोग आये हुये थे। व्याख्यान सरकारी स्कूल में होना निश्चित हुआ। चैत सुदी ११ और १२ को महाराज श्री के व्याख्यान हुए। लोगों की भीड़ अपार थी, इस व्याख्यान में मौरवी (गुजरात) नरेश भी सम्मिलित हुए थे। सर्वसाधारण ने तो व्याख्यान की भूरि २ प्रशंसा की ही। परन्तु, कांफरेन्स के जन्मदाता महाशय श्रीमान् अम्बावीदास जी दोषाणी ने भी उठकर व्याख्यान की समाप्ति पर अपना संक्षिप्त वक्तव्य दिया, जिसमें सबको यह प्रेरणा की गई थी कि कांफ्रेन्स का उद्देश और सारांश सब महाराज श्री के व्याख्यान में आ गया है। हम सब को आपके उद्देश के अनुसार कार्य करना चाहिये। आदि……

प्रकरण १८ वां

सम्वत् १९६५ मन्दसौर।

सार्वजनिक व्याख्यान
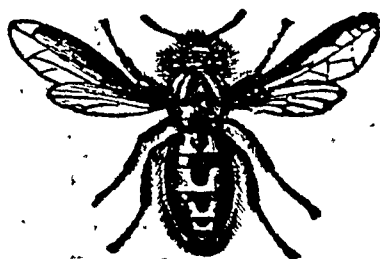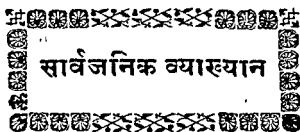
हमारे चरित नायक रतलाम से विहार कर सैलाने पधारे वहां आप से लोगों ने प्रार्थना की, कि यदि अभी रात्रि को ही व्याख्यान देंगे तो हमें सहज में ही सुनने का सौभाग्य प्राप्त होगा। इस प्रार्थना को स्वीकार कर आपने उसी रात्रि को व्याख्यान दिया। प्रातःकाल वहां से विहार कर जावरे होते हुए मन्दसौर पधारे। और सम्वत् १९६५ का चतुर्मास भी वहीं किया, खूब धर्म वृद्धि हुई। इसी चतुर्मास में वीसे ओसवाल नन्दलाल जी को दीक्षा हुई। और शान्ति पूर्वक चतुर्मास समाप्त हुआ।

प्रकरण १९ वां।

सम्वत १९६६ उदयपुर।

इसके पश्चात् आपने वहां से विहार किया। नीमच निम्बाहेड़ा होते हुए उदयपुर पधारे। इन सब गांवों में अच्छा उपकार हुआ और उदयपुर में भी आपके व्याख्यान होने लगे। आपकी पीयूष वाणी से श्रोताओं की उपस्थिति दिन प्रतिदिन अधिकाधिक होने लगी। यहां तक कि कई जागीरदार और राज्य कर्मचारी भी उपदेश श्रवण करने को आने लगे। और हिन्दवा सूर्य्य महाराणा श्री फतहसिंह जी साहब बहादुर के दीवान और खास सलाहकार श्रीमान् कोठारी बलवन्त सिंह जी साहब नें भी महाराज श्री की अच्छी सेवा भक्ति की फिर वहां से विहार कर गन्दलाल जी महाराज के साथ नांई पधारे। वहां ३—४ हजार भीलों के अग्रमुखी भीलों ने आप का व्याख्यान सुना, इससे इन लोगों के हृदय पर बड़ा प्रभाव पड़ा; और कुछ दया का भी सञ्चार हुआ। उन लोगों ने महा-राज श्री से प्रार्थना की कि यदि हम लोगों से हिंसा कराने का प्रण करावें तो फिर यहां के महाजनों को कमी वेशी तोलने की शपथ दिलावें। इसी के अनुसार महाजनों को एकत्रित कर उनको सौगन्ध दिलवाई गई। और भीलों ने अपने संकल्प के

अनुसार हिंसा न करने की प्रतिज्ञा की। इस जाति के हृदय में यह हिंसा न करने का भाव जो पैदा हुआ है, वह महाराज श्री के व्याख्यान का ही प्रभाव है। भीलों ने निम्नलिखित और भी प्रतिज्ञाएं कीं:—

(१) वन में दावाग्नि नहीं लगाएंगे।

(२) मनुष्य को किसी प्रकार से पीड़ित नहीं करेंगे।

(३) व्याह शादियों के मौक़े पर मामा की ओर से जो भैंसे, बकरे आदि आते हैं—वे मारे जाते हैं किंतु आज से हम कभी भी ऐसा नहीं होने देंगे। और उन आने वाले पशुओं को अमरिये (अमर) कर दिया करेंगे।

ये जो प्रतिज्ञाएं हमने आप के सन्मुख की हैं—इन्हें हम लोग हमेशा निभाते रहेंगे। इसी प्रकार भीलों की इस की गई प्रतिज्ञा से वहां जैन अजैन सभी को बड़ी प्रसन्नता हुई। और वे लोग चरित्र नायक की भूरि २ प्रशंसा करने लगे। और प्रार्थना की कि यह जो कुछ उपकार हुआ है, आप ही के अमृतमय उपदेश और कृपा का फल है। इस से हम लोगों को बहुत कुछ सन्तोष हुआ है। बल्कि ऐसा उपकार तो कहीं भी न हुआ होगा। यह कहना भी कुछ अत्युक्ति नहीं है। हमारी आत्माएं तो इससे सन्तुष्ट हैं ही, किंतु बलिदान होनेवाले जीव भी आप का गुणगान करेंगे। एक दिन जब कि आप वहां से विहार कर रहे थे उदयपुर के भूतपूर्व दीवान कोठारी श्री० बलवन्तसिंह जी महाराज श्री के दर्शनों को पधारे। कुछ देर उनसे धार्मिक चर्चा हुई। फिर वहां से विहार कर बड़े गांव (गोगूंदे) पधारे। राव जी

साहिब श्रीयुत पृथ्वी सिंह जी व उनके पौत्र श्रीयुत दलपत-सिंह जी ने व्याख्यान में योग दिया। और आप की अच्छी सेवा भक्ति की। इस व्याख्यान के प्रभाव से राव जी साहब ने प्रति वर्ष २ बकरे अमरिये (अमर) करनेकी प्रतिज्ञा की जो वहां पर प्रति वर्ष बलिदान में दिये जाते थे। इस प्रकार वहां और भी कितने ही कृषकों ने जीव हिंसा व मदिरा का त्याग किया।

वहां से विहार कर घोड़च (देलवाड़े) होते हुए श्री नाथद्वारे पधारे। जैन, अजैन सब लोगों ने व्याख्यान का लाभ लिया। चरित्र नायक महोदय के आगमन से उस समय जनता में अपूर्व उत्साह था, और वे अपने को कृतार्थ मान-रहे थे। फिर आप वहां से विहार कर सरदारगढ़, आमेट, देवगढ़ होते हुए नयेशहर पधारे। और कुछ सार्वजनिक व्याख्यान दिये। जिसका जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा। वहां से अजमेर पधारे।

अजमेर में उस समय जैन कान्फ्रेंस का अधिवेशन होने वाला था। उसमें योग देकर कई गांवों में उपदेश देते हुए भीलवाड़े पधारे। वहां ब्राह्मण, ओसवाल, माहेश्वरी, अग्रवाल, राजपूत आदि जातिके लोगों ने यहां तक कि भंगी, चमारों ने भी आप का व्याख्यान बड़े प्रेम से श्रवण किया, और कई जीवों के न मारने की प्रतिज्ञा की। फिर चित्तौड़ निम्बाहेड़ा होते हुए जावद पधारे। उदयपुर श्री संघ की ओर से चतु-र्मास की विनती हो हो रही थी। मुनि श्री देवीलाल जी महाराज मुनि श्री चौथमल जी महाराज दोनों मुनियों का आग्रह होने पर आप ने उदयपुर चतुर्मास की विनती स्वीकृत

को। फिर वहां से नीमच होते हुए उदयपुर पधारे। सम्वत् १९९६ का चतुर्मास वहीं किया। वहां पर दोनों मुनियों के सङ्गठन ने जनता में और भी अधिक स्फूर्ति उत्पन्न की। प्रथम श्री देवीलाल जी महाराज उपदेश देते। बाद में चरित-नायक जी व्याख्यान देते, जिसे सुनकर श्रोतागणों को आप की वाक्पटुता और मधुर भाषण का बड़ा ही आनन्द आता। इस प्रकार वहां का चतुर्मास बड़े आनन्द से पूर्ण हुआ।

प्रकरण २० वां ।

सम्वत् १९६७ जावरा

अपूर्व स्वागत और पत्नीकी दीक्षा
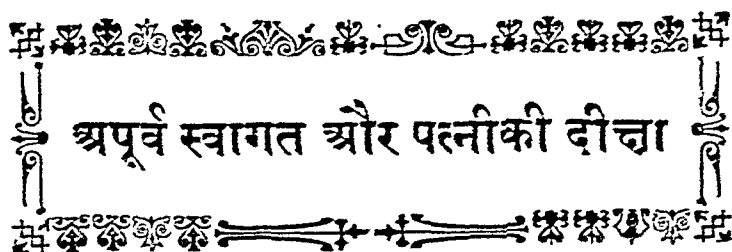
यथा समय उदयपुर से विहार कर देलवाड़े, श्रीनाथद्वारे, कांकरोली, कुणज कुवेर होते हुए नांणदा पधारे । वहां के ठाकुर साहव तेजसिंह जी प्रति मास वकरे का वलिदान किया करते थे वह वन्द—करवाया और एक व्याख्यान दिया फिर आप वागोर पधारे वहां श्वेताम्वर स्थानकवासी का एक भी घर नहीं है । तेरह पन्थियों के घर हैं । वे लोग स्थानकवासी साधुओं का उपदेश प्रायः ग्रहण नहीं करते हैं । किंतु जव चरित्र नायक जी के आगमन की सूचना उन लोगों को हुई तो वे वड़े प्रसन्न हुए । और वड़ी उत्सुकता के साथ स्वागत के लिये आये । वहां अन्यान्य जातियों के साथ माहेश्वरी व श्रावगी वन्धुओं की सेवा भक्ति वास्तव में प्रशंसनीय थी । अपने हृदय में उन्हें जितना प्रमोद हुआ उसे वे ही लोग जानते हैं । उन्होंने ८ रोज़ तक निरन्तर सेवाभक्ति करके अपने प्रेम का ख़ासा परिचय दिया । वे लोग प्रति दिन के व्याख्यान में स्त्रियों सहित उपस्थित होते थे । इसके अतिरिक्त ब्राह्मण, क्षत्री, शुद्र आदि सभी जातियों के लोग आते

नवाब साहेब श्रीमान सर शेर महम्मदखांजी बहादुर

के. जी. [illegible] आई. ई. पालनपुर (गुजरात)

थे। इन्हीं लोगों की ओर से उस समय भुने हुए चून का सदावत बैठा—ज़ारी हुआ जो अभी तक चल रहा है। वहां से आप विहार कर भीलाड़े, मंगरूप, पारसोली, वीगोद मांडलगढ़, बेगम, सींगोली, नीमच होते हुए गुरुवर के साथ मल्हारगढ़ पधारे। वहां आप के गुरुवर श्री हीरालाल जी महाराज ने फ़रमाया कि अवसर पाकर अब तुम अपने सांसारिक ससुराल (प्रतापगढ़) में चलकर उपदेश करो।

गुरुदेव का आदेश सुनकर पहिले तो आप असमञ्जस में पड़गये क्योंकि वहां जाने में आपको औरर बातोंके अतिरिक्त दे। भय ख़ास थे। एक यह कि ससुर महाशय वक्र हो रहे हैं और वे हैं भी उन मनुष्यों की श्रेणी में जो अक्ल या समझ से काम नहीं लेना जानते। दूसरे यह कि पत्नी यही चाह रही है कि किसी प्रकार मिल जायं तो वस्त्रादि धारण कराकर घर ले आऊं। यद्यपि मुनि महाराजकी अचल प्रतिज्ञा के आगे दोनोंकी कुछ नहीं चल सकती थी। किंतु एक प्रकार का झगड़ा या हुल्लड़ बाज़ी होना भी आप पसन्द नहीं करते थे। इसी से ऐसा विचार हुआ। अन्त में जाना ही निश्चित करके आप प्रतापगढ़ पधारे। बाज़ार में व्याख्यान शुरू करते ही, आपके ससुर और स्त्री को सूचना मिली। ससुर महाशय न आये उस से पहिले ही आपकी अर्द्धाङ्गिनी जी व्याख्यानस्थल में आ खड़ी हो कहने लगीं कि 'मेरा खुलासा किये बिना जाने की शपथ है।' मुनि महाराज व्याख्यान में ध्यानावस्थित थे। समझे कि कोई नावण (नायन) अथवा सेवकन है जो अपने नेग अथवा अधिकार के लिये कह रही है। कुछ देर बाद जब स्त्री ने कुछ ज़ोर२ से बोलना शुरू किया तो हुल्लड़ सा मच

गया । लोग व्याख्यान सुनते २ ज़ोर २ से बातचीत करने लगे । तब आप को विदित हुआ कि यह वही स्त्री है जो मेरे संयम लेने में बाधक हुई थी । अब भी यह उसी अभिप्राय से आई मालूम होती है कि मैं पुनः गृहस्थाश्रम में प्रवृत्त हो जाऊं । यह सोच कर आपने वहां अधिक ठहरना उचित नहीं समझा । और मन्दसौर पधार आये । स्त्री वहां भी आगई और झगड़ा मचाने लगी । किन्तु श्री संघ ने उसे समझा बुझाकर वापिस प्रतापगढ़ भेज दी । मन्दसौर में आपने जो हृदयग्राही उपदेश दिया उसने रतनलाल जी बीसे पोर वाड़ के सुपुत्र छगनलाल व भिलाड़े निवासी चान्दमल ओसवाल पर जिनकी आयु उस समय १४—१५ वर्ष की थी, संसार से विरक्ति का प्रभाव जमा दिया । उन लोगों ने चरित्र नायक से दीक्षा लेने का भाव भी दर्शाया । छगनलाल की माता तो पहले ही संसार से विरक्त हो चुकी थी । दोनों युवकों को बहुत समझाया किन्तु वे अपने निश्चय पर दृढ़ रहे और मुनि महाराज के साथ जावरे आगये क्योंकि महाराज श्री ने चतुर्मास के लिये जावरे की विनती स्वीकार करली थी ।

सम्वत् १९६७ का चतुर्मास वहीं किया । चतुर्मास के व्याख्यानों से जनता को अच्छा ज्ञान प्राप्त हुआ किसी कारण वहां एक हाथी का वध किया जाने वाला था । किन्तु, मुनि महाराज के सदुपदेश से उसको अभय दान मिला । श्रीमान् होरमजी डाक्टर एल० एम० एंड० एस फ़िज़िशयन एंड सर्जन भी महाराज श्री के व्याख्यानों को सुनकर जैन धर्म के तत्वों से परिचित हुए । पंचेड़ ठाकुर साहब श्री रघुनाथ सिंह जी व सुभ्राता श्रीचैनसिंह जो साहब चरित्र नायक जी के दर्शनार्थ

पंचेड़ से जावरे पधारे। और दर्शन कर बड़ी प्रसन्नता प्रकट की। इधर जावरे ठाकुर साहिब ने भी उपदेश सुनने का लाभ लिया। कई उपकार हुए। वैरागी छगनलाल जी चान्दमल जी को ज्ञानाभ्यास कराते रहे।

आपकी पत्नी फिर जावरे आई किंतु ताल निवासी श्रीमान् हुक्मीचन्द जी की वहिन श्रीमती पेंजांवाई की बेटी धूली बाई ने भी उसको बहुत समझाया। तब उसने कहा कि मुझे अपने सांसारिक आराध्यदेव के साथ एक बार बातचीत कर लेने दो फिर मैं जैसा वे कहेंगे वैसा ही करूंगी। निदान ४-५ भाई व बाई तथा कुछ साधुओंके समक्ष बैठकर चरित्रनायकजी ने उससे बातचीतकी। उसने कहा कि आपने तो मुझे छोड़कर वैराग्य ले लिया अब मैं किस के भरोसे रहूँ, और क्या करूं? इस पर मुनि महाराज ने उत्तर दिया कि तुम्हारे हमारे सांसारिक नाते तो जन्म जन्मान्तर में कई बार हो चुके। पर धार्मिक नाता नहीं हुआ, और यह दुर्लभता से ही प्राप्त होता है अतः जिस प्रकार मैं साधु बन गया उसी प्रकार तुम भी साध्वी बन जाओ। क्षणिक और अस्थायी सांसारिक सुख को सर्वस्व मान कर अमूल्य मनुष्य जीवन को नहीं खोना चाहिये। संसार असार है। इसमें न कोई किसी का साथी है, और न इसमें आत्म-कल्याण ही है। जिस में मनुष्य जीवन की वास्तविक सार्थकता है। किसी कवि ने ठीक ही कहा हैः—

" एको एव जायन्ते जन्तु एको एव प्रलायते,
एको एव अनुभुक्तं, सुकृतमेव दुष्कृतं "

माता, पिता, भाई, बहिन, पति, पुत्र कोई भी परलोक तो

दूर रहा पर इस लोक में भी सहायक नहीं होते। इस कारण अच्छा हो, यदि तुम भी मेरा कहना मानकर साध्वी बन जाओ।

मुनि महाराज के इस कथन का स्त्री पर बड़ा प्रभाव पड़ा। वे बोलीं कि:—"अच्छी बात है, मैं आपके कथन को मान देती हूं—आदर करती हूं। और उस अलौकिक सुख को प्राप्त करने के लिये साध्वी बनने को सहर्ष तैयार हूँ।

अहा! धन्य है, मुनि महाराज को कि आपके उपदेश का स्त्री पर ऐसा प्रभाव पड़ा। और साथ ही उस स्त्री को जिसने विरोधनी होकर भी मुनि महाराज के थोड़े से उपदेश को श्रवण करते ही संसार से विरक्त होने की ठान ली।

ताल निवासिनी श्रीमती फेजांबाई बड़ी दानशीला थीं उन्हीं के अनुरूप उनकी पुत्री श्रीमती धूली बाई भी बड़ी धर्मनिष्ठ हुई। साधु सन्त आपकी क्षेत्र-स्पर्शना के लिये की हुई प्रार्थना पर बहुत ध्यान देते थे। उन्हीं की प्रेरणा ने हमारे चरित-नायक जी की सांसारिक-पत्नी को वैराग्य में प्रवृत्त किया। अन्त में दीक्षा लेने का विचार पक्का होगया श्रीयुत् गुलाब-चन्द जी दफडिया ने दीक्षा दिलाने की तैयारी की। आपके उद्योग और सहायता से ४८ दीक्षा हुईं। आप बड़े दयालु और धर्मज्ञ हैं। आपके द्वारा अनेक धार्मिक सुकृत्य हो चुके और हो रहे हैं। आप धर्म के लिये हमेशा तन, मन धन न्योछावर करने को प्रस्तुत रहते हैं। और प्रत्येक साधु मुनिजन आप से सम्मति लिया करते हैं। हमारे चरित नायक जी के भी आप सच्चे सलाह कारक हैं।

श्रीयुत् पन्नालाल जी खारीवर भी धर्म के लिये हमेशा

अच्छा उद्योग करते रहते हैं। आप पूरे धर्मनिष्ठ और तत्त्वज्ञ हैं। प्रत्येक धार्मिक कार्य्य में आप बड़े उत्साह और परिश्रम से सहायता देते हैं।

जावरा श्री संघ पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज की संप्रदाय के साधुओं के साथ अपना बड़ा प्रेम प्रदर्शित करते हैं। निदान संवत् १९६७ की विजया-दशमी को जावरा श्री संघ ने चरितनायक जी की पत्नी को बड़े समारोह के साथ दीक्षा दिलाई।

श्रीमती साध्वी जी अल्प काल में ही जैनधर्म के सिद्धान्तों से परिचित होगईं। आपने अपने जीवन में कई उपवास, बेले, तेले, चोले, पचोले, आदि निराहार तप किये और इस प्रकार धर्म पालन करती हुई सम्वत् १९७३ की श्रावण शु० १०,को परलोक सिधार गईं।

जावरे का आनन्द पूर्वक चतुर्मास पूर्ण होने पर हमारे चरित्रनायक जी वहां से विहार कर करजू पधारे। वहां श्रीमान् सेठ पन्नालाल जी करजू वाले की ओर से दीक्षा का आग्रह होने पर सम्वत् १९६७ की अगहन सुदि १० को दोनों युवकों को दीक्षा दी गई।

प्रकरण २१ वां,

संवत् १९६८ बड़ी सादड़ी

(मेवाड़)

दीक्षा और धर्म वृद्धि
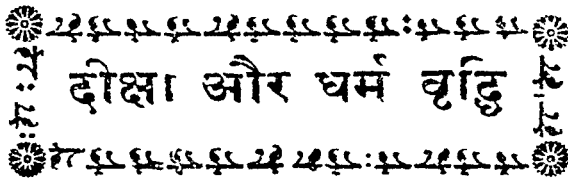
करजू से विहार कर कई गावों में उपदेश करते हुवे यथा समय आप बड़ी सादड़ी (मेवाड़) पधारे सम्वत् १९६८ का चतुर्मास वहां हुआ। धर्म्म की अच्छी वृद्धि हुई * उदयपुर निवासी किशनलाल ब्राह्मण जो वैराग्य भाव में थे, उन्हें १९६८ की भाद्रपद शुक्ला ५ को दीक्षा दी। फिर चतुर्मास पूर्ण होने पर आप वहां से विहार कर गुरुवर के दर्शन कर भदेसर, निम्बाहेडे नीमच होते हुवे संजीत पधारे इन सब गांवों में धर्म का अच्छा प्रचार हुआ वहां से सीता मउ पधारे वहां पर भी पबलिक उपदेश दिया जैन जैनेतर जनता ने अच्छा योग लिया वहां से चरित्र नायक विहार कर लधूणे, मानपुर ताल आदि कई गावों में होते हुवे पंचेड़ पधारे। और वहां से विहार कर शिवगढ़ पधारे।

* चरित्रनायक का इतना हृदयग्राही और उदार उपदेश है कि जिस से ब्राह्मण तक भी चरित्रनाय जी के पास दीक्षित होचुके और हो रहे हैं।

प्रकरण २२ वां

सम्वत् १९६९ रतलाम

धर्मोपदेश और दीक्षा
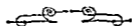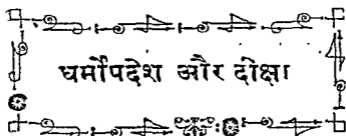
जब रतलाम श्री संघ को आपके शिवगढ़ पधारने की सूचना हुई तो उसकी ओर से एक डेपूटेशन आया। जिस ने रतलाम पधारने का बड़ा आग्रह किया। उनकी प्रार्थना मानकर महाराज श्री रतलाम पधारे। रतलाम निवासियों के मनोरथ सफल हुए उन्होंने अपनी प्रेम-भक्ति का अच्छा परिचय दिया। उसी समय श्रीमान् सेठ अमरचन्द जी साहिब आदि श्रावकों ने मिलकर रतलाम के लिये चतुर्मास की विनती स्वीकृत कराली। फिर आप वहाँ से विहार कर धार पधारे और वहां कई व्याख्यान देकर इन्दौर। वहाँ बम्बई बाज़ार में अठारह व्याख्यान दिये। जनता को अच्छा उपदेश मिला, और उसके फलस्वरूप खूब धर्म ध्यान की वृद्धि हुई वहां से आप विहार कर देवास होते हुये उज्जैन पधारे जहाँ एक सार्वजनिक व्याख्यान हुआ। उज्जैन से खाचरौद होते हुए रतलाम पधारे। सम्वत् १९६९ का चतुर्मास रतलाम ही किया। श्रीमान् अमरचन्द जी

वर्धमान जी, शास्त्रवेत्ता रूपचन्द जी, इन्द्रमल जी आदि श्राव-क-गणों ने प्रेम-पूर्वक भक्ति की। व्याख्यान को सुनते २ श्रोतागण चित्रित रह जाते थे। आपकी वाक्-शैली बड़ी ही मनोहर और चित्ताकर्षक तथा सर्वसाधारण के समझने योग्य होती है। इसीसे लोगोंको विशेष आनन्दानुभव होता था। लोगों की इच्छा नहीं थी कि आप यहां से पधारें। किन्तु, मुनि अप्रतिबद्ध होते हैं, और चतुर्मास पूर्ण होनेपर उस स्थानमें अधिक ठहर नहीं सकते। अतः इसी अवधि में कई श्रावकों को जैन तत्त्वों का रहस्य समझाया तथा श्रावक श्राविकाओं को द्वादश व्रत धारण कराये। कई उल्लेखनीय उपकार चरित नायक महोदय द्वारा हुये। यहां पर ग्रन्थ बढ़ जाने के भय से सब का उल्लेख नहीं किया जा रहा है। इस चतुर्मास में चम्पा-लाल ताल वालों ने दीक्षा लेने की इच्छा प्रकट की। इस पर आपने उन्हें शिक्षा दी; कि इस जीवन में कई परिशहों को सहन करना होगा। संयम रखना होगा, दश यति धर्म पर विशेष लक्ष्य रखा जावेगा, आदि २। अन्त में सम्वत् १९६९ के अग्रहन कृष्णा ४ को रतलाम श्री सङ्घ की ओर से बड़े समारोह के साथ चम्पालाल जी की दीक्षा हुई। रतलाम निवासी पूनमचन्द जी बोहतरे के सुपुत्र प्यारचन्द भी दीक्षा लेने को तैयार हुए। पर अपने हृदय में विचार किया कि पहिले साधु व्रत को साधना चाहिये, ताकि आगे चल कर किसी प्रकार की कठिनाई न उठाना पड़े। अतः प्यारचन्द आप के साथ २ मार्ग में कई प्रकार की कठिनाइयां सहन कर उदयपुर तक गये। महाराज श्री ने प्यारचन्द से कहा कि भाई! यदि तुम्हारी यही इच्छा है, तो फिर तुम अपनी संबन्धिनी दादी व भ्राता से आज्ञा पत्र लिखवा लाओ। प्यार-

चन्द ने 'जो आज्ञा' कहकर अपने गांवकी ओर प्रस्थान किया अपनी हार्दिक—इच्छा तथा मनोगत भावों को दादी पर प्रगट किया। उस समय वे धानासुने (रतलाम) थीं। इनकी वैराग्य में इस बढ़ती हुई प्रवृत्ति को देख कर सगे सम्बन्धी विचार करने लगे। और इनको वैराग्य से च्युत करने के लिये अनेकानेक चेष्टाएं कीं। इस पर प्यार चन्द की वृत्ति गृहस्थाश्रम की ओर प्रवृत्ति हो गई। किन्तु, २-४दिन बाद ही फिर उनकी चेष्टाएं वैराग्य में परिणित हो गई और अपनी दादी तथा सगे सम्बन्धियों से रतलाम से कुछ क्रय-विक्रय का सामान लाने का बहाना कर चरित्र नायक जी के पास आने का दृढ संकल्प कर लिया। जब ये रतलाम आये, तो उस समय महाराज श्री की सेवा तक पहुंचने के लिये इनके पास आर्थिक साधन कुछ नहीं था। अतः तमाखू वाले श्रीयुत धूलचन्द जी अग्रवाल की माता ने इन्हें रेल-किराया आदि अपेक्षित व्यय देकर महाराज श्री की सेवा ग्रहण करने का उपदेश दिया। हीराबाई के द्वारा अपना अभीष्ट सफल होता देख कर प्यारचन्द को बड़ी प्रसन्नता हुई। और अब उन्हों ने महाराज की सेवा में पहुंचने के लिये प्रयान कर दिया। अब एक प्रकार से इनका मार्ग निष्कण्टक बन चुका। "इतना सब किस उदार विदुषी के द्वारा हुआ है मेरे वैराग्य पथ में कौन सहायक हुई है—मेरे जीवन को किसने वैराग्य का स्रोत बनाया है, यह विचार प्यारचन्द के हृदय में उठने लगे।" वे मन ही मन उस माता को धन्यवाद देने लगे। पाठको! क्या भाव है—कैसा त्याग है! विरक्ति का कैसा समुज्वल चित्र है!! मुनि जी के चरणारविन्दों की लौ मात्र ने प्यारचन्द के

लेगा नहीं। यह सोच कर आप के हृदय में अनेक प्रकार के संकल्प-विकल्प होने लगे। आखिर कुछ भी साधन जब न मिला ते। बड़ी कठिनाई से किसी प्रकार आप उदयपुर पहुंचे। मुनि जी से सब घटित-घटना कह सुनाई मुनि जी ने फ़रमाया कि तुम्हारे वड़े ही उच्च भाव हैं जो संसार मे फंस कर पीछे निकल आये। फिर मुनि जी वहां से विहार कर चित्तौड़ पधारे। चित्तौड़ आने पर मुनि जी ने प्यारचन्द को फिर आज्ञा के लिये भेजा। तदनुसार ये वहां गये ते। इनके कौटुम्बियों ने फिर फुसलाने की चेष्टा की। लेकिन, ये अपनी की हुई प्रतिज्ञा से विचलित न हुए। और स्पष्ट शब्दों में सब लोगों से कह दिया कि "अब मैं संसार के माया जाल में पीछा आने वाला नहीं हूँ, आप कृपा कर मुझे तङ्ग न करें।" इधर दादी और भाई आदि ने भी बड़े करुणा-पूर्ण शब्दों में प्रार्थना की। लेकिन इन्होंने उस पर कुछ ध्यान नहीं दिया। अन्ततः उन्हें आज्ञापत्र लिखना पड़ा। जिसे लेकर अपनी दादी मां आदि के साथ ये चित्तौड़ आगये। बाद में श्री संघ ने बड़े समारोह के साथ सम्वत् १९६९ की फागुन सुदी ५ को दीक्षा दिलवाई। दीक्षा और आज्ञा दिलाने में श्री सङ्घ ने बड़ा प्रशंसनीय उद्योग किया। श्रीमान जीवनसिंह जी हाकिम साहिब ने राज्य की ओर से पूरी २ सहायता की। एक यूरोपियन टेलर साहिब ने तथा जैन श्री सङ्घ औ र अजैन बन्धुओं ने सम्वत् १९७० का चतुर्मास चित्तौड़ ही करने की प्रार्थना की। आप उस का कुछ निश्चित उत्तर न दे विहार कर निम्बाहेड़े पधारे। उसी समय चित्तौड़ से श्री सङ्घ व माहेश्वरी ब्राह्मण आदि डेपुटेशन लेकर वहां आये, और चतुर्मास करने का आग्रह किया। जिसे आपने स्वीकार

किया । अन्त में स्वीकृति की आज्ञा लेकर डेपुटेशन के सदस्य प्रसन्न वदन वापस चित्तौड़ लौट गये ।

प्रकरण २३ वां

सम्वत् १९७० चित्तौड़

यूरोपियन को श्रद्धा और भक्ति

निम्बाहेड़े से विहार कर केरी अठाणें होते हुए आप तारापुर पधारे। वहां पर अठाणें राव जी साहब की ओर से दो चोवदार आप के पास निमन्त्रण लेकर आये जिस में प्रार्थना की गई थी कि आपका उपदेश बड़ा बोधजनक और व्याख्यान बड़ा ही सरल एवम् मधुर होता है। बड़ी कृपा हो यदि आप यहां पधार कर हम लोगों को कृतार्थ करें। चरित्र नायक जी ने इस प्रार्थना को स्वीकार किया और आप अठाणें पधारे। वहां आप का उपदेश राव जी साहिब व लोगों को बहुत रुचिकर हुआ। अनेक त्याग हुये। और ख़ासा धर्म प्रचार हुआ।

वहां से विहार कर तारापुर, जावद, नीमच, निम्बाहेड़े, चित्तौड़ गंगार होते हुए आप हमीरगढ़ पधारे। वहां हिन्दू छीपों में ३६ वर्ष से वैमनस्य चल रहा था। और कई धर्मोपदेशकों के प्रयत्न पर भी उन में मेल होना एक प्रकार से अशक्य सा हो गया था। आप के उपदेश का उन लोगों पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि उन में मेल हो गया। इसी प्रकार वहां

आपके कारण माहेश्वरी महाजनों में भी मेल हो गया। और भी कई उपकार हुए।

वहां से विहार कर आप भिलवाड़े पधारे। जहां पर ३५ खटीकों ने हिंसा कृत्य बन्द कर दिया। फिर वहां से चतुर्मास के लिये आप चित्तौड़ पधारे। जैन, अजैन जनता तो पहिले ही उत्सुकता पूर्वक आप की प्रतीक्षा कर रही थी। बड़ी धूम धाम से आप का स्वागत हुआ। और बाजार में ही आप का सुललित व्याख्यान होने लगा। श्रीमान् जीवन सिंह जी साहब हाकिम तथा अन्यान्य प्रतिष्ठित जागीरदार राजकर्मचारी और यूरोपियन टेलर साहब नियमित रूप से आपके व्याख्यान में आने लगे। वहां भी ब्राह्मणों में कई वर्षों से पारस्परिक, ईर्षा, द्वेष से दो तड़ें हो रही थीं। वे भी आपके उपदेश से एक हो गये हाकिम साहब ने इस खुशी में सब को प्रीति भोज दिया -

महाराज श्री अपने व्याख्यान में भगवती सूत्र फरमाया करते थे, इसके कारण हाकिम साहिब की सारी मानसिक शङ्काओं का समाधान होता रहता था। धीरे २ जैन धर्म पर आप की बड़ी श्रद्धा हो गई। एक दिन यूरोपियन टेलर साहब ने परमाणु का कथन सुन कर चरित्र नायक जी से निवेदन किया कि यह एडियम (परमाणु)की चर्चा आपके ग्रन्थों में कब से है हमारे यहां तो इसका पता लगे २५० वर्ष हुये हैं, इस पर मुनि जी ने फरमाया कि हमारे यहां तो इसका खुलासा हुये २४०० वर्ष हो चुके हैं एक दिन साहब ने यह कहा कि

आप का धर्म वास्तव में प्रशंसनीय एवम् आदरणीय है फिर क्यों न सारा संसार इस पर अपनी श्रद्धा प्रकट करे आप के जो धार्मिक तत्व हैं वे हैं तो प्रशंसनीय, और साथ ही त्याग भी अनुकरणीय। परन्तु, संसार उन्हें स्वीकार करने में कठिनाई अनुभव करता है। आप के नियम, आचार विचार आदि का पालन करना बड़ा दुरूह है। इसमें ऐश आराम की गन्ध तक नहीं। इसी कारण अजैन संसार इस से विमुख रहता है। और इसी से आपके धर्म का सम्बन्ध उस ने ३६* के अङ्क की भांति मान रक्खा है। यदि इस धर्म में यह ख़ूबी और होती कि ऐश आराम भी करते रहते और धर्म भी साधते रहते तो इस ऐश आराम के ज़माने में भी संसार का अधिकांश भाग इसका अनुयायी हो जाता। इतना तो मैं अवश्य कहूँगा कि मुक्ति तो आप के मार्ग से जल्दी हो सकती है।

साहब की लेडी (मेम साहिबा) भी अपने नौकर के द्वारा प्रति दिन महाराज श्री की सेवा में अपना प्रणाम पहुंचाया करती थी। एक दिन उन्होंने महाराज श्री के लिये डाली भेजी। किन्तु, जो चपरासी लेकर आया था उसी के द्वारा आपने उसे वापिस करदी और कहला भेजा कि इसे ग्रहण करना तो एक ओर छूना तक हमारे यहां वर्जनीय है। इसके बाद एक दिन टेलर साहब एक शीशी में एक ऐसा यूरोपियन खाद्य-पदार्थ लाये कि जिस को जल में डालने से वह दूधसा बन जाय। उसको भी चरित्र नायक ने अंगीकार नहीं किया साहब ने बहुत कुछ प्रार्थना की कि यह पदार्थ

---

*३६ के अङ्कों में ३ और ६ एक दूसरे के प्रतिकूल रहते हैं।

निर्जीव है अतः आप इसे ग्रहण कीजिये। किन्तु जब आप ने इसे स्वीकार न किया तो साहब ने यह कह कर कि मैं इसे आप ही के भेंट के लिये लाया था अतः वापिस नहीं लेजा सकता शफ़ाखाने में भेज दिया। एक दिन टेलर साहब एक यूरोपियन कप्तान को साथ लेकर चरित्र-नायक जी की सेवा में आये जो एक अंग्रेज़ी सेना के अध्यक्ष (कर्नल) थे, और वहां अपनी फ़ौज के साथ आये हुए थे। वार्तालाप के अनन्तर चरित्र नायकजी ने उन्हें उपदेश दिया और कहा कि आप कम से कम यह प्रतिज्ञा तो अवश्य ही करें कि मोर और कबुतर का शिकार न करूंगा। कप्तान साहब ने उसी समय यह प्रतिज्ञा की। इस प्रकार टेलर साहब ने पूरे चतुर्मास तक आपकी ख़ूब भक्ति की।

उन दिनों वहां पर श्रीरंगूजी महासती की सम्प्रदाय के श्री सुंदर कुंअर जी महासती की शिष्यणी सोनाजी महासती ने ७५ की तपस्या केवल गरम जलके आधार पर की ७५ की पूर समाप्ति के दिन बाहर से बहुत लोग आये बड़ा आनन्द रहा। इधर हाकिम साहब भी जैन धर्म पर बड़ी श्रद्धा रखते थे। उन्हों ने भी सम्यक्त्व धारण की। उसके पश्चात् मार्गशीर्ष कृष्ण १ को चरित्र-नायक जी ने वहां से विहार किया। जैन, अजैन जनता तथा टेलर साहब आदि नगर निवासी आपको विदा करने के लिये आये सब यही चाहते थे कि आप यहां से न पधारें। इस प्रकार मुनिजी बंगार पधारे। वहां भी पारस्परिक वैमनस्य से अनेक जातियों में अनैक्य था। उन्हें आपने अपने उपदेश से मिलाया। वहां से विहार कर हमीरगढ़ बिगोद होते हुए आप

श्रीमान् राजासाहिब अमरसिंहजी बनेड़ा (मेवाड़)

परिचय-परिशिष्ट प्रकरण १

A.5252-Lakshmi Art, Bombay. 8
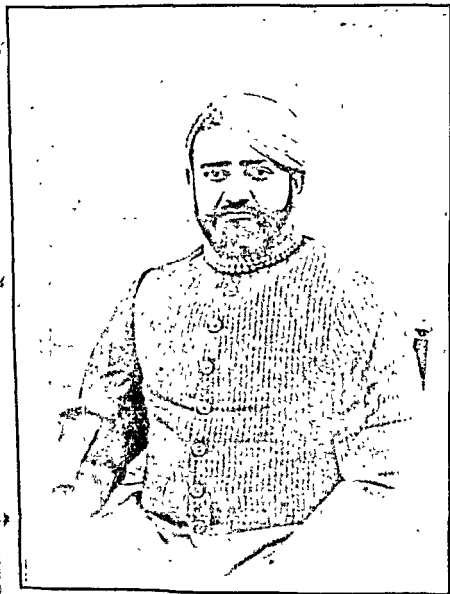
नन्दराय पधारे । वहां कई ओसवाल अजैन होरहे थे उन्हें प्रतिबोधित कर पुनः जैनी किये । नन्दराय से विहार कर जहाजपुर पधारे जहां श्वेताम्बर स्थानक वासियों के केवल ५ घर हैं । परन्तु आप के उपदेशामृत के तो जैन अजैन सभी लोग प्यासे हैं । अतः श्रावकों के इतने थोड़े घर होते हुए भी श्रोताओं की संख्या ३००० के लगभग होती थी । वहां भी अजैनों में मन मुटाव होकर अनैक्यता हो रही थी उस को आप ने दूर किया । कई लोगों को दुर्व्यसनों से छुड़ाया । दिगम्बर और माहेश्वरी लोगों ने वेश्यानृत्य, आतिशबाज़ी कन्या विक्रय आदि सात प्रकार की कुरीतियों के निवारण की प्रतिज्ञा की । एक दिन आप शौच-कर्म से निवृत्त होने को जा रहे थे कि मार्ग में वेश्याओं ने खड़े होकर प्रार्थना की कि "मुनिवर आप हमारी रोज़ी पर लात मारने को आये हैं आपने वेश्या नृत्य बन्द करवा कर हमारी रोज़ी छीन ली ....आदि ।" इस पर मुनि जी ने इतना ही फ़रमाया कि कुरीतियों का निवारण करना हमारा धर्म और कर्तव्य है ।

एक दिन क़िले में से श्रीमान् जागीरदार साहब की ओर से निमन्त्रण आया तब आप वहां पधारे और सब को उपदेश दिया । जागीरदार साहब बड़े प्रसन्न हुए ३० बकरे अमर किये गये । वहां से विहार कर आप टोंक पधारे । विदा करने के लिये नगर निवासी आप के साथ बहुत दूर तक आये और स्त्रियों ने मङ्गल गान कर आप को विदा किया । टोंक में भी सर्व साधारण में आप का ओजस्वी व्याख्यान हुआ । हिन्दू मुसलमान सब लोगों ने मुक्त कण्ठ से आपके व्याख्यान की प्रशंसा की । बीच २ में हर्षपूर्वक खूब करतलध्वनि हुई । लोग

कहने लगे कि अभी तक आपके किसी धर्मानुयायी का ऐसा ओजस्वी व्याख्यान हमारे सुनने में नहीं आया। यह हमारा सौभाग्य है जो इस नगरी में आप जैसे महात्मा का पदार्पण हुआ। वहां से विहार कर आप सवाई माधोपुर पधारे। वहां भी आप के उपदेश से अच्छा उपकार हुआ। ३० खटीकों ने खटीकपना अर्थात् कसाईपने का धन्धा छोड़ दिया और मज़दूरी काश्तकारी करने लगे। इस समय वे लोग बड़े सुखी हैं और कह रहे हैं कि आप ने हमारा जीवन सुधार दिया हम जब कसाईपना करते थे उस समय हमको भर पेट अन्न भी नहीं मिलता था। और न पहिनने को वस्त्र मिलते थे। परन्तु अब सुख से जीवन व्यतीत कर रहे हैं। यह सब चरित्र नायक महोदय के ही शुभाशीर्वाद और उपदेश का फल है।

इसी समय आगरा श्री सङ्घ भी आप की सेवा में वहां आ उपस्थित हुआ। दर्शन लाभ कर वहां पधारने के लिये सब लोगों ने बड़े आग्रह से प्रार्थना की जिसको आपने स्वीकार किया। वहां से विहार कर आप श्यामपुरे पधारे वहां से गंगापुर। गंगापुर आकर आप को सन्ध्या हो गई। गांव में ठहरने की समुचित व्यवस्था और लोगों की अरुचि देख कर आप ने गांव से बाहर श्मशान की छत्री में ही निवास किया। गांव में एक ही श्रावक रहता था। जब उसको मालूम हुआ तो वह आया और गांव में ले चलने को बहुत आग्रह करने लगा। उस को जब आप ने स्वीकार न किया तो वह छत्री के आस पास टट्टे आदि की आड़ करने लगा। क्योंकि सर्दी के दिन थे। परन्तु चरितनायक जी ने उसको वैसा करने से मना कर के कहा कि हरिण, ख़रगोश आदि जानवरों

के पास तो बिलकुल कपड़े नहीं होते किन्तु वे नंगे ही फिरते हैं। क्या उन के प्राण नहीं हैं। आखिर बड़े कड़ाके की शीत में रात्रि भर आपने वहीं विश्राम किया। प्रातःकाल प्रातिलेक्षणा कर आप गांव, में पधारे और दिगम्बर भाइयों की धर्मशाला में निवास किया। और उस श्रावक से पूछा कि व्याख्यान कहां होगा। इसपर वह घबराया और बोला कि महाराज व्याख्यान तो यहां कहां होगा। मैं और मेरा लड़का दो ही व्यक्ति हैं। इस पर आपने बाज़ार में व्याख्यान देने को कहा और बोले कि डरता क्यों है। तुम दो हो सो ही बहुत हो। कहा भी है "दो, जहां सौ।" अस्तु, आप उसी श्रावक की दुकान पर जा विराजे। २-३ शिष्य साथ में थे उन्होंने मंगलाचरण किया। जिसे सुनकर कुछ लोग आये और आप का व्याख्यान आरम्भ होने पर तो लोगों के झुण्ड के झुण्ड आने लगे। जब व्याख्यान समाप्त हुआ तो लोग कहने लगे कि महाराज ! हम ऐसा नहीं जानते थे। इसी से व्याख्यान में देर से उपस्थित हुए। कल जल्दी आयेंगे। कृपया २-१ दिन और विराज कर हमें अपना उपदेशामृत पान कराइये। इसे चरित्रनायक जी ने स्वीकार किया और दो व्याख्यान और दिये। उसके पश्चात् वहाँ से विहार कर भरतपुर पधारे।

प्रकरण २४ वां

संवत् १९७१ आगरा

व्याख्यानों की धूम
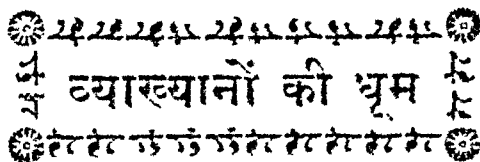
भरतपुर से आप आगरे पधारे। वहां की जैन जनता वर्षों से आपके दर्शन को लालायित थी जाते ही आपने लोहामंडी में निवास किया। पहिले जैन-धर्मोपदेशकों के जितने भी व्याख्यान वहां हुए उन सब से आपके व्याख्यान में श्रोताओं की संख्या अधिक होती थी। कारण कि आपका व्याख्यान न केवल जैन-सम्प्रदाय पर ही, प्रत्युत सर्वसाधारण को उपयोगी हो ऐसा होता था। वहीं पर श्री महावीर स्वामी का उत्सव भी बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस के पश्चात् आप मान-पाड़े में पधारे वहां एक अग्रवाल बन्धु ब्रजलाल जी ने आप से आज्ञा लेकर आपके सार्व जनिक व्याख्यान की योजना की। ५००० हेण्डबिल छपवा कर वितरण किये। और सब प्रकार का व्यय अपने ऊपर लिया। निर्दिष्ट समय पर बेलनगञ्ज में आपका बड़ा ओजस्वी और मनोरम व्याख्यान हुआ। श्रोताओं की उपस्थिति खूब थी धौलपुर निवासी सुप्रसिद्ध साहित्यरत्न ला० कन्नोमलजी एम. ए. सेशन जज भी वहां आपहुंचे थे उन्होंने व्याख्यानकी सराहना करते हुए कहा कि ऐसे महात्मा का एक व्याख्यान भी लोगों का उद्धार कर सकता है उन्होंने धौलपुर के लिये चरित्रनायकजी से बहुत प्रार्थना की परन्तु उसी समय

लश्करश्रीसंघ भी वहां आगया था उसनेबहुत अनुनय विनय की जिस को आप अस्वीकार न कर सके। इस पर आगरे वालों ने सोचा कि यदि अभी हम लोग यहां के लिये चतुर्मास की स्वीकृति न लेलेंगे तो यह लाभ लश्कर वालों को मिल जायगा। यह सोचकर यहां वालों ने इसके लिये पूर्ण प्रयत्न किया और अन्त में स्वीकृति लेकर ही छोड़ी। आपने स्वीकृति तो देदी परन्तु यह शर्त रखी कि यदि कहीं कोई बड़ा उपकार या दीक्षा होने वाली होगी तो उसे मैं टाल न सकूंगा।

इस प्रकार कुछ दिन और आगरे में उपदेश दे आपने धौलपुर के लिये विहार किया और वहां कुछ व्याख्यान दे मुरेना पधारे। वहां स्याद्वाद वारिधि गोपालदास जी बरैया तथा दिगम्बर जैन ऋषभ ब्रह्मचर्य्याश्रम के अध्यापकों की ओर से आपके लिये प्रार्थना आई कि यहां पधार कर धर्मोपदेश करें। इस पर आपने फ़रमाया कि हम रात्रि के समय स्थान से अति दूर नहीं जासकते ऐसा हमारा नियम है। इस बात को जान कर वे लोग चुप होगये। किन्तु,उपदेश की लालसा बनी रही। अधिक निवास करने का अवकाश न था। अतः सूर्योदय होने पर प्रति लेक्षणा कर चरित्र नायकजी ने लश्कर की ओर विहार करदिया। और यथा समय लश्कर पधारे। सर्राफ़ाबाज़ार में आपका व्याख्यान हुआ। श्वेताम्बरों के लगभग ४० घर होते हुए भी ७००-८०० की उपस्थिति होना साधारणसी बात थी। सभी धर्मानुयायी व्याख्यान में योग देते थे। राज्यकर्मचारियों में मेम्बर श्यामसुन्दरलालजी तथा सर सूबा बालमुकन्द भैया साहब के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं आप लोगों ने चरित्तनायक जी से चतुर्मास के लिये भी

आग्रह पूर्वक प्रार्थना की। इसके उत्तर में आपने फ़रमाया कि बात तो ठीक है। परन्तु, हमारे दो साधु आगरे हैं उनसे बिना पूछे हम कुछ नहीं कह सकते । यह अवश्य है कि यहां विशेष उपकार की सम्भावना है। ऐसा कह कर आप आगरे पधारे और उन साधुओं से सम्मति ले लश्कर के लिये विहार करते ही थे कि उपाश्रय की सीढ़ियें उतरते हुए श्रीमान् दुर्गाप्रसादजी के भाई श्रीमान कस्तूरचन्द जी आन पहुँचे और विहार का ढंग देखकर आश्चर्यान्वित हो प्रार्थना करने लगे कि आप यहां से विहार करें यह तो स्वप्न मे भी न होगा। इस प्रकार और भी कुछ बातें कहते हुए वे गद् २ होगये और उन्हों ने चरितनायक जी के चरण पकड़ लिये। बोले कि हम कदापि यहां से आप को विहार न करने देंगे। इस पर आपने विचार किया कि लश्कर में उपकार अच्छा होगा इस में तो कोई सन्देह नहीं परन्तु, यहां से विहार करने में इन श्रावकों का दिल दुख पाता है यह भी ठीक नहीं। अन्त में वहीं ठहरना ठीक समझा । सब लोगों का चित्त प्रफुल्लित होगया उसी समय सर्व साधारण को सूचना देदी गई कि मान पाड़े के उपाश्रय में प्रतिदिन प्रातःकाल प्रसिद्ध व्याख्याता का व्याख्यान होगा। उसके अनुसार व्याख्यान होने लगा कुछ ही दिन में श्रोताओं की संख्या इतनी अधिक होगई कि व्याख्यान की जगह बढ़ानी पड़ी जिस के चिन्ह अब तक मौजूद हैं। उस चतुर्मास में बहुत उपकार हुआ इसका विस्तृत उल्लेख यथा समय क्षमा पत्रा में होचुका है। स्थानाभाव से यहां नहीं दिया गया।

इस प्रकार दो मास तक आप का निवास मान पाड़े में

रहा। इस प्रकार दो मास लोहामंडी में चतुर्मास की समाप्ति का दिन निकट ही था कि आपको गुरु जवाहर लालजी महाराज की अस्वस्थता का संवाद मिला। जिस में लिखा था कि आप आगरे से मन्दसौर की ओर विहार करें। अतः चतुर्मास पूर्ण होते ही चरित नायक आगरे से शीघ्र विहार कर कोटे पधारे विश्राम के लिये वहां दो रात्रि निवास किया वहां से विहार करते समय मार्ग में एक खटीक सोता हुआ मिला जिस के पास दो बकरे बंधे हुए थे। आपने अनुमान से जाना कि यह कोई वधिक है। कन्हैयालाल जी और जुहारमल जी श्रावक आप के साथ थे। उन्होंने उसे जगाया तो अनुमान सत्य निकला। उसको आपने उपदेश दिया कि:– "तू यह पाप किस के लिये करता है। जो कर्म करेगा उसका फल भी उसी को मिलेगा कोई दूसरा मनुष्य भोगने को थोड़ा ही आयगा। तेरे शरीर पर सुई चुभोई जाय तो तुझे कैसा कष्ट हो। इसी प्रकार क्या इन जानवरों को तकलीफ़ नहीं होती। तुम मनुष्य होकर हिंसा करते हो जिनका दया करना मुख्य धर्म है। तुमने हिंसा करने वाले को कभी सुखी भी देखा है ? देखो

तुम्हारे शरीर पर पूरे वस्त्र भी नहीं हैं। और मेरा अनुमान है कि तुम्हारे घर में खाने को भी काफ़ी साधन न होगा माधोपुर में भी मेरे उपदेश से ३०, ३५ करीब खटीकों ने वध करना छोड़ दिया और वे व्यापार खेती करने लगे तभी से सुखी हैं। क्या संसार में तुम्हारे लिये और कोई धन्धा नहीं है। यदि अपना भला चाहो तो मेरा कहा मान कर इस धन्धे को छोड़ परभव के लिये प्रभु का भजन करो। दया करना मनुष्य मात्र का धर्म है। देखो! तुलसीदास जी ने क्या ही अच्छा कहा है:-

"दया धर्म का मूल है पाप मूल अभिमान"
तुलसी दया न छांडिये, जब लग घट में प्रान ।"

यह उपदेश सुन कर वह खटीक कहने लगा कि हां बाप जी, आप कहते हैं सो सब ठीक है। मैं परमात्मा को सर्व व्यापी मान कर चन्द्र सूर्य की साक्षी से–मैं यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि जब तक जीऊंगा कभी इस धंधे को नहीं करूंगा। परन्तु आपके साथ वाले भक्तों से मेरी प्रार्थना है कि ये जो दो बकरे मेरे पास हैं और ३० बकरे मेरे घर पर हैं इनको खरीद कर मुझे रुपये देदें। ताकि इनके द्वारा मैं दूसरा धन्धा कर सकूं। इस पर दयालु श्रावकों ने उस खटीक को रुपया देना स्वीकार किया। और उसका कार्य कर दिया।

वहां से विहार कर सींगोली होते हुए आप सर वाणिये पधारे और फिर नीमच मल्हारगढ़ होते हुए मन्दसौर। इस समय श्री जवाहरलाल जी महाराज का स्वास्थ्य ठीक होगया था। इस कारण आपने आगामी चतुर्मास के लिये पालनपुर श्री संघ की प्रार्थना स्वीकार करली थी। पूज्य श्री लाल जी महाराज भी वहां विराजते थे। गंगापुर श्री संघ ने उस समय आकर प्रार्थना की कि थोड़े दिन बाद वहां तेरह-पन्थियों का पाट महोत्सव होगा उस समय यदि बाईस सम्प्रदाय के सुयोग्य सन्तों का वहां विराजना होगा तो बड़ा उपकार होने की सम्भावना है। पूज्य श्री लाल जी महाराज के यह बात जच गई कि वेशक यही होना चाहिये। तदनुसार पूज्य श्री ने हमारे चरित्र नायक जी को आज्ञा दी कि तुम वहीं जाओ। तब आपने उत्तर दिया कि इस अवसर पर

वहां आपकी आवश्यकता है तो प्रत्युत्तर में पूज्य श्री लालजी महाराज ने फ़रमाया कि तुम्हारा व्याख्यान प्रभावोत्पादक होता है, जहां एक भी स्थानक वासी का घर नहीं होता वहां भी तुम्हारे व्याख्यान में सैंकड़ों अजैन आते हैं और उन पर तुम्हारे कथन का असर पड़ता है अतः तुम ही गंगापुर जाओ। यह आज्ञा पाकर चरित्र नायक जी ७-८ कोस का विहार कर नीमच निम्बाहेड़े होते हुए गंगापुर पधारे। वहां चौक बाज़ार में ठहरे और प्रातःकाल सायंकाल वहीं व्याख्यान देने लगे। श्रोताओं से चारों ओर के मार्ग ऐसे ठसाठस भर जाते थे कि मनुष्य भी इधर से उधर न जा सके। उन दिनों उज्जैन से सरसूबा बालमुकुन्द भैया साहब दौरे में वहां आये हुए थे। वे एक रोज़ आपके दर्शन को आये। दर्शन कर प्रसन्नता प्रगट की। आपने उन से कहा कि आप अधिकारी हैं वाणी द्वारा ही बहुत कुछ उपकार और पुण्य उपार्जन कर सकते हैं। उज्जैन के परगने में जितने देवी देवताओं के स्थान हैं उन पर जो हिंसा होती है वह बन्द करादें तो बड़ा अच्छा काम हो। इस पर आपने वचन दिया कि उज्जैन पहुंच कर मैं अवश्य इसके लिये प्रयत्न करूंगा। इसके अतिरिक्त और भी बहुत सा उपकार हुआ वहां १०-१२ घर मोचियों के थे उन्हों ने चरित्र नायक जी के उपदेश से मदिरा मांस का सेवन छोड़ दिया। बहुतों ने जैन धर्म के तत्वों से परिचय प्राप्त किया, कितनों ही ने नवकार मंत्र, सामायिक, प्रतिक्रमण आदि सीखा। यहां तक धर्म ध्यान के लिये उन्होंने अपना एक उपाश्रय भी नियत कर लिया। सायंकाल को वहीं घर वे मुंहपत्ति * बांध कर सामायिक प्रतिक्रमणादि

* मुख वस्त्रिका।

करने लगे जो अब तक जारी है प्रतिवर्ष संवत्सरी के पौष-धादि भी करते हैं। इस प्रकार और भी कई जाति के लोगों ने अभक्ष्य त्याग किया जिसे बराबर निभा रहे हैं।

वहां से विहार कर आप लाखोरा होते हुए रास्मी पधारे वहां भी आपके उपदेश से कई जाति के लोगों ने अभक्ष्य त्याग किया और एक देवी के यहां जो प्रतिवर्ष भैंसे का वध होता था उसको बन्द किया। इसके पश्चात् वहां से विहार कर गरुण्ड होते हुए आप पोटला पधारे। वहां भी आपके उपदेश से माहेश्वरियों में जो कई वर्ष से फूट हो रही थी, मिट गई वहां से विहार करते समय जैन अजैन लोग आपके उपदेश से अतृप्त रहे फिर चरित्रनायक जी वरिये, कोसीथल रायपुर और मोग्वंणदे होते हुए आमेट पधारे इन स्थानों पर अच्छा उपकार हुआ अरणोंदा के ठाकुर साहब हिम्मतसिंह जी ने शिकार करने का याव-ज्जीवन त्याग किया और कोसीथल के ठाकुर साहब श्रीमान् पद्मसिंह-जी ने वैशाख श्रावण और भाद्रपद इन तीन मास में शिकार न खेलने की प्रतिज्ञा की। साथ ही उनके जेष्ठ पुत्र जवानसिंह जी ने वैशाख व भाद्रपद में शिकार न खेलने का त्याग किया।

प्रकरण २५वां

सम्वत १९७२ पालनपुर
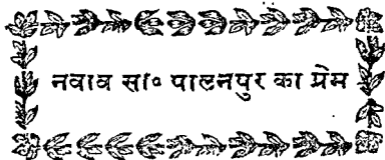
भिन्न २ स्थानों में उपकार कराते हुये आप आमेट पधारे वहां के राव जी श्रीमान शिवनाथसिंह जी साहब महाराज श्री के दर्शन करने को आये। व्याख्यान मण्डप राव जी साहब के महलों के सामने ही सजाया गया था। श्री महावीर स्वामी का महोत्सव बड़े समारोह से मनाया गया ' वहां से विहार कर चार भुजा जी घाणेराव होते हुये सादड़ी (मारवाड़) पधारे। और फिर सोजत, पाली, सान्डेराव होते हुये पालनपुर की ओर मार्ग में एक गांव में लगभग ११ बज गये वहां एक भक्त ने आप को देखते ही गांव में जाकर ओसवालों के मोहल्ले में जाकर कहा कि महाराज श्री पधारे हैं उनके लिए गरम जल करना। इस बात को २—४ और साधुओं ने सुना जो गोचरी के लिये उधर आये थे। उन्होंने इस का ज़िक्र चरित्रनायक जी से कर दिया, बस यह सुनते ही चरित्रनायक जी कड़ी धूप में बिना अन्न जल ग्रहण किये वहां से विहार कर गये, लोगों के अनुरोध से आप ने कुछ छाछ का सेवन किया परन्तु आगे भी प्रत्येक गांव में आप छाछ ही लेते रहे, इस

प्रकार धन्नेरी जा रहे थे कि मार्ग की एक नदी में वहां के श्री पूज्य जी से आपकी भेंट हो गई, वे रथ में बैठे हुए उधरसे जा रहे थे और आप इधर से पधार रहे थे --आपको देखते ही श्री पूज्य जी ने रथ से उतर कर विधि पूर्वक वन्दना की। वार्तालाप के अनन्तर उन्होंने आप से जल के लिये आग्रह किया और कहा कि मैं हमेशा गरम जल पीता हूँ उसका कुंजा मेरे पास भरा हुआ है - आप ग्रहण करें तब आप ने उसे ग्रहण किया, श्री पूज्य जी ने प्रार्थना की कि मैं आवश्यक कार्य वश जा रहा हूँ - अन्यथा आप के साथ ही धन्नेरी लौट चलता आप कृपा पूर्वक धन्नेरी में मेरी हवेली पर ही ठहरें वहां नौकर सब प्रस्तुत हैं। वहां से एक दूसरे से विदा हुये और एक रात धन्नेरी में निवास कर आबू रोड़ पधारे पालनपुर श्री संघ को खबर मिलते ही वह आया और आपका प्रेमपूर्वक स्वागत कर नगर में चतुर्मास के लिये ले गया, इस प्रकार सम्वत् १९७२ का चतुर्मास आप का पालनपुर हुआ पीताम्बर भाईकी धर्मशाला में आप का निवास हुआ, व्याख्यान में सर्वसाधारण आते थे, नवाब साहब को भी यह सूचनामिली अतः वे एक हाफ़िज़ और एक पंडित को लेकर व्याख्यान के समय दर्शनार्थ आये, आप के सार-गर्भित व्याख्यान सुनकर बड़े प्रमुदित हुये और अपने सौभाग्य की बड़ी सराहना करने लगे कि मुझे ऐसा सुयोग मिला। व्याख्यान की समाप्ति पर उन्होंने चरित्रना-यक से तात्विक-रहस्य पर बहुत कुछ वार्तालाप की। उसके कारण नरेश को और भी अधिक आनन्द हुआ। वे लगभग

२—३॥ घण्टे तक चरित्रनायक जी की सेवा में ठहरे। पश्चात् जब जाने लगे तो उस ओर बढ़े जहां मुनि श्री शङ्करलाल जी महाराज और मुनि श्री छगनलाल जी महाराज तथा मुनि श्री प्यारचन्द जी महाराज सिद्धान्त कौमुदी का अध्ययन कर रहे थे। वहां पहुंच कर दरवाज़े से आगे बढ़ते ही थे कि एक ज्ञान खाते की पेटी की ओर दृष्टि गई। उस के लिये उन्होंने पूछा कि यह क्या है? उत्तर में कहा गया कि जो लोग आते हैं इस में कुछ न कुछ ज्ञानवृद्धि के लिये द्रव्य डालते हैं इस पर उन्होंने उसमें४०) रु० डाले इसके पश्चात् उनके सन्देशे बराबर आपके पास आया करते और लोगों से प्रति दिन व्याख्यान के विषय में वे पूछताछ किया करते। उन की इच्छा तो यही थी कि प्रति दिन ही व्याख्यान सुनें परन्तु वृद्धावस्था और अशक्तता के कारण आप अपनी इच्छापूर्ति न कर सके। एक दिन फिर आये। उस दिन के व्याख्यान में खूब उपकार हुआ इसके पश्चात मन्दसौर से तार द्वारा सूचना मिली कि बड़े महाराज श्री का स्वास्थ्य ठीक नहीं है अतः आपको पालनपुर से एक दम विहार करना पड़ा। आबू रोड से लगभग ३ कोस पहुंचने पर खबर मिली कि बड़े महाराज देवलोक होगये तब आप चतुर्मास के शेष दिन पूरे करने को वापिस पालनपुर पधार गये। शीतकाल प्रारम्भ होगया था। यद्यपि सरदी विशेष न थी परन्तु नवाब श्री पालनपुर ने चरित्रनायक के लिये दो बहुमूल्य दुशाले मंगवाये और अपने कर्मचारी मघाभाई से कहा कि:—"केम मघाभाई! आ दुशालानी जोड़ महाराज श्री-ए आपीए ते सारी केम" इस के उत्तर में मघा भाई बोले कि "महाराज श्री दुशालानी जोड़े न थी लेता केम! के परिग्रहना

त्यागी छे जो ते लेता होत तो अमें शा माटे न थी आपता" इस पर दरवार ने कहा कि:—"नो महराज श्री नी शूं भक्ति करीअे छीअे" तव मवाभाई बोले कि:—"दया तथा परोपकार माँ वधारे लक्ष्य आपवो एज महाराजश्री नी खरो खरे सेवाछे" आदि। यहांका चतुर्मास पूर्ण कर महाराज श्री डीसा केम्प होते हुए धानेरे पधारे। मार्ग में पालनपुर नवाव सा० के दामाद श्री० जवरदस्त खां जी ने आकर साक्षात किया। चरित्रनायक जी के उपदेश पर उन्होंने कई जीवों पर गोली न चलाने की प्रतिज्ञा की। नवाव साहव पालनपुर ने पहिले ही से सव राजकर्मचारियों को सूचित कर दिया था कि महाराज श्री की सेवा में किसी प्रकार की त्रुटि न हो। तदनुसार राजकर्मचारियों ने सव प्रकार का समुचित प्रवन्ध रक्खा। धानेरे के हाकिम साहव ने आप के पदार्पण पर वहां व्याख्यान होने की इच्छा प्रगट की। उसको स्वीकार कर आप ने व्याख्यान दिया जिसके फल स्वरूप वहां अच्छा त्याग-उपकार हुआ एक राजपूत सरदार ने सजोड़ (पत्नी सहित) व्रह्मचर्य धारण किया फिर वहां से विहार किया तो मार्ग के एक नगर में आप के व्याख्यान के लिये जनता एकत्र हुई मिली वाजे गाजे के साथ आप का स्वागत हुआ। किंतु, आप ने वाजा वन्द करवा कर शांति पूर्वक नगर में प्रवेश किया। वहां व्याख्यान स्थल सजाया गया था उससे भी आपने परहेज़ किया इस प्रकार शुद्ध संयम का पालन करते हुए झालोरगढ़ पधारे। वहां भी सभा करके जनता को उपदेश किया। उसी समय वालोत्तरा श्रीसंघ ने आकर आग्रह पूर्वक वहां पधारने की प्रार्थना की जिसे स्वीकार कर आप वालोत्तरे

पधारे। इससे पहिले आप का वहां पदार्पण नहीं हुआ था। हां, जनता में आप की ख्याति अवश्य थी। अतः वह आपके दर्शन कर व्याख्यान लाभ लेने को उत्सुक थी सैकड़ों नर नारी इकट्ठे होगये थे। यथा समय व्याख्यान हुआ और सर्व-साधारण को आपने कोई सभा संस्था खोलने की प्रेरणा की। लोग नहीं जानते थे कि सभा क्या होती है। अतः आप ने उसका विवेचन कर उनको परिचित किया। जिसको समझ कर सब ने एक सभा स्थापित करने की योजना की। लोग चाहते थे कि आप कुछ दिन और विराजें परन्तु, साथ ही यह जान कर कि मुनिवर अप्रतिबद्ध विहारी* हैं, सन्तोष किया। इस प्रकार चरित्रनायक जी आगे विहार कर नगर के निकटवर्ती एक स्थान पर ठहरे। सूर्योदय न होने से पूर्व ही पञ्चभद्रे के श्रावकगण आगये और निकलने के दोनों मार्ग रोक कर बैठ गये। उनसे महाराज श्री ने फ़रमाया कि अभी अवसर नहीं है। परन्तु वे लोग न माने। तब आप को पञ्च-भद्रे पधारना पड़ा। और शंकरलाल जी तथा प्यारचन्द जी महाराज को आज्ञा दी कि पाली जाओ। उधर आप ने पञ्च-भद्रे में दो व्याख्यान दिये ही थे कि पाली से प्यारचन्द जी महाराज की अस्वस्थता का समाचार आगया। तब आप विहार कर वहां से पाली पधारे। वहां ठहर कर आपने

---

* बंधन रहित, स्वतन्त्र विचरने वाले।

स्वयम् औपधादि उपचार किया। फिर प्यारचन्द जी महाराज का स्वास्थ्य ठीक होने पर वहां से विहार कर समदड़ी होते हुए जोधपुर पधारे।
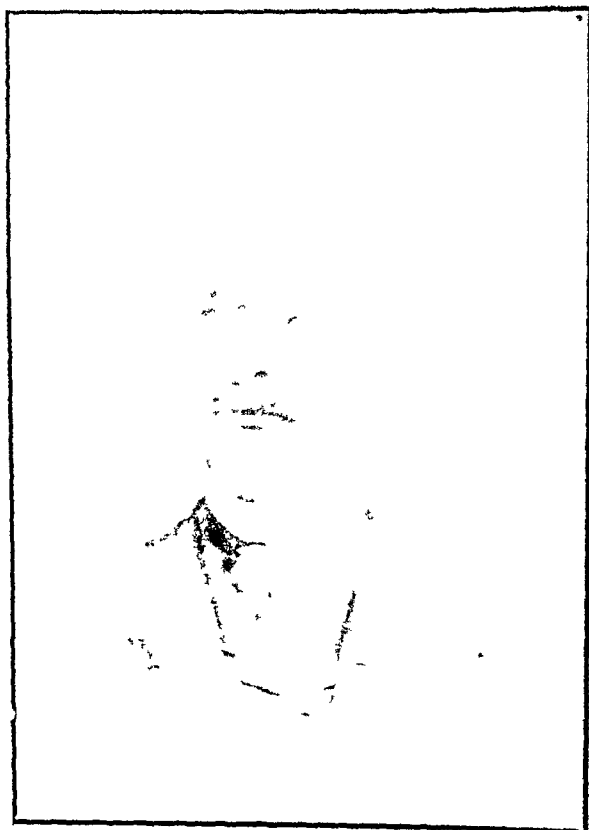
चरित्र नायकजीके भक्त युरोपियन टेलर साहिब

एफ. जी. टेलर नीमच छावनी.

परिचय-प्रकरण २३

A 5252—Lakshmi Art, Bombay, 8

प्रकरण २६ वां।

सम्वत् १९७२ जोधपुर।

जैनेत्तर जनता और जैनधर्म

जोधपुर में किसी श्रावक से परिचय नहीं था। अतः नगर में प्रवेश करते समय आपने यह विचार किया कि जो प्रथम वन्दना करे उसी से ठहरने का स्थान पूछना। बाज़ार में पहुंचने पर लोग वन्दना करने को खड़े हुए तो पूछा कि भाइयो! निवास स्थान कहां है? तब सबने प्रार्थना की कि खूंटे की पोल में है, वहां पधारिये। यह स्थान बाज़ार के चुक्कड़ पर ही था चरित्रनायकजी उसी जगह पर ठहर गये। लोगों को आपके पदार्पण के समाचार मिले। किन्तु, सब को नहीं। क्योंकि प्रथम तो शहर बड़ा। दूसरे ओसवालों की बस्ती अधिक। तीसरे चरित्रनायक जी से लोग अपरिचित। अस्तु। दूसरे दिन आपका व्याख्यान श्रीयुत् शुभलाल जी कायस्थ के नोहरे में हुआ। उसी दिन से नगर भर में ख़बर फैलगई और लोग उमड़ कर दर्शन करने तथा उपदेश ग्रहण करने को व्याख्यान में आने लगे। अब तो उपस्थिति इतनी होने लगी कि स्थानाभाव होगया। श्रीयुत पंचोली शुभलाल जी ने दूसरा मकान (अपनी हवेली) तजवीज़ किया। परन्तु, दो एक दिन के पश्चात् वहां भी तंगी होने लगी। महावीर

स्वामी का जन्मोत्सव निकट आगया था। अतः चैत्र शुक्ला १३ को वह आनन्द पूर्वक मनाया गया। अब तो लोग चतुर्मास के लिये प्रार्थना करने लगे। इस पर आपने उत्तर दिया कि हमारे गुरुवर पाली में विराजते हैं उनसे प्रार्थना करनी चाहिये। तब श्री संघ तथा अन्यान्य जाति के लोग पाली गये और गुरुवर से जोधपुर के चतुर्मास की आज्ञा लेली। सब सन्तोंके ठहरनेको आउवा की हवेली नियत हुई। चरित्रनायक जी भी वहाँ पधार गये। इस प्रकार सब सन्तों का संगठन एक ही स्थान पर होगया। आउवा की हवेली के चौक ही में व्याख्यान भी होने लगा। सर्व साधारण व्याख्यान में योग देते सरकारी कर्म्म चारियों में फ़राश खाने के दारोगा श्रीयुत नानूराम जी माली ने विचार किया कि कुचामण की हवेली में व्याख्यान कराना और राज्य मण्डली को भी निमन्त्रित करने। अस्तु। वैसा ही किया गया। जनता खूब इकट्ठी हुई। महाराजा श्री विजयसिंह जी साहब, रायबहादुर पं० श्यामबिहारी मिश्र बी०ए० रेविन्यू मेम्बर रिजेन्सी कौन्सिल, राव साहिब लक्ष्मणदासजी बार- एट-ला—चीफ़जज आदि २ कई महानुभावों ने व्याख्यान का लाभ लिया। कुछ दिन के पश्चात् चतुर्मास के लिये भैंसवाड़े की हवेली में तो निवास किया और आवर की हवेली में व्याख्यान होने लगा। अब तो जैन, अजैन, वैष्णव; मुसलमान, सभी लोग बहुत बड़ी संख्या में आने लगे। संवत्सरी के दिन जैन श्रावकों के अतिरिक्त अनेक अजैन लोगों ने भी निराहार उपवास व्रतादि किये। कई लोगों ने तो लगातार ८-८ उपवास (अठाई) किये इसके अतिरिक्त और भी धर्म प्रचार तथा त्याग हुआ। इस प्रकार सफलता पूर्वक चतुर्मास पूर्ण कर आपने पाली की ओर विहार

किया। क्योंकि गुरुदेव का चतुर्मास इस वर्ष वहीं था और वे अस्वस्थ थे। कुछ दिन के पश्चात् गुरुवर स्वस्थ होगये तो आपको आज्ञा मिली कि हम विहार करते हैं तुम गांवों में विहार करते हुए नये शहर आजाना। तदनुसार हमारे चरित्रनायक जी बगड़ी, बिलाड़े, आदि स्थानों में त्याग, धर्म प्रचार और उपकार कराते हुए व्यावर (नया नगर) पधारे। वहां कांकरिया जी के मकान में निवास किया। स्थेवर मुनि श्री नन्दलाल जी महाराज, हीरालालजी महाराज अन्य मुनियों के साथ वहीं विराजते थे। वहीं पर आपके व्याख्यान प्रारम्भ हुए। अजैन लोगों ने सर्व साधारण के लाभार्थ बाज़ार में व्याख्यान होने की इच्छा प्रगट की। देशभक्त सेठ दामोदर दासजी राठीने अपनी ओर से विज्ञापन छपवा कर वितरण किये। तदनुसार "प्रेम और ऐक्यता" पर आपका व्याख्यान सनातनधम स्कूल में हुआ। राठी जी ने व्याख्यानके अनन्तर चरित्रनायकजी के गुण-गान और प्रेम शब्द की व्याख्या पर कुछ कहा। हैडमास्टर जी के आग्रह से दूसरा व्याख्यान फिर वहीं हुआ।

अजमेर श्री संघ की ओर से प्रार्थना आरही थी और श्रीमान् घनस्याम दासजी ने भी वहां आकर आप से अजमेर पधारने की विनय की। अतः वहां से विहार कर आप अजमेर पधारे। वहां के श्री संघने व्याख्यान श्रवण कर अपने को कृतार्थ समझा। श्रीमान् रायबहादुर छगनलालजी साहब, दीवान बहादुर श्रीमान् उम्मेदमल जी साहब लोढ़ा, श्रीमान मगनमलजी साहब, श्रीमान् गाढ़मलजी लोढ़ा आदि ने समस्त संघ की ओर से आगामी सम्वत् १६७२ के चतुर्मास के लिये प्रार्थना की। जिसे स्वीकार कर आपने कृष्णगढ़ की ओर विहार किया।

प्रकरण २७ वां ।

सम्वत् १६७४ अजमेर
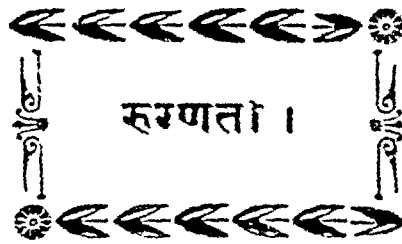
कृष्णगढ़की जनता को चरित्रनायक जी के दर्शन लाभा करने का यह पहिला ही अवसर था। आपका व्याख्यान सुन लोग कहने लगे कि मुनिवर सब धर्म और शास्त्रों के ज्ञाता मालूम होते हैं। जिस मकान में आपका व्याख्यान होता था उस में जगह न मिल नेके कारण दूसरा मकान तजवीज़ करना पड़ा। महावीर स्वामी का जन्मोत्सव भी निकट था उसे यह पहिला ही अवसर था। अतः मुनि महाराज के द्वारा इस विषय से विशेष जानकारी प्राप्त कर उसने उसकी योजना आरम्भ की। राज्य की ओर से छाया आदि का प्रबन्ध किया गया। चैत्र शुक्ला १३ को उत्सव बड़े आनन्द से मनाया गया हिंसा आदि के कार्य जहां तक हो सका, प्रयत्न कर रोके गये दीन जनों को अन्न वस्त्रादि दिये गये। व्याख्यान में भी उस दिन बहुत लोग आये थे। जैन जनता ने आयम्बिल* किये।

*आयम्बिल उस तप को कहते हैं जिस में सब रसों का त्याग करके निर्जीव अन्न को बिना साग के केवल एक बार एक ही स्थान पर जल में भिगो कर खा लेना पड़ता है।

के पश्चात् कुछ दिन और धर्मोपदेश कर आपने विहार
या। और टोंकड़े होते हुए हरमाड़े पधारे। वहां बहुत त्याग
ाख्यान हुए। तेलियों ने नियमित दिनों के लिये घांणी
ाना बन्द करने की और जैन भाइयों ने अपनी आमदनी
२५ प्रति शत धार्मिक कार्यों में लगाने की प्रतिज्ञा की।
ां से विहार कर आप रूपनगढ़ पधारे वहां भी अच्छा धर्म
ार हुआ। रूपनगढ़ में एक प्राचीन शास्त्र भण्डार था।
सका आपने निरीक्षण किया। श्रावकों ने आग्रह पूर्वक
र्थना की कि इनमें से आप कुछ शास्त्रों का ग्रहण करें क्यों-
आपके पास रहने से इन का सदुपयोग होगा। तदनुसार
पने उनमें से कुछ शास्त्र लिये। फिर वहां से विहार कर
प अजमेर पधारे और लाखन कोठरी में श्रीमान् रायबहादुर
ठ उम्मेदमल जी के मकान में ठहरे। चतुर्मास वहीं हुआ।
ृष्णगढ़ में आप के गुरुवर मुनि श्री हीरालाल जी महाराज
ा चतुर्मास था। वहां प्लेग शुरू हो गया अतः श्रावक लोगों
ी प्रार्थना पर आपके गुरुवर हीरालाल जी महाराज तथा श्री
० नन्दलाल जी महाराज अजमेर पधारे इससे वहां की जन-
ा और भी प्रफुल्लित हुई। वहां आपके गुरुदेव ने सैकड़ों
तवन की रचना की और उन्हें साधु साध्वियों में वितरित
िया। ज्ञान ध्यान की दृष्टि से आप बड़े संयम शील थे। ११
र्ष की अवस्था में आप को दीक्षा हुई थी तभी से आपने ज्ञान
दान में पूरी रुचि रखी उसी का यह प्रभाव था कि इस अव-
था तक आपकी आत्मा दिव्य दर्शी हो गई थी। इसी सम्वत्
९७४ के चतुर्मास में मिती असौज सुदि २ को सायकाल के
समय आप कुछ रचना कर रहे थे इतने ही में शौच जाने की
च्छा हुई। शौच से निवृत्त होते ही एकाएक आपको ऐसी

निर्वलता हो गई कि रात्रि में ही आप की अवस्था शोचनीय हो गई। इस अवस्था में भी अपने गुरु भाई के सामने यथा विधि मुनिवर ने आलोचनादि क्रिया की। सूर्योदय होने पर पुनः आप ने आलोचना* त्याग प्रत्याख्यान किये। इसके पश्चात् आप देवलोक हुये। नगर में यह सम्वाद फैलते ही जनता उमड़ पड़ी। श्री सङ्घ ने यथाविधि आप का मृतक संस्कार किया। प्लेग की बीमारी का जोर बहुत बढ़ रहा था अतः श्री सङ्घ की प्रार्थना पर सब मुनिगण नगर से बाहर लोढ़ा जी की कोठी पर पधार गये। वहां हमारे चरित्र नायक जी को निमोनिया हो गया। औषधोपचार हो रहा था। रोग बढ़ रहा था। किन्तु उस दशा में भी आपने आयम्बिल (आंबिल) किया। ठीक भी है—"तपसा क्षीयते व्याधि"। परन्तु भुने हुये चने का सेवन करने से कुपथ्य हो गया और इस से व्याधि बढ़ गई। शारीरिक दशा बहुत बिगड़ गई और जीवन की आशा न रही।

पुण्योदय से शनैः २ आराम हो गया परन्तु, निर्वलता बनी रही। व्याख्यान देने की शक्ति न थी। चतुर्मास पूर्ण हो जाने पर भी निर्वलता के कारण कुछ दिन और आप वहीं रहे। पहिले लोढ़ा जी के मकान में ही, परन्तु, फिर श्रीमान् रुघनाथमल जी वकील के यहां जो आप के भक्त थे, ठहरे। फिर विहार कर कृष्णगढ़ पधारे। वहां कुछ दिन ठहर कर जब शरीर में कुछ शक्ति आई धर्मोपदेश दे नये शहर पधारे। व्याख्यान वहां भी पबलिक हुये। चतुर्मास के लिये भी लोगों का बहुत आग्रह हुआ परन्तु, यह कहकर

---

*आलोचना—प्रमाद वश लगे हुये पाप को गुरू के सन्मुख प्रगट करने को कहते हैं।

कि अभी समय बहुत है आप ने मेवाड़ की ओर विहार किया। मार्ग में जनता को नाना प्रकार के उपदेश करते हुये आप ताल पधारे। वहां बहुत से त्याग हुये। ठाकुर साहब श्रीमान् उम्मेदसिंह जी ने भी चरित्रनायक जी के दर्शनों का लाभ लिया। आप के उपदेश पर उन्होंने अष्टमी और चौदश को बिलकुल शिकार न खेलने की प्रतिज्ञा की। साथ में उन के भाई बेटों ने भी कुछ त्याग किया। फिर आप लसाणी पधारे। वहां आकर व्याख्यान देना प्रारम्भ किया। वहां के ठाकुर साहब श्री खुमाणसिंह जी साहब प्रति दिन व्याख्यान सुनते थे। उन्होंने परिन्दे जानवरों को न मारने की प्रतिज्ञा की।

इसके अतिरिक्त कई मांसाहारियों ने मांस परित्याग किया। फिर वहां से विहार कर आप देवगढ़ पधारे। सरकारी मकान में ठहरे। वहां के राव जी साहब विजयसिंह जी महाराणा उदयपुराधीश के सोलह उमरावों में तीन लाख के जागीरदार हैं। वहां जनता के द्वारा चरित्रनायक जी के व्याख्यान की प्रशंसा राव जी साहब तक भी पहुंची। वे जैन धर्म के सर्वथा अपरिचित थे। पहिले एक बार वितण्डावाद करने को उन्होंने अपने यहां के कुछ पण्डितों को किसी जैन मुनि के पास भेजे थे। उसके पश्चात् एक दिन वे स्वयम् भी उसी मार्ग से होकर निकले जिधर उन मुनि जी का व्याख्यान हो रहा था। व्याख्यान मंडप के निकट आकर कहने लगे कि हम इस मण्डप की छाया में होकर नहीं निकलेंगे। अतः इस पर्दे को हटा दो। उनकी आज्ञा के आगे श्रावक बेचारे क्या कर सकते थे। लाचार होकर उन्हें पर्दा खोल देना पड़ा। एक दिन का दृश्य तो ऐसा था। परन्तु, कुछ दिन के पश्चात

लोगों ने देखा कि वे ही राव जी साहब व्याख्यान स्थल में जन साधारण के साथ उसी छाया में बड़े प्रेम और भक्ति से बैठ कर व्याख्यान सुनते थे । और नियमित रूप से आते थे । इतना ही नहीं; वे व्याख्यान के अतिरिक्त समय में आकर भी चरित्रनायकजी से उपदेश लाभ और शंका समाधान किया करते थे । कुछ दिन के बाद आपके रनिवास में से चरित्रनायक जी से प्रार्थना कराई गई कि हम भी आपके उपदेशामृत की प्यासी हैं । उसे चरित्रनायकजी ने स्वीकार किया । राव जी साहब ने सर्वसाधारण को व्याख्यान के लिये अपने महलों में आने की आज्ञा दे दी । बिछायत आदि हुई, बहु मूल्य गलीचे बिछाये गये और चरित्रनायकजी को आदर पूर्वक वहां लिवा ले गये । वहां की सजावट देख कर चरित्रनायक जी ने अपने आसन की सब बिछायत हटवादी और अपने नेश्राय के वस्त्र बिछाकर उन पर विराजे । यह देख कर रावजी साहब ने भी अपना गलीचा उठवा दिया और सर्वसाधारण की भांति बैठे । इसके पश्चात् सुमधुर मङ्गलाचरण के साथ आपने व्याख्यान आरम्भ किया । जिस में ॐकार शब्द की व्याख्या कर उसी पर व्याख्यान की समाप्ति की । इसको सुनकर राव जी साहब के हृदय पर बड़ा प्रभाव हुआ । उन्हों ने अधिक मास में क़तई शिकार न करने और हमेशा के लिये कुछ जानवरों को न मारने की प्रतिज्ञा की । गांव में आपके और भी कुछ व्याख्यान हुए । इसके पश्चात् चरित्रनायक जी ने अकस्मात् वहां से विहार कर दिया । जब यह ख़बर राव जी सा० को मिली तो वे शीघ्रही ५०--६० आदमियों के साथ चरित्रनायकजी की सेवा में बड़े बाग़ में आये । रावजी सा० बड़े प्रतिष्ठित हैं । और जहां कहीं; जब कभी जाते हैं तो आपके साथ प्रायः ५०

की कि आगे का चतुर्मास यहां करें। यह चतुर्मास तो सादड़ी स्वीकार हो चुका। इस पर जैसा अवसर होगा कह कर आप मांडल पधारे। मार्ग में बनेड़ा सरकार का दया-विषयक पट्टा * लेकर कारभारी आये। मांडल में आपके व्याख्यान से बहुत उपकार हुआ। लोगों ने मदिरा, मांस, तम्बाकू और झूठी गवाही देने का त्याग किया और २ भी अनेक त्याग हुए। सूर्योदय पर प्रतिलेखणा कर आपने वहां से विहार किया।

वहां से बागोर पधारे और फिर बाबरास। जहां रावले में व्याख्यान दिया। फिर कोसिथल पधारे। वहां के ठाकुर सा० श्रीमान् पद्मसिंह जी के सुपुत्र श्रीमान जवानसिंह जी ने भी व्याख्यान सुना और कई त्याग किये और एक पट्टा भी दिया * फिर आप रायपुर पधारे जहां पूज्य श्री एकलिंगदास जी महाराज विराजते थे। आपके प्रति उन्होंने बड़ा प्रेम-प्रदर्शित किया। मानो दोनों एकही संप्रदाय के अनुयायी हों। बीच बाज़ार में आप का व्याख्यान हुआ जिसके फल-स्वरूप एक जैन पाठशाला की स्थापना हुई। ज्येष्ठ कृ० ५ को प्रातःकाल आपने देखा कि कोई हाल ही में उत्पन्न हुए एक बालक को कोई छोड़ कर चला गया है। बालक गांव के बाहर भैरव जी के चबूतरे पर पड़ा हुआ सिसकियें ले रहा था। हाकिम सा० ने उसकी तहक़ीक़ात की उसके बाद नायन के द्वारा उसको आपके पास लाया गया। जहां आप व्याख्यान दे रहे थे आपने उसे

*पट्टे की नक़ल के लिये देखिये परिशिष्ट प्रकरण २।

* पट्टे की नक़ल के लिये देखिये परिशिष्ट प्रकरण २।

प्रकरण २८ वां

सम्वत् १६७५ ब्यावर (नया शहर)

अंग्रेज़ की शंकायें

चैत्र सुदी १ सम्वत् १६७५ को आप चित्तौड़ पधारे। वहां मुनि श्री नन्दलाल जी महाराज और चम्पालाल जी महाराज विराजते थे। यथा समय व्याख्यान की योजना हुई। पहिले चम्पालालजी महाराज का व्याख्यान हुआ और पश्चात् आपका चित्तौड़ खा़स तथा उसके निकटवर्ती गावों में प्लेग की बीमारी थी, इस कारण यद्यपि लोग इधर उधर बिखरे हुए थे, परन्तु फिर भी उपस्थिति अच्छी होती थी। राज्य कर्मचारी गण तथा यूरोपियन टेलरसाहब चीफ़ आफियम आफ़ीसर भी आते थे। एक दिन टेलर साहब ने आपसे प्रश्न किया कि आप में इस प्रकार भिन्न २ सम्प्रदाय होने और साधुओं में मत विभिन्नता होने का क्या कारण है? इस पर आपने उन को इसका सविस्तर कारण समझाया। सुन कर टेलर साहब की सब शंका निवारण हो गई। वहां और भी व्याख्यान दिये और फिर विहार कर हथखंदे निम्बाहेड़े होते हुए नीमच पधारे। वहां आपके दो व्याख्यान हुए। फिर मन्दसौर पधारे आपके साथ उस समय भैरवलालजी वैरागी थे जो प्रतिक्रमण

प्रकार के त्याग किये। ताल के ठाकुर सा० २ कोस की दूरी पर थाणा तक चरित्रनायक जी को पैदल पहुंचाने आये थांणा के ठाकुर साहब ने परिन्दे जानवरों की शिकार का त्याग किया, और लोगों ने कई जीवों को अभयदान दिया। फिर आप चीचड़े और भीम होते हुए गोदा जी के गांव पधारे वहां भी अच्छा उपकार हुआ। रावत लोगों ने मदिरा माँस का त्याग किया। और २ भी कई जाति के लोगों ने त्याग उपवासादि किये। फिर कोकरखेड़ा बरार, टाटगढ़, ठेकरवास होते हुए लसाणी पधारे। वहां ताल के ठाकुर श्री उम्मेदसिंह जी साहब प्रति दिन व्याख्यान सुनने को पधारते थे उन्होंने एक दिन व्याख्यान में यह प्रतिज्ञा की कि वर्ष भर में मेरे यहां जितने बकरे राज्य के आते हैं उन्हें मैं अमरिया कर दुंगा। और लसाणी ठाकुर श्रीमान् खुमाणसिंह जी साहब भी प्रति दिन उपदेश में पधारते थे। आपने प्रतिज्ञा की कि भाद्रव माँस में शिकार न करेंगे। चैत्र शु० १३ का भी किसी जीव की हिंसा न करेंगे तथा मादीन जानवरों को आजन्म न मारने का प्रण किया। फिर चरित्रनायक जी ने देवगढ़ की ओर विहार किया। लसाणी ठाकुर साहब अपने पाटवी पुत्र सहित अपनी सीमा तक पहुंचाने को आये। चरित्रनायकजीने देवगढ़ पहुंच कर लगातार सात व्याख्यान दिये। जनता ने और अधिक ठहरने का आग्रह किया परन्तु चतुर्मास निकट होने के कारण आप अधिक न ठहर सके। वहांसे चारभुजाजी, वहां दो व्याख्यान दिये हाकिम सा० जतनसिंह जी ने अच्छी सेवा भक्ति की आप बड़े सज्जन और धर्मनिष्ठा हैं। लोगों ने वहां भी चरित्रनायकजी को ठहराने का अत्याग्रह किया। परन्तु, समय का अभाव था। अतः प्रातःकाल ही प्रतिलेखना कर आप

गंगार व हमीरगढ़ पधारे। वहां की जनता ने बड़े आग्रह पूर्वक ठहरने की प्रार्थना की। परन्तु वर्षा ऋतु सन्निकट होने से न ठहर सके। वहां से भिलवाड़े के पास के गाँव मण्डपिये पधारे। ठाकुर साहब के मकान में ही ठहरे। ठाकुर साहब ने अच्छी भक्ति प्रदर्शित की। वहां से विहार कर भिलवाड़े मांडल मसूदे होते हुए आषाढ़ सुदी १० को चतुर्मास के लिये नये शहर में पधारे। दीवान बहादुर सेठ उम्मेदमलजी साहब की हवेली में चतुर्मास किया। यहां भी बड़ा धर्म ध्यान हुआ जो क्षमापन्ना में छप चुका है। वहां बहुत दूर २ के लोग दर्शनार्थ आते थे। वहां चुन्नीलालजी सोनी एक बड़े धर्मनिष्ठ सज्जन हैं। साधारण गृहस्थ होते हुए भी दर्शनार्थ आये हुए सब सज्जनों का सत्कार किया। सारे चतुर्मास में इस सत्कार में जो कुछ व्यय हुआ वह आपने अपने ऊपर ही लिया। वहां पर डाक्टर मिलापचन्द जी को प्रतिबोधित कर सम्यक्त्व दी। अजमेर से वकील रघुनाथसिंह जी महाराज के दर्शनार्थ नये शहर आये। वहाँ रात्रि में रुक्मिणी का इतिहास होता था। चतुर्मास पूर्ण होने पर भीम होकर बरार पधारे। वहाँ देवगढ़ रावजी साहब ने अपने राज्य कर्म्मचारी को चरित्र नायक जी की सेवा में भेजकर निवेदन करवाया कि मुझे उदयपुर जाना आवश्यक है अतः जल्दी पधार कर दर्शन दें। तदनुसार चरित्र नायक जी वहां से देवगढ़ हो पधारे। और सरकारी मकान में ही ठहरे सब जगह की भांति आबादी के अनुसार वहां भी जनता खूब आती थी। रावजी साहब चरित्र नायक की दो तीन बार सेवा भक्ति करते। उनकी इच्छा थी कि आप और कुछ दिन विराजें, परन्तु अवकाश कम होने से आप और अधिक न ठहर सके। यथा समय नाथ द्वारे की ओर विहार किया वहाँ उसी

दिल दर्शन को चाह रहा है। देख २ मन मोह रहा है।
कृया दर्शन सुख कारा, सुखकारा ॥ मुनिवर ॥ ३ ॥
"श्री चरणों में शीष नमावे, हाथ जोड़ मुनि के गुण गावे।
नय २ शब्द उच्चारा ॥ मुनिवर ॥ ४ ॥

श्रीमान् अनोपचन्द जी पूनमिया
सादड़ी (मारवाड़) की ओर से
स्वागत-कविता ।

तर्ज:—दया पालो बुद्धजन प्राणी--
चौथमलजी मुनि उपकारी, जगतवल्लभ जग में जारी ॥ टेर ॥

जन्म मुनि नीमच में पाया, देश मालव मम मन माया।
तात तस गंगाराम कहाया, मात केशर के कूँख जाया।

दोहा।
उन्नीसे-बावन विषे, निज जननी के लाल।
फाल्गुन सुद दिन पंचमी, लीनो संयम भार ॥
त्यागी नव वधू परणी नारी, चौथमल जी मुनि उपकारी ॥१॥
जबर गुरु हीरालाल कीना जिन्हों ने शिर पै हाथ दीना।
भक्ति उनकी कर यश लिना, पूर्ण वैराग्य में चित्त दीना।

रहे। देवगढ़ राव जो साहब भी वहां आये हुए थे। वे भी चरित्र नायक जी के स्थान पर दर्शन लाभ करने को आये। फिर चरित्र नायक जी वहां से विहार कर नाई पधारे। वहां आप के उपदेश से अनेक लोगों ने मदिरा मांस का त्याग किया। फिर वहां से चरित्रनायक जी उदयपुर मावली होते हुए सनवाड़ पधारे वहां पर सभा हुई सैंकड़ों मनुष्य बाहर से आये। अनेक राज-कर्मचारी भी आये। पश्चात् वहां व्याख्यान देकर कपासण, हमीरगढ़ होते हुए माँडलगढ़ पधारे। इन स्थानों पर भी अच्छा त्याग-प्रत्याख्यान हुआ। वहां से बूंदी की ओर विहार किया। मार्ग में एक स्त्री मिली जो बोली कि भयंकर वन में आप क्यों जाते हो। जानवरों का भय तो है ही परन्तु उस से भी अधिक भय चोरों का है। इस पर आप ने उत्तर में उस से कहा कि भय हो जिन्हें हो हमारे पास क्या रक्खा है आदि।

इस प्रकार वहां से प्रस्थानित हो आप बूंदी पधारे। पहिले कभी आप बूंदी नहीं पधारे थे। किन्तु, आपकी ख्याति तो वहां खूब थी! बाज़ार में होकर निकले उस समय की आपकी शान्त मुद्रा देख २ कर लोग प्रफुल्लित वदन से दर्शन कर रहे थे। यथा स्थान ठहरे। एक व्यक्ति ने पूछा कि मुनि-वर! व्याख्यान कहां होगा? तब आपने उत्तर दिया कि यहीं उस दिन वहीं व्याख्यान हुआ। दूसरे दिन माहेश्वरियों के नोहरे में होने लगा परन्तु वहां से भी स्थानाभाव के कारण फिर पृथक एक मण्डप बनाया गया वहां होने लगा। दिगम्बर भाइयों ने बड़ा उत्साह प्रकट किया और जाति के लोग भी आप का सुमधुर वचनामृत पान करने को आते थे। प्रति दिन व्याख्यान की समाप्ति पर श्रीयुत् कुंअर गोपाललाल जी केडिया

दोहा ।

साल इक्यासी आषाढ़ सुद, सातम ने बुधवार ।
अनोपचंद ने जोड़के, गाई सभा मझार ।
सुनके हर्षे सब नर नारी, चौथमल जी मुनि उपकारी ॥५॥

आषाढ़ शु० ७ संवत् १९८१ वि० को आप मादा (गांव) होकर सादड़ी पधारे । नगर से बाहर लगभग ५०० नरनारी बड़ी भक्ति और प्रेम के भाव लिये हुए आपके स्वागत को उपस्थित थे । यथा समय वीर जयध्वनि और धूमधाम के साथ आपका सादड़ी नगर में पदार्पण हुआ । और इस प्रकार वहां के निवासियों ने अपने को बड़ा सौभाग्य शाली जाना ।

जिस दिन से चरित्र नायक महोदय सादड़ी में पधारे उसी दिन से नियमित रूप से प्रति दिन आप के सुललित व्याख्यान होने लगे । श्रोताओं की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती गई । क्या जैन और क्या जैनेत्तर सभी लोग तथा राज कर्मचारी पोस्टमास्टर पं० हरलाल जी शर्म्मा सा० डाक्टर अबदुल लतीफ़खां P. E. H. (इलाहाबाद) सा० आदि भी समय २ पर आपके व्याख्यान में योग देते थे । आपके उपदेश का लोगों पर बड़ा प्रभाव पड़ा । व्रत, पच्चखाण, दया पौषध आदि खूब हुए जो क्षमा पत्रों में सविस्तर प्रकाशित हो चुके हैं ।

एक दिन श्रीयुत आनन्द जी कल्याण जी (मंदिर मार्गी) की दूकान के सुयोग्य मुनीम श्रीयुत् भगवान धारसी जी जी आदि मिल कर चरित्रनायक जी की

प्रकरण २९ वां।

सम्वत् १९७६ दिल्ली

पूज्य श्री से भेट

माधोपुर के बाज़ार में एक व्याख्यान हुआ। वहां एक बाई भी दीक्षा लेने वाली थी उसको महाराज श्री ने दीक्षा देकर फूलां जी आर्या के नेश्राय * में किया। महावीर जयन्ती मनाई गई। सब सम्प्रदाय के लोगों ने योग दिया। चरित्र नायक जी के उपदेश का अच्छा प्रभाव पड़ा। तथा धर्म्म प्रचार त्याग प्रत्याख्यान हुआ। यहां तक कि एक आलिम हाफ़िज़ जो अहले इस्लाम के अनुयायी थे उन्होंने भी जैन धर्म्म के सिद्धान्तों को अङ्गीकार किया। सामायिक सीखी और अब भी वहां मुख-वस्त्रिका बांध कर बराबर सामायिक करते हैं और दया पौषध रखते हैं। तथा अन्यान्य लोगों को भी ऐसा ही उपदेश देते हैं और जैन बालकों को सामायिक-प्रति क्रमण सिखाते हैं। वहां से आपने विहार कर श्यामपुर, बेतेड़ गिझगड़ होते हुए अलवर प्रस्थान किया। वहां कुछ व्याख्यान देकर देहली की ओर विहार किया। यथा समय देहली सदर पधारे। वह आहार पानीकर चांदनी चौक में पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज

---

* सुपुर्दगी

आनन्द जी कल्याण की दुकान के मुनीम श्रीयुत् भगवान्द धारसी आदि २ सज्जन भी पधारे थे। उस दिन स्थानकवासियों की दूकानें तो वन्द रही ही थीं, परन्तु मन्दिर मार्गी भाइयों ने भी अपना सब प्रकार का कारोवार वन्द रक्खा था लगभग १२००) रुपये के जीव छुड़ाये गये। ग़रीबों को मिठाई तथा वस्त्रादि दिये गये। श्रीमान् जुहारमल जी पूनमियां ने जैन सुख चैन बहार ५ वां भाग (चरित्रनायक जी रचित) अपनी ओरसे छपवा कर सभा मण्डप में मुफ़्त वितरण किया। आप की अवस्था थोड़ी है। तो भी आप दिल के सखी और बुद्धिमान हैं। परोपकार की ओर आप का हमेशा विशेष लक्ष्य रहता है श्रीयुत् हस्तीमल जी पूनमियां ने भी ज्ञानगीत संग्रह छपवा कर अमूल्य वितरण की। आपने व रूपचन्द जी व अनोपचन्द जी साहब ने भीलवाड़े में चतुर्मास की स्वीकृति के समय मंजूरी लेने में बड़ा परिश्रम किया था।

सादड़ी श्री संघ ने मुनि जी की अच्छी भक्ति की तथा आगत सज्जनों की तन मन धन से प्रेम पूर्वक सेवा की। यहां का श्रीसङ्घ बड़ा धर्मप्रिय और भक्तिकारक है। श्री सङ्घ ने हमारे चरित्रनायक जी का जीवन चरित्र लिखवाने में बड़े उत्साह से पूरी २ सहायता दी।

पर्यूषण पर्व के दिन फतापुरा के ठाकुर साहब ने भी उपदेश सुनने का लाभ लिया। कई अजैन लोगों ने उपवासादि किये और तम्बाकू पीने तथा मदिरा मांस भक्षण का परित्याग किया।

ता० १५। १०। २४ का श्रीमान् बूसी (मारवाड़) ठाकुर

के निकट पधारे। यह पहिला ही अवसर था जब आपको पूज्य-श्री के दर्शन हुए। जनता के आग्रह से चतुर्मास आपने वहीं किया। बड़ा आनन्द रहा। धर्मध्यान हुआ सो क्षमापत्रा में प्रकाशित होचुका है। वहां दूर २ के श्रावक दर्शनार्थ आये। जम्बू नरेश के दीवान भी पधारे। वहां चतुर्मास भर व्याख्यानों की खूब धूम रही। चरित्रनायक जी के उपदेश द्वारा यज्ञोपवितधारी ब्राह्मण * द्वारका प्रसाद ने जैनधर्म स्वीकार किया वहां एकाएक, आपकी पाचनशक्ति बिगड़ गई। औपधोपचार किया गया। पश्चात् कुछ स्वास्थ्य लाभ कर आपने आगरे के लिये विहार किया, मार्ग में वृन्दावन ठहरे। वहां से दूसरे दिन प्रति लेक्षणा कर मथुरा पधारे। एक व्याख्यान दिगम्बर जैन भाइयों के मंदिर में तथा दूसरा सार्व जनिक हुआ। वहां लोगों का आग्रह हुआ कि और भी व्याख्यान हों। परन्तु, निर्वलता के कारण वैसा न हो सका। यथा समय वहां से विहार कर आगरे पधारे। पीछे से माधव मुनिजी * महाराज भी पधारे। दोनों मुनिवरों को एक दूसरे के दर्शन-लाभ करने की उत्कृष्ट अभिलाषा थी सो पूर्ण हुई। यथा समय व्याख्यान प्रारम्भ हुए। आरम्भ में माधव मुनिजी महाराज व्याख्यान देते और फिर चरित्र-नायकजी। माधव मुनि जी महाराज बड़े विद्वान् और साहित्य-मर्मज्ञ सुकवि थे। आप की शास्त्रार्थ-शक्ति भी बड़ी प्रबल थी। *आप पीछे चलकर पूज्य पदवी से अलंकृत हुए। जोधपुर के संवत् १६७३ के चतुर्मास में जब रतलाम श्रीसंघ पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज तथा चरित्रनायक महोदय की सेवा में यह अनुमति लेने को उपस्थित हुआ कि धर्मदासजी महाराज

---

* देखो परिशिष्ट प्रकरण ३

की सम्प्रदाय में युवराज पद से किस को विभूषित किया जाय तो पूज्य श्री तथा चरित्रनायक जी ने माधव मुनिजी के के लिये ही अपनी अनुमति दी अस्तु । मानपाड़ा और लोहा-मण्डी में चरित नायकजी का " मनुष्य के कर्तव्य " पर बड़ा ओजस्वी व्याख्यान हुआ । फिर आप वहां से विहार कर जयपुर पधारे । जहां पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज तथा मुनिश्री देवीलाल जी महाराज और तपस्वी बाल चंदजी महाराज तथा खूब चंदजी महाराज आदि विराजते थे । वहां कुछ व्याख्यान हुए पश्चात् चैत्र शुक्ला ११ को किशनगढ़ पधारे ।
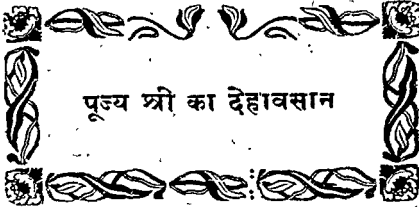
प्रकरण ३० वां ।

सम्वंत् १९७७ जोधपुर

पूज्य श्री का देहावसान

किशनगढ़ में सर्राफ़े में व्याख्यान की व्यवस्था हुई। महावीर जयन्ती पर सरकार की ओर से छांया के लिये तम्बू का प्रबन्ध हुआ। आप के व्याख्यान की प्रसिद्धि तो पहिले ही हो चुकी थी इसलिये बिना सूचित किये ही बात की बात में ३०००हजार मनुष्य एकत्रित होगये कुछ लोग बाहर से भी दर्शनार्थ आये हुए थे। व्याख्यान में सर्व प्रथम शास्त्र–विशारद पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज ने महावीर स्वामी के जन्म पर कुछ कहा तदनु श्री देवीलाल जी महाराज ने महावीर स्वामी की वीरता का दिग्दर्शन कराया बाद चरित्रनायक जी ने महावीर स्वामी के आचरण विषयिक एक मनोरम व्याख्यान दिया, जिस का श्रोताओं पर बड़ा प्रभाव पड़ा। इस के पश्चात् आप अजमेर पधारे जिस का मुख्य कारण यह था, कि वहां पारस्परिक वैमनस्य बढ़ा हुआ था। चरित्रनायक-

जी तथा (पूज्य श्री देवीलालजी महाराज खूब चन्द जी महाराज) सहित पधारे थे। मुमइय्यों के नोहरे में ठहरे थे। पूज्य श्रीलालजी महाराज के पधारने की सूचना मिलने पर निश्चित् दिवस के दिन उक्त पूज्य श्री के स्वागत के लिये पधारने को श्री सङ्घ ने पूज्य मुन्नालालजी महाराज से प्रार्थना की कि यदि आप पधारेंगे तो उस का जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा और मेल बढ़ेगा। पूज्य श्री ने इसे स्वीकार किया और चरित्रनायकजी को स्वागत समारोह में जाने की आज्ञा दी। तदनुसार हमारे चरित्रनायक जी पांच साधुओं सहित नये शहर की सड़क पर पधारे। वहीं पर सब का सम्मिलन हुआ तथा कुछ बात चीत हुई। पूज्य श्रीलालजी महाराज ढड्ढे जी की हवेली में आकर ठहरे चरित्रनायक जी ने प्रार्थना की कि आप भी हमारे निकट ही ठहरें परन्तु वैसा न हुआ फिर सन्ध्या को खूबचन्द जी महाराज और चौथमल ज़ी महाराज ६ साधुओं सहित पूज्य श्रीलालजी महाराज के पास आये और प्रार्थना की कि आप का हमारा व्याख्यान एक ही स्थान पर हो तो अच्छा है क्योंकि लोगों का पारस्परिक वैमनस्य दूर करना है। इस कारण सम्मिलित उपदेश का उन पर और भी अधिक प्रभाव पड़ेगा किन्तु इस को पूज्य श्री ने स्वीकार न किया अन्त में उपदेश पृथक् २ ही हुए पूज्य श्रीलालजी महाराज ने वहां से नये-शहर की ओर विहार किया मार्ग में तवीजी नामक गांव आया उस में पूज्य श्रीलालजी महाराज भी ठहरे हुए थे वहीं चरित्रनायक महोदय भी पधारे दोनों का सम्मिलन वहां हुआ पूज्य श्री ने बड़ा प्रेम प्रदर्शित किया। वहां एक गांव का पटेल बैठा था उस से पूज्य श्रीलालजी महाराज ने

फ़रमाया कि हमारे ये चौथमल जी बड़े व्याख्यान देने वाले हैं (म्हांके ई चौथमल जी बड़ा वखाणी हैं) तुम भी इनका उपदेश सुनना ।

इसके पश्चात् चरित्रनायक जी वहां से विहार कर नये-शहर पधारे वहां बाज़ार में व्याख्यान हुआ जब आप तख़्त पर विराजे हुए उसी मार्ग पर व्याख्यान दे रहे थे जिधर से हो कर पूज्य श्रीलालजी महाराज निकलने वाले थे तो आप तख़्त छोड़ कर थोड़ी देर के लिये पृथक् होगये । आपने सोचा कि यह अनुचित है कि पूज्य श्री इधर से निकलें और मैं तख़्त पर बैठा हुआ व्याख्यान देता रहूँ ! पाठक ! देखिये साम्प्रदायिक-मतभेद होने पर भी चरित्रनायक जी के कैसे उच्च विचार थे । कुछ दिन नये शहर में व्याख्यान देकर पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज तथा हमारे चरित्र नायक जी चतुर्मास के लिये जोधपुर पधारे क्योंकि अजमेर में जोधपुर श्री सङ्घ की प्रार्थना स्वीकार हो चुकी थी ! नये-शहर का श्री सङ्घ भी अजमेर में इसी अभिप्राय से आया था परन्तु, उसकी प्रार्थना पर पहिले पूज्य श्री लाल-जी महाराज की स्वीकृति हो चुकी थी । अतः पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज और चरित्र नायकजी वर होते हुए निमाज पधारे । वहां व्याख्यान देकर विहार करते हुए बिलाड़े पधारे यहां ठिकाना रासफा परगना जसवन्तपुरा (मारवाड़) के कुंअर चमनसिंह जी तथा डाक्टर जबेरीमल जी भी आये थे । फिर वहां से भावी होते हुए पीपाड़ सिटी । कुछ व्याख्यान उपदेश देकर आषाढ़ सुदि २० को महा मन्दिर पधारे । वहां दो व्याख्यान देकर आषाढ़ सुदि ३ को चरित्रना-

यकजी जोधपुर पधारे। राव राजा रामसिंह जी की हवेली में उनकी आज्ञा से आपका निवास कराया गया। उस समय पूज्य श्री तथा चरित नायक जी के साथ ६ साधु और थे। जनता व्याख्यान सुनने को उत्सुक हो रही थी। किन्तु उसके दुर्भाग्य से वैसा न हो सका। जोधपुर श्री संघ को जैतारण से तार द्वारा सूचना मिली कि पूज्य श्रीलालजी महाराज चतुर्मास के लिये नये शहर पधारते हुए यहां ठहरे थे कि अकस्मात् तीज के दिन देवलोक हो गये। इस से श्रीसंघ जोधपुर में उदासी छागई। चरित्रनायक जी ने भी बहुत खेद प्रगट किया और फरमाने लगे कि कैसे लोकोपकारी का वियोग हो गया। जिनकी क्षति पूर्ति होना कठिन है। क्या हुआ जो साम्प्रदायिक मत-भेद था। किन्तु, वह भी पिता पुत्र की भांति था। इसके अनन्तर आपके शिष्य प्यारचन्द जी महराज ने आपसे प्रार्थना की कि पूज्यश्री का श्लोक बद्ध परिचय और संक्षिप्त गुणानुवाद चिरित्र सहित प्रकाशित करें। परन्तु, आप ने फरमाया कि निस्सन्देह ऐसा होना बहुत श्रेष्ठ और आवश्यक है। साथ ही अपना कर्तव्य भी है। परन्तु, समाज इसको ठीक न समझेगा कहेगा कि कल तो अनबन थी और आज प्रेम दिखाने लगे। 'जीवित बाप से दंगमदंगा, मुवे बाद पहुंचावे गंगा, अतः यद्यपि शुद्धं लोक विरुद्धं ना करणीयं ना चरणीयं' हे शिष्य ! यद्यपि शुद्ध है ठीक है। तथापि लोक विरुद्ध होने के कारण विपरीत मालूम होता है। अस्तु। चरित्र नायक जी ने व्याख्यान स्थगित रखा लोग झुण्ड के झुण्ड आये क्योंकि उन्हें विदित नहीं था। किन्तु, जब विदित हुआ तो वापिस चले गये। पञ्चमी से आपका व्याख्यान प्रारम्भ हुआ। प्रथम पूज्य

श्री मुन्नालाल जी महाराज भगवती जी सूत्र फरमाते।
पश्चात् चरित्र नायक जी ओज पूर्ण व्याख्यान देते। नगर
की गली २ में आपके व्याख्यान की धूम मच गई। राज-
कर्म्मचारी जागीरदार सब आते थे। इसी समय पूज्य-
श्री की सेवा में रहने वाले तपस्वी फौजमल जी
महाराज ने ६७ दिन की तपस्या की। लोग ऐसी कठिन तप-
स्या का हाल सुन २ कर कहते थे कि क्या इन में ईश्वरीय
अंश है! इस तपस्या और चरित्रनायक जी के व्याख्यान का
जैनेत्तर लोगों पर ऐसा प्रभाव हुआ कि वह आपसे सामायिक
प्रतिक्रमण सीखने लगे। एक अग्रवाल भाई ने कभी उप-
वास भी नहीं किया था उसने ८ उपवास किये और जन्म भर
के लिये वनस्पति का परित्याग किया। स्वर्णकारों (सुनारों)
ने मिलकर दया प्रभावना की। उनकी महिलाओं ने एकान्तर *
और वेले (१) तेले (२) आदि बहुत से किये। और सब
चरित्रनायकजी के पूर्ण भक्त होगये। पर्यूपण पर्व आजाने पर
श्रोताओं की संख्या और भी बढ़ने लगी अतः उन दिनों व्या-
ख्यान पंचायती हवेली में होने लगे। परन्तु, उसमें भी लोगों
की बड़ी भीड़ हुई। इसके पश्चात् ६७ की तपस्या का पूर
निकट आया। उस दिन इकत्ता रखने (जीवहिंसा) बिल्कुल
न होने) के लिये प्रयत्न किया गया। ओसवाल लोग मिल

---

* एक दिन उपवास करना और एक दिन आहार लेना।

(१) वेला--दो दिन का उपवास।

(२) तेला--तीन दिन का उपवास।

(३) पारण--उपवास अथवा व्रत नियम के समाप्त होने पर प्रकृत्य-
नुसार उपयोग्य वस्तु के ग्रहण करने को पारणा कहते हैं।

कर राजसभा (कौन्सिल) में गये । पूछने पर लोगोंने तपस्या का वृतान्त सुनाकर अकते के लिये प्रार्थना की जो स्वीकार हुई । His Highness Lieut General Maharaja Sir प्रतापसिंह जी साहब बहादुर (G. C. S. T, G. C. V. O; G. C. B., L. D. D. C. L., A. D. C. Knight of Sant John of Jeruslem Regent of Mewar State) रेज़ीडेन्ट ने शहर कोतवाल के द्वारा घोषणा करादी (ढूंडो पिटवादी) कि अमुक दिन हिंसा बिल्कुल बंद रहे ! २-१ कसाइयों ने कहा कि हाकिमों के यहां तथा सरकारी रसोड़े में जाता है । तब मंगलचन्द जी सिंघवी ने टेलीफ़ोन द्वारा प्रतापसिंह जी साहब से पूछा और ज़ालिम सिंहजी साहब को सूचना की तब उत्तर आया कि कहीं नहीं लिया जायगा । यहां तक कि शेरों को भी मांस के बदले दूध दिया जाय । इस प्रकार उस दिन कसाइयों ने हिंसा तथा हलवाई भड़भूजे, तली तमोली, लुहार सबने अपना २ कार्य बन्द रखा । पूर के दिन व्याख्यान उसी हवेली में हुआ । राव राजा रामसिंहजी साहब ने अपने दीवान ख़ास में भी लोगों को बैठने की आज्ञा दे दी । फिर भी स्थान की संकीर्णता ही रही उस दिन लूले, लंगड़े, अपाहिजों और दीन दुखियों को भोजन वस्त्र दिया गया । कसाइयों के २०० बकरों के प्राण बचाये गये राव राजा रामसिंह जी ने अपनी ओर से तीस बकरों को अभय दान दिया । और ५० अपंगों को भर पेट लड्डू खिलाये सादड़ी (मेवाड़) निवासी भैरवलाल जी ओसवाल जिनकी अवस्था २३ वर्ष की थी वैराग्य भाव से कार्तिक शुक्ला १२ को चरित्रनायक जी के पास दीक्षा लेने को आये थे । इन्हें ११

वर्ष की अवस्था में ही वैराग्य उत्पन्न होगया था, और चरित्र-नायक जी के साथ उस समय कानोड़ तक चले आये थे किन्तु.. वैरागी के काका हज़ारीमल जी साहब आकर बलात्कार उन्हें वापिस लेगए थे। इन्हें पक्की लगन थी—सच्चे विरागी (वैरागी) हो चुके थे। अतः घर से निकल कर चरित्र नायक-जी की सेवा में आगये। पहिले इनके साथ इन्हें घर पर ले जाकर मारना, पीटना, मिरचियों की धूनी देना आदि सख़्ती का बर्ताव शुरू किया गया। परन्तु, उन वैरागी का भाव वैसा ही रहा। कई कारणों से सात वर्ष उन्हें फिर घर पर रहना पड़ा और अब जोधपुर आये। जोधपुर श्रीसङ्घ तो दीक्षा दिलाने को प्रस्तुत था ही। माघबदी २ को भैरवलाल के बाने विठाये गये और माघ बदी ८ को प्रातःकाल १० बजे नियमानुसार उनकी दीक्षा हुई। साथ ही जन्म नाम बदल कर भैरवलालजी वृद्धिचन्द जी रक्खा। क्योंकि चरित्रनायक जी की सेवा में भैरवलालजी नाम के शिष्य पहिले से ही थे। वहां से विहार कर आप पधारे तो सोजतिये दरवाजे पर मालियों ने रोक लिया और बड़ा प्रेम दिखलाया। उपकार समझ कर चरित्र नायक जी वहां ठहर गये और व्याख्यान देना आरम्भ किया। श्रद्धाधिपति मालियों की इच्छा थी कि नव दीक्षित भैरवलाल जी की बड़ी दीक्षा का उत्सव समारोह के साथ हम यहीं करें। किन्तु, श्रीसङ्घ ने इसे अस्वीकार किया। चरित्र-नायक जी भी वहां से विहार कर पाली पधारे। वहां कुछ व्याख्यान दिये। जिन का ऐसा प्रभाव पड़ा कि किसी समय माधव मुनि जी महाराज वहां जो एक जैन-पाठशाला खोलने की योजना कर गये थे, वह कार्य रूप में परिणत हुई और अब तक चल रही है। वहां से विहार कर आप सोजत पधारे वहां

भी व्याख्यान द्वारा और कई दुर्व्यसनों का त्याग हुआ फिर नये शहर में पधार कर सट्टे के कटले में व्याख्यान दिया वहां अजमेर से पूज्य श्री शोभाचन्द जी महाराज का सन्देशा आया कि यहां दो वैरागी तथा दो वैरागिनी दीक्षा मुमुक्षु हैं। उनकी दीक्षा होगी सो आप पूज्य मुन्नालाल जी सहित पधारें। अजमे श्री सङ्घ इस सन्देशे को लेकर नये शहर आया और पूज्य श्र एवम् चरित्रनायक जी से आग्रह पूर्वक प्रार्थना की। जि आपने स्वीकार कर लिया। क्योंकि आप का हमेशा से पूज श्री शोभाचन्द जी महाराज से बड़ा प्रेम रहा है। अस्तु। नये शहर से विहार कर पूज्यश्री व आप यथा समय अजमेर पधारे अगवानीके लिये बहुसंख्यक लोग और साधु-सन्त आये। पूज्य श्री के निकट मोतीकटरे में ही आप ने निवास किया। बाहर से भी बहुत लोग आये थे। जिन के आतिथ्यका प्रबन्ध रियां वाले रायबहादुर सेठ छगनमल जी, मगनमलजी प्यारेलालजी की ओर से था। यथा समय दीक्षा हुई उस समय का दृश्य अवलोकनीय था। वैरागियों में एक की अवस्था ९ वर्ष की और दूसरे की ११ वर्षकी थी सफ़ेद बाल वाले वृद्ध लोग देख देख कर चकित होरहे थे कि इस अवस्था में ये बालक सांसारिक सुखों को त्याग कर रहे हैं। और हमारी इस अवस्था में जब कि सफ़ेदी आगई है, विषय वासना से मोह नहीं छूटा है आदि। उसके पश्चात् पूज्य श्री के साथ चरित्र नायक जी अजमेर से विहार कर नसीराबाद पधारे वहां आपके उपदेश से कई खटीकों ने जीव-हिंसा का परित्याग किया। और दूसरे रोज़गार में प्रवृत्त हुए। वहां से कंवरियास होते हुए भीलवाड़े पधारे। नसीराबाद से चलते हुए मार्ग के इन सब स्थानों में अच्छा धर्म्म प्रचार हुआ। श्रावकों ने ५०० बकरों के प्राण

बचाये तथा व्रत उपवासादि किये। भीलवाड़े से उपदेश कर फागुण सुदि १० को आप चित्तौड़ पधारे। आप के व्याख्यान और उपदेश से वहां इस अवसर पर बहुत सुधार हुआ। ओसवाल माहेश्वरियों ने प्रतिज्ञा करके जाति में प्रचलित इस कुरीति को हमेशा के लिये बन्द कर दिया कि दहेज न लेना। जो कन्या-विक्रय करेगा उसको जाति दण्ड मिलेगा। यदि कोई असमर्थ हो, और कन्या का विवाह न कर सके तो उसको पंचायती कोथली (फण्ड) में से ४००) रु० तक विना सूद के मिलेगा। जिनको वह अपनी सहूलियत से अदा करदे। सुनारों ने प्रतिज्ञा की कि एकादशी और अमावस्या को अपना अग्नि से काम करने का धंधा न करेंगे। मोचियों ने हर अमावस्या व पूर्णिमा को मांस मदिरा का सेवन न करने की प्रतिज्ञा की। साथ ही यह भी कि उन दिनों में जूते न गांठना और ईश्वर भजन करना। इसी प्रकार कुम्हारों ने अवाड़े न भरने की, तथा गाड़ी वालों ने परिमाण से अधिक बोझा न लादने की प्रतिज्ञा की। वहां २१ व्याख्यान देकर आप क़िले पधारे। वहां चार भुजा जी के मन्दिर में व्याख्यान दिये। महन्त लालदासजी तथा उनके शिष्य प्रति दिन व्याख्यान सुनते। इन्हीं दिनों उधर होकर टेलर साहब बेलगांव (दक्षिण) जारहे थे। मार्ग में उन्हें सूचना हुई कि चरित्रनायक जी क़िले पर विराजते हैं तो दर्शन करने को उत्सुक हुए। किन्तु, शीघ्रता का कार्य्य होनेसे न रुकसके। अतः पत्र लिखा जिसका आशय यह था:—

"चरित्रनायक जी अत्यन्त नम्रता पूर्वक अभिवादन कर प्रार्थना है कि मुझे आपके दर्शन न हुए इसका खेद है। यदि

बेल गांव में कोई श्रावक हो तो उसके द्वारा मुझे आप अपनी प्रसन्नता के समाचार अवश्य भिजवाने की कृपा करें।"

२६।३।२१ दासानुदास

एफ़ जी टेलर

वहां से विहार करने का विचार किया तो महन्त लालदासजी ने बड़ा आग्रह किया। उनके शिष्य तो चरित्रनायकजी के चरणों पर गिर गये और बहुत करुण-स्वर से प्रार्थना करने लगे। तब चरित्रनायक जी उन्हें समझा कर अपने स्थान पर पधारे। पीछे से महन्त लालदास जी ने अपने शिष्य के साथ इस प्रकार का एक पत्र भेजाः—

श्रीमान् स्वामी महाराज श्री चौथमलजीमहाराज
की सेवा में:—

प्रार्थना है, कि आप सज्जन पुरुष सर्व गुण निधान हैं। परमात्मा आप जैसी दयालु आत्माओं को दीर्घायु करे। आप नगर के सौभाग्य से यहां के नर-नारियों के अज्ञानान्धकार को दूर करने के लिये सूर्य्य रूप में प्रगट हुए हैं। आपके रस भरे उपदेशों का ज्ञानामृत पान कर सब लोग अपने को बड़ा सौभाग्य शाली समझ रहे हैं। आज कल संसार की गति कुछ और ही होरही है। आपके उपदेश से उसके सुमार्ग पर आजाने की पूर्ण सम्भावना है। आपको तेरस तक तो और विराजना पड़ेगा क्योंकि सब लोगों का आग्रह है। यदि आप स्वीकार न करेंगे तो हमें विवश होकर भगवान् महावीर की शपथ दिलानी पड़ेगी आशा है, इस पर विचार कर आप हमारी प्रार्थना को स्वीकार करेंगे।

प्रकरण २१ वां

सम्वत् १९७८ रतलाम
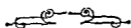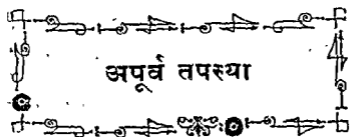
अपूर्व तपस्या

चित्तौड़गढ़ से विहार कर घटियावली पधारे। वहां चरित्र-नायक जी के कुछ व्याख्यान हुए। महाजन व कृषक लोग बड़ी रुचि से आप का उपदेश ग्रहण करते थे। उन्होंने बहुत त्याग किया। वहां के ठाकुर साहब यशवन्तसिंह जी तथा उनके काका साहब ज़ालिमसिंह जी नियमित रूप से व्याख्यान सुनते थे ठाकुर सा० ने परिंदे जानवरों को न मारने की प्रतिज्ञा की। और मुनि श्री छगनलाल जी महाराज के उपदेश से तालाब की सरहद में किसी जीव को मारने की मुमानियत के पत्थर गड़वाये। ज़ालिमसिंह जी ने शेर सुअर तथा परिंदे जानवरों को न मारने की प्रतिज्ञा की। और फालूसिंह जी ने चार जानवरों के अतिरिक्त किसी जीव को न मारने की प्रतिज्ञा की। किशन खटीक ने १, २, ५, ८, ६, ११, १४, अमावस और और पूर्णिमा इन तिथियों पर अपना धंधा (हिंसा) न करने की प्रतिज्ञा की। यहां से विहार कर आप गरुण्ड पधा-

रे। वहां एक व्याख्यान देकर हतखन्दे की ओर विहार किया। मार्ग के गांवों में लोगों की प्रार्थना पर कृषकों में व्याख्यान दिये। बहुत से कृषकों ने त्याग किया। प्रतिवर्ष वहां कई बकरे मारे जाते थे उसको न मारने की सबने प्रतिज्ञा की। इसी प्रकार एक व्याख्यान हतखन्दे में हुआ।

वहां से विहार कर निंबाहेड़े पधारे। बाज़ार में आप के बड़े ओजस्वी और सुललित व्याख्यान हुए। हिंदू मुसलमान भाई, दिगम्बर जैन मंदिर मार्गी श्रावक आदि आते थे। सब पर बड़ा प्रभाव पड़ा, और ख़ूब त्याग हुआ। चैत्र शुक्ला १३ निकट थी अतः आपने 'ऐक्यता' पर एक व्याख्यान दिया और फ़रमाया कि महावीर जयन्ती सब फिरक़े वालों को मिलकर आनन्द पूर्वक मनानी चाहिये। अस्तु। सब तैयारी होने लगी। दिगम्बर भाइयों ने मण्डप सजाया। आदि और और काम भी इस ढंग से हो रहे थे जिन से यह स्पष्ट होगया था कि सब जैन भाई एक होकर इस उत्सव को मना रहे हैं। वास्तव में था भी ऐसा ही। फिर आपने सादड़ी (मेवाड़) की ओर विहार किया। क्योंकि सादड़ी श्री संघ चित्तौड़ में उपस्थित होकर प्रार्थना कर चुका था, विनोते होते हुए बड़ी सादड़ी पधारे। वहां आप के २२ व्याख्यान हुए। जैन, अजैन लोगों ने आप के उपदेश से ख़ूब त्याग किया।

वहां से विहार कर डूंगरे पधारे। और इसके पश्चात् फिर सादड़ी। वहां दो व्याख्यान आप के और हुए। जिनका प्रभाव यह हुआ कि वहां स्त्रियों में एक क्लेश फैला हुआ था। अर्थात् ५-७ स्त्रियों पर अच्छता दोष लगा रक्खा था उनको

दूसरी स्त्रियाँ छूती तक न थीं। उसको मिटाने के लिये पहिले कई साधु महात्माओं ने उद्योग किया। किन्तु, किसी को सफलता न हुई। चरित्रनायक जी के उपदेश से वह सब दूर होकर परस्पर ऐक्यता होगई। इस प्रकार शांति स्थापन कर आप वहां से छोटी सादड़ी पधारे। जहां पूज्य श्रीलाल जी महाराज की सम्प्रदाय के अनुयायी मुनि महाराज विराजते थे अतः आपने व्याख्यान नहीं दिया। जनता और विशेषतः राज्य कर्मचारियों ने जब आप से अधिक आग्रह किया तो आप ने उत्तर दिया कि व्याख्यान तो हो ही रहे हैं। इस पर लोगों ने प्रार्थना की कि उनका व्याख्यान पंचायती नोहरे में होता है। आप का बाज़ार में होगा। सर्वसाधारण की बड़ी लालसा है अतः कृपा कर आप कम से कम एक व्याख्यान तो अवश्य ही दें। किंतु चरित्रनायक जी को अवकाश न था, इस से न ठहर सके। वहांसे प्रातःकाल विहार कर आप नीमच पधारे। वहां कुछ व्याख्यान दिये। फिर मल्हारगढ़ होते हुए मन्दसौर पधारे। जहां श्री नन्दलाल जी महाराज व श्री खूबचन्द जी महाराज आदि विराजते थे उनके दर्शन कर दो व्याख्यान दिये और जावरे विहार किया। यथा समय खलचीपुर ढोढर होते हुए जावरे पधारे, वहां चार व्याख्यान दिये। वहीं पर रतलाम श्री सङ्घ ने आकर स्पर्शना* करने की स्वीकृति कराई। पश्चात् वहांसे चरित्तनायकजी ने विहारकर नामलीकी ओर प्रस्थान किया वहां के ठाकुर साहबश्री महिपालसिंहजी तथा उनके भाईश्री राजेन्द्रसिंहजी भी व्याख्यान में आये और बड़ी भक्ति दिखाई। पश्चात् वहां से सेजावते पधारे। जहाँ रतलाम के

---

*पधारना; चेत्र स्पर्शना.

श्रावक गण पहिले ही से स्वागत के लिये उपस्थित थे। रात को वहीं निवास किया। प्रातःकाल रतलाम पधारे। वीर जय ध्वनि के साथ राजमहल के दरवाज़े, माणिक चौक, चौमुखी-पुल और सर्राफ़ा में होते हुये चाँदनी चौक में श्रीमान् सेठ उदयचन्द जी साहब के मकान में विराजे। और उसी स्थान पर बाज़ार में व्याख्यान देना शुरू किया। जेठ सुदि १४ को जनता ने बड़े आग्रह से चतुर्मास के लिये प्रार्थना की। जब आपने सब का आग्रह देखा तो फ़रमाया कि पूज्य महाराज (पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज) आज्ञा दे दें तो मुझे कुछ आपत्ति नहीं। इस पर रतलाम श्री सङ्घ ने नये शहर पूज्य श्री (पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज) को तार दिया और चतुर्मास के लिये प्रार्थना की जिसके उत्तर में स्वीकृति आगई। आषाढ़ वुदि १ को आपके रतलाम में चतुर्मास होनेका निश्चय हुआ। पश्चात् वहां से विहार कर आप धानासुते पधारे। वहां ६ व्याख्यान देकर खाचरौद पधारे, क्योंकि वहां का श्री-सङ्घ पहिले प्रार्थना कर चुका था। आषाढ़ सुदी २ को कुछ व्याख्यान दे आपने खाचरौद से रतलाम के लिये विहार किया आपके स्वागत के लिये बहुत से नरनारी आये। नगर म प्रवेश कर उन्हीं श्रीमान् उदयचन्द जी के मकान में विराजे। यथा समय व्याख्यान होने प्रारम्भ हुये। प्रथम आपके सुयोग्य शिष्य प्यारचन्द जी महाराज ज्ञाता सूत्र फ़रमाते, फिर आप अपना मनोहर व्याख्यान देते। आपकी वक्तृत्व शक्ति ऐसी बढ़ी हुई है कि चलता मनुष्य भी ठहर जाय और विना व्याख्यान सुने न हटे। सारे नगर में आपके व्याख्यान की धूम मच गई बड़े२ राजकर्मचारियों और पंडित त्रिभुवन नाथ जी जुत्शी लेट
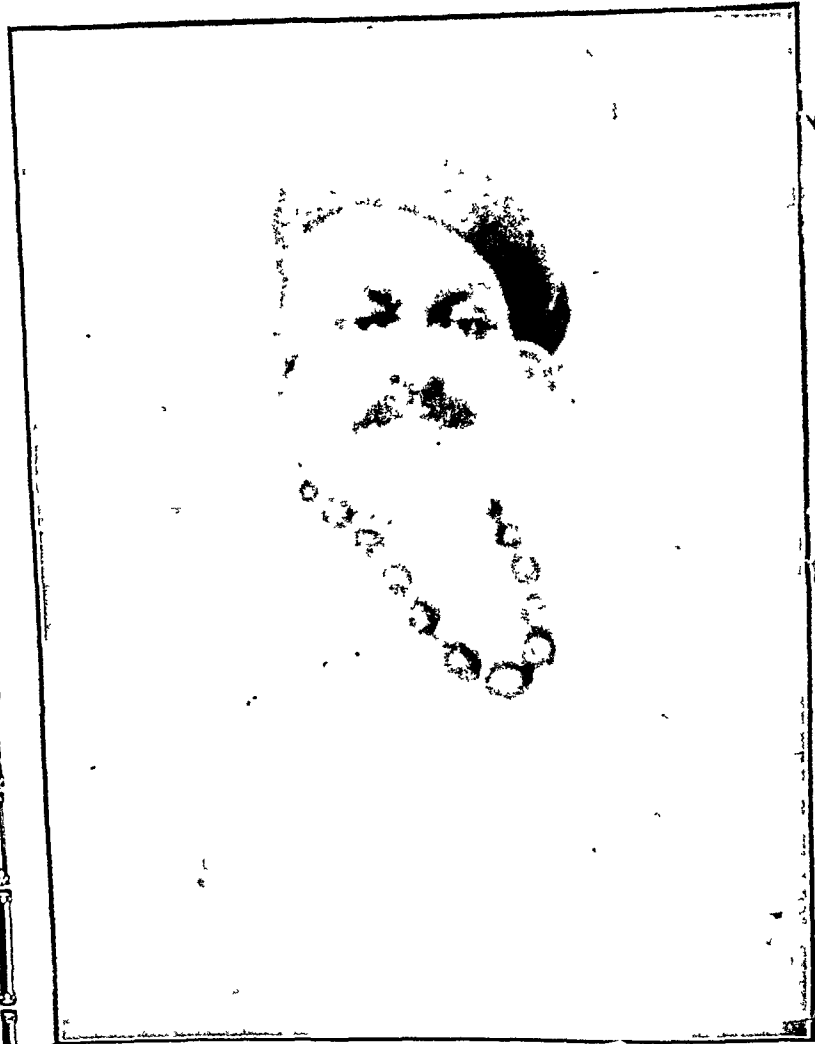
दानवीर रायबहादुर सर नाईट श्रीमान
सेठ हुकमीचंदजी इन्दौर

परिचय—प्रकरण ३२

कौंसिल मेम्बर रतलाम ने आकर लाभ लिया। उस समय चरित्रनायक जी के सुयोग्य शिष्य प्यारचन्द जी महाराज के छोटे भ्राता चांदमल जी महाराज वैराग्य लेकर प्रति क्रमण सीख रहे थे। तथा जोधपुर निवासी वीसे ओसवाल नाथूलाल जी और रामलाल जी भी वैराग्य पाकर प्रति क्रमण का अभ्यास कर रहे थे। बड़ा आनन्द आ रहा था। दूर २ के श्रावक लोग दर्शनार्थ आते थे। धर्म्म-ध्यान भी खूब होता था रतलाम के क्षमा पत्रामें यथा समय यह प्रकाशित हो चुका है। वहीं पर चरित्रनायक जी की सेवा में रहने वाले तपस्वी श्री मयाचन्दजी महाराजने तपस्या की। सारा नगर आपके दर्शनों को आता था जिससे स्थान भर जाता था। चरित्रनायक जी के उपदेश को जो व्यक्ति सुन लेता है उसका उस पर आजन्म अमिट प्रभाव हो जाता है। यही नहीं कि व्याख्यान सुने उसी समय तक उसका लक्ष्य रहे। इसका प्रमाण महन्त लालदास जी के नीचे के पत्र से ज्ञात होगा जो चरित्रनायक जी का पहिले व्याख्यान सुन चुके हैं। अजैन होने के कारण उन्होंने चरित्रनायक जी के नाम पर ही पत्र भेजा है।

स्वस्ति श्री रतलाम नगरे शुभस्थान..............सकल, गुण-निधान गंगाजल निर्मल चरित्रनायक जी श्री चौथमल जी योग्य लिखी क़िला चित्तौड़गढ़ से महन्त लालदास का प्रणाम स्वीकृत हो। अत्र कुशलं तत्रास्तु। यहां पर आपकी कृपा ही परिपूर्ण है, स्वामी! मुझको आपके अमृत सम वचनों का स्मरण होने पर हृदय गद्गद हो जाता है।

पांच साधु के बीच में, राजत मानो चन्द।
अमृत सम तुम बोलते, मिटत सकल भ्रम फंद॥

दृष्टि सुहृद मुनि चौथ की, सब को करे निहाल ।
गति विधि हू पलटे तवै, कागा होत मराल ॥
सद्गुरु शब्द सु तीर हैं, तन मन कीन्हों छेद ।
वेदर्दी समझे नहीं, विरही पावे भेद ॥
हरिभक्ता अरु गुरुमुखी, तप करने की आस ।
सत्सँगी सांचा यती, वहि देखूं मैं दास ।

आपके पांच रत्न की थापुणा का हिसाब कब तक होगा* पत्रोत्तर का अभिलाषी हूँ। आशा करता हूँ कि पत्र पढ़ते ही अपनी कुशलता का पत्र देकर मेरी अभिलाषा पूर्ण करेंगे।

१६७८ का भादवा वदि १०
ता० २८-८-१६२१

आपका शुभेच्छुक—
महन्त लालदास श्री चारभुजा जी का मंदिर क़िला
चित्तौड़गढ़ (मेवाड़)

---

*पाँच व्याख्यान की प्रतिज्ञा पूर्ति।

मुनि महाराज महन्तजी को एक वार वचन दे आये थे कि फिर कभी अवसर होने पर एक ही क्या पाँच व्याख्यान भी यहाँ दे दिये जायं तो क्या हानि है ?

भादवा शुक्ला ५ को तपस्या का पूर था। उस दिन लूले, लंगड़े, अपाहिजों को भोजन, वस्त्र दिया गया। पंचमी के दिन अकता पलता है। किन्तु, इस अकते पर शेरों को भी दूध पिलाया गया। वैसे हमेशा शेरों के लिये हिंसा हुआ करती थी। चरित्रनायक जी का व्याख्यान सुनने की रतलाम नरेश की भी इच्छा हुई। तब आश्विन कृष्णा १२ तारीख २८।सितम्बर सन १६२१ को हि० हा० कर्नल महाराजा सर सज्जनसिंह जी के० सी० एस० आई० के० सी० वी० ओ० ए० डी० सी० टू० हिज़ रायल हाईनेस दी प्रिन्स औफ़ वेल्स रतलाम कौंसिल मेम्बरों तथा दीगर सरदार और आफ़िसरान के साथ व्याख्यान सुनने को पधारे। सरकार का स्वास्थ्य अच्छा नहीं था। औषधि का सेवन हो रहा था तो भी १॥ घंटे तक विराज़ कर आपने बड़े ध्यान से व्याख्यान सुना। बीच में चरित्रनायक जी ने ३—४ वार व्याख्यान समाप्त करना चाहा किन्तु श्रीमान् महाराजा सरकार साहब ने वैसा न होने दिया। अन्त में व्याख्यान समाप्त हो जाने पर आपने चरित्रनायक जी से प्रार्थना की कि अभी तो आप विराजेंगे ही। मैं फिर दर्शन लाभ लूंगा इन्हीं दिनों जोधपुर स्टेट के भूतपुर्व दीवान साहब के सुपुत्र कान्हमल जी साहब भी चरित्तनातक जी के दर्शनार्थ आये हुये थे उसी समय रतलाम श्रीसङ्घ की प्रार्थना पर चांदमल जी बहोतरे वीसे ओसवाल को जो आपकी सेवा में वैराग्यावस्था में थे कार्तिक वदि ७ को दीक्षा दी गई।

उस समय रतलाम श्री सङ्घ ने निमन्त्रण पत्रों के अतिरिक्त ३७ तार दिये थे जिससे अन्यान्य नगरों से लगभग १००० श्रावक गण आये थे बड़े समारोह से दीक्षा हुई यहां ६ व्या-

ख्यान और देकर आपने नामली की ओर प्रस्थान किया मार्ग में
स्टेशन की सड़क पर श्वेताम्बर मन्दिर मार्गी सेठ मिश्रीमलजी
मथुरालालजी का बंगला है वहां उनकी आग्रह पुर्वक प्रार्थना को
स्वीकार कर आप ठहरे और व्याख्यान दिया।

शहर से यह स्थान दूर होने पर भी जनता बहुत एकत्र
हुई। पश्चात् वहां से सेजावत, घुंवास होते हुए नामली पधारे।
नामली में श्रीदेवीलाल जी महाराज मिल गये, जो जावरे से
विहार कर रतलाम आरहे थे। उनके आग्रह से हमारे चरित्र-
नायकजी फिर रतलाम पधारे और कुछ व्याख्यान देकर डूंगर
की ओर विहार किया। किशनगढ़ आदि गांवों में होते हुए
पेटलावद पधारे। उस समय आपकी सेवा में जोधपुर निवासी
नाथूलाल जी जिनकी आयु १६ वर्ष की थी, दीक्षा मुमुक्षु थे
अतः पेटलावद श्री संघने प्रार्थना की कि इनकी दीक्षा यहां
होनी चाहिये। तदनुसार अगहन सुदी १५ को दीक्षा हुई।
वहां से देवीलाल जी महाराज तथा चरित्रनायक जी
विहार कर सारंगी पधारे। वहां के ठाकुर साहब ने बड़ी भक्ति
दिखाई। एक दिन वहां चरित्रनायक जी का 'पर स्त्री गमन-
निषेध' पर ओजस्वी व्याख्यान हुआ जिस को सुनकर अनेक
लोगों ने पर स्त्री गमन न करने की प्रतिज्ञा की। व्याख्यान के
अनन्तर एक दिन ठाकुर साहब की ओर से एक पत्र आया
जिस में लिखा था:—

श्रीमान् महाराज चौथमल जी जैन-श्वेताम्बर
स्थानक वासी की सेवा में:—

कृपा पूर्वक आप मेरे गांव में पधारे और व्याख्यान दिये।
वे सब पक्षपात रहित एवम् उपदेश पूर्ण थे। अवसर न होने

से आपका विराजना अधिक न हुआ इस से मैं असन्तुष्ट रहा। आज आपने जो व्याख्यान 'परनारी गमन' पर दिया यह तो महत्व पूर्ण हुआ। मुझे यह लिखते बड़ी प्रसन्नता होती है कि आप में विषय को समझाने की ऐसी उत्तम रीति है कि जिस से हर एक बात मनुष्य के हृदय पर असर कर जाती है। यहां की जनता को आपने धार्मिक और शारीरिक पतन से बचाया इसके लिये कोटिशः धन्यवाद! मैंने उस समय प्रतिज्ञा नहीं की थी, इससे सम्भव है, आपको शंका उत्पन्न हुई हो। किन्तु, उसका कारण था। और वह यह कि मैं क्षत्रिय हूँ। क्षत्रिय धर्म्म में पर-स्त्री-गमन निषेध है। उस पर एक कविका पद्य मुझे स्मरण है। मैं इस को हमेशा ध्यान में रखता हूँ और उसका पालन करता हूं।

छप्पय

यह विरद रजपूत प्रथम मुख झूठ न बोले।
यह विरद रजपूत काछ परत्रिय नहिं खोले॥
यह विरद रजपूत दान देकर कर जोरे।
यह विरद रजपूत मार अरियां दल मोरे॥
जमराज पांव पाछा धरे, देखि मतो अवधूत रो।
करतार हाथ दीधी करद, यह विरद रजपूत रो॥

मेरे इस पत्र में कोई अप्रमाणिक शब्द आया होतो उसके लिये क्षमा चाहता हूं।

सम्वत् १६७८ }
पौष कृष्णा ६ }

शुभेच्छुक,
जोरावर सिंह साहरंगी।

एक दिन चरित्रनायक जी का व्याख्यान "अहिंसा परमो धर्मः" पर हुआ जिस का ठाकुर साहब के चित्त पर बड़ा प्रभाव पड़ा। उसके अनुसार उन्हों ने अपनी रियासत में दो सरक्यूलर भी जारी कर दिये। *

राज महिलाओं तथा अन्यान्य महिलाओं ने भी कई प्रतिज्ञाएें कीं। उसके पश्चात् चरित्रनायक जी ने नागदे की ओर विहार करने का विचार किया। परन्तु, थांदले का श्री संघ साहरंगी आगया और आग्रह पूर्वक वहां के लिये प्रार्थना करने लगा। इसको स्वीकार कर चरित्रनायक जीने थांदले की ओर विहार किया। वड़वेट तथा पेटलावद होते हुए यथा समय थांदले पधारे। मार्ग में इन दोनों स्थानों पर व्याख्यान हुए। थांदले से व्याख्यान दे झाबुवे पधारे। वोरी के ठाकुर साहब व उनके काका साहब व कामदार साहब ने भी व्याख्यान में योग दिया। वहां से चरित्रनायक जी पारे पधारे वहां परस्पर का वैमनस्य दूर कर राजगढ़ पधारे। राजगढ़ में हिन्दुओं के अलावा मुसलमान और बोहरे भी व्याख्यान में सम्मिलित होते थे। वे कहने लगे कि यह उपदेशक खुदा का भेजा हुआ मालूम होता है। वहां ३० सिखी लोगों ने (कपड़ा बुनने वालों ने) मांसमदिरा का परित्याग किया। जब आप पधारने लगे तो विदा करने को मुसलमान भी आये। फिर चरित्रनायक-जी वहां से क़िले धार पधारे। वहां देवीलाल जी महाराज की अस्वस्थता के कारण आप कुछदिन ठहरे और व्याख्यान दिये। पहिले इस्लाम धर्म के पेशवा व ईसाई धर्म के पेशवा आते थे तथा वहां के दीवान साहब भी दो बार व्याख्यान में आये।

---

* देखिये परिशिष्ट (२)

वहां से केसूर पधारे वहां आस पास के गांवों के चमार भी व्याख्यान सुनने को आते थे। उन्हों ने मांस मदिरा का त्याग करके यह प्रतिज्ञा कीः—

पंच चमार मेवाड़ा केसूर

इकरार नामा लिखने वाला चमार पंचलुनी वाला दुर्गाजी चौधरी सकल पंच मालवा और खाचरोद वांसी जी और सकल पंच वड़लावदा वाला वालाजी और सरपन्च वड़ नगर मोतीजी, इन चार गांव के पंच केसूर (परगने धार) में इकट्ठे हुए थे। चम्पाबाई के यहां गंगाजल हुआ था जिस में पूज्य श्री श्री १००८ श्री मुन्नालाल जी महाराज की सम्प्रदाय के सुप्रसिद्ध वक्ता श्री श्री १००८ श्री चौथमल जी महाराज के सदुपदेश से सब ने यह प्रतिज्ञा की है कि जो दारु पीवेगा और मांस खावेगा सो पंच से वन्द होवेगा—ज्ञात से छः महीना अलग रहेगा और ११) रु० दंड का देगा यह इकरार नामा महदपुर, उज्जैन, खाचरोद, सुखेड़ा, पिपलोदा, जावरा, मन्दसौर, चित्तौड़, रामपुरा, भानपुरा, कुकड़ेश्वर, मनासा अन्दाजन गांव ६० में माना जावेगा।

फागुण बुदि ३ सम्वत् १६७८ ता० १३-२-२२

अंगुष्ठ निशानी — पंचलुनी वाला दुर्गाजी
खाचरोद वाला वासो जी
वड़लावदा-वालाजी पटेल
वड़ नगर-मोती जी पटेल।
पटेल भेरू केसूर, रूपा पन्ना केसूर

दः ब्राह्मण हरिशंकर गौर रतलाम जिनके सामने पंचों ने लिखा।

यह इक़रार नामा हो जाने पर जब चमारों ने शराब पीना बन्द कर दिया तो ठेकेदार क्रोधित होकर कहने लगा कि मेरी ५००) रुपया की हानि हुई। उसने सरकार में इत्तिला की। सरकार ने चमारों को बुला कर धमकाया तथा सख़्ती की। तब उन लोगों ने कहा कि गर्दन पर तलवार रखदी जाय तो भी हम प्रतिज्ञा भंग न करेंगे। एक चमार के मुंह में ज़बरन मुंह फाड़ कर शराब कूढ़ा गया। उसने नहीं पिया। किन्तु स्पर्श मात्र पर ही पंचों ने उस पर १।) रुपया दण्ड कर के उसकी मिठाई बंटवाई। जिससे मालूम हो कि मदिरा स्पर्श पर ही इतना दण्ड हुआ तो पीने पर न जाने कितना हो। फिर वहां उपदेश कर चरित्र नायक जी इन्दौर पधार गये वहां पीपली बाज़ार में ठहरे और श्रीयुत् नन्दलाल जी भंडारी की पाठशाला में कुछ व्याख्यान दिये और फिर देवास की ओर विहार किया।

प्रकरण ३२वां

सम्वत् १९७९ उज्जैन
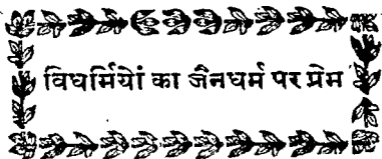
देवास में आपका व्याख्यान दरबार हाई स्कूल में हुआ। एक बार व्याख्यान कन्यापाठशाला में भी हुआ एक दिन श्रीमान् देवास नरेश (पांती २) सर मल्हार राव बाबा सा० के० सी० एस०आई० पधारे। आपने कुछ प्रश्न किये जिनके चरित्र-नायक जी ने यथावत् उत्तर दिये। विहार करने का विचार किया तो श्रीसंघ ने प्रार्थना की कि आप की सेवा में जो रामलाल जी वैरागी दीक्षा मुमुक्ष हैं उनकी दीक्षा यहीं होनी चाहिये। इसको चरित्रनायक जी ने स्वीकार किया। चैत्र शुक्ला१को दीक्षा हुई। उससमय रामलालजीकी आयु१४ वर्षकी थी। अस्तु। नवदीक्षित को साथ ले चरित्रनायक जी ने उज्जैन श्रीसंघ के आग्रह से वहां के लिये प्रस्थान किया लूण मण्डी के उपाश्रय में ठहरे। वहीं पर उन दिनों जयाजी-गंज में देवीलालजी महाराज विराजते थे अतः आहार पानी कर आप दर्शनार्थ वहां पधारे। उसी दिन देवीलाल जी महाराज ने रतलाम की ओर विहार किया। वहां मुनि सम्मेलन

होने वाला था। अतः आपको भी जाना था। परन्तु, दिगम्बर जैन के नेता घासीलाल जी के सुपुत्र कल्याणमल जी आदि के आग्रह से आप उपकार समझ कर कुछ दिन और ठहरे। महावीर स्वामी का जन्मोत्सव मनाने के लिये आपने उपदेश दिया कि भाई २ पृथक् हो जाते हैं, परन्तु पिता की सेवा के लिये सब को एक हो जाना चाहिये। क्या हुआ जो किसी कारण हमारी (जैनियों की) तीन शाखायें (दिगम्बर तथा श्वेताम्बर मन्दिरमार्गी और स्थानक वासी) हो गई लेकिन मूल नायक तो एक ही हैं अतः सब दिगम्बर, श्वेताम्बर मन्दिरमार्गी और स्थानक वासियों ने मिलकरउत्सव मनाया। ३००० मनुष्यों की उपस्थिति थी सर्व प्रथम प्यारचन्द जी महाराज महावीर स्वामी के जन्म पर कुछ बोले फिर चरित नायक जी ने महावीर स्वामी का चरित्र चित्रण किया। लोगों पर बड़ा प्रभाव हुआ। व्याख्यान फिर भी बराबर होते रहे। पहिले प्यारचन्दजी महाराज आधे घंटे तक व्याख्यान देते। उसके पश्चात् चरितनायकजी का उपदेश होता। जैन, वैष्णव, मुसलमान भाई, बोहरों की ओर से चतुर्मास का आग्रह हुआ। आपने फ़रमाया कि हमारे पूज्य-वर रतलाम विराजते हैं, वहीं जाने पर विचार होगा। तदनु-सार उन्हेल, खाचरोद होकर वैशाख सुदी ५ को आप रतलाम पधारे। वहां चांदनी चौक में व्याख्यान होने लगे। उस समय मुनि-सम्मेलन के कारण वहां पूज्य श्री मुन्नालालजी महाराज नन्दलाल जी महाराज, देवीलालजी महाराज, खूबचन्दजी महाराज आदि २६ सन्त थे। उसी समय उज्जैन श्रीसंघ व दिगम्बर जैन कल्याणमल जी के भ्राता राजमल जी व आफ़ी-सर पंचायत बोर्ड बाबू वंशीधरजी भार्गव वैष्णव आदि ने

रतलाम आकर पूज्य श्री (मुन्नालालजी महाराज) से आग्रह पूर्वक प्रार्थना की। तदनुसार पूज्य श्री ने चरित्रनायकजी को चतुर्मास उज्जैन करने की आज्ञा दी। कल्पकाल पूर्ण होने पर चरित्रनायकजी ने उज्जैन की ओर विहार किया। तेली आदि भाईयोंने तीन व्याख्यान और होने का आग्रह किया उनके आग्रह को मान कर आपने तीन सुललित व्याख्यान दिये। व्याख्यान स्थलमें ही तेलियों ने प्रतिज्ञा की। वहां से नामली, पंचेड़ होते हुए जावरे होकर ताल पधारे और फिर महदपुर। महदपुर में त्रिस्तुतिक मन्दिरमार्गी भाईयोंकी पाठशाला के विद्यार्थियों की धार्मिक परीक्षा की लोगों ने चतुर्मास के लिये बहुत आग्रह किया। लेकिन उज्जैन की स्वीकृति हो चुकी थी। इससे चरित्रनायकजीने उत्तर दिया कि आगामी चतुर्मास पर अवसर होगा तो विचार करेंगे। वहां से यथा समय उज्जैन पहुंचे। उज्जैन में स्थानांग सूत्र सहित व्याख्यान होता था। वहां की जनता तो सम्मिलित होती ही थी, किंतु दूर के स्थानों से भी बहुत लोग आते थे। उसी समय चरित्रनायकजी की सेवा में रहने वाले तपस्वी मयाचन्द जी महाराज ने ३३ उपवास की तपस्या की। तारीख २९-७-२२ श्रावण शुक्ला ५ शनैश्चर को शुरू की थी जिसका पूर ३०-८-२२ भाद्रपद शुक्ल ८ बुधवार को था। इसके उत्सव की सूचना श्री संघ ने जैन जगत तथा जैन पथ प्रदर्शक आदि पत्रों और निमन्त्रण पत्र द्वारा सब ही जगह दी। रतलाम, जावरा, मन्दसौर, प्रतापगढ़, मल्हारगढ़ रामपुरा, नीमच, खाचरोद, नागदा, बांगरोद, उन्हेल, खरवा बिलरोद बाघली, धामण गांव, शाजापुर, सुजालपुर, आगरा तराना, भूपाल, दिल्ली आदि २ भिन्न २ प्रान्तों के श्रावक श्राविकाओं का आगमन हुआ। तपोत्सव के उपलक्ष्य में पूर

के दिन कपड़े के मिल प्रेस, जीन, कसाई खाने बन्द रहने चाहियें यह सोच कर श्री संघ का डेपुटेशन विनोद मिल के एजेन्ट बाबू मदन मोहनजी के पास गया उक्त अवसर पर और मिल वंद रखने की प्रार्थना की। वास्तव में देखा जाय तो मिल वंद रहना कठिन था क्योंकि एक दिन मिल वंद रहने में ७०००) रुपै की हानि उठानी पड़ती है, तथापि दिगम्बर जैन धर्मावलम्बी बाबू मदनमोहन जी साहब ने उसकी परवाह न कर मिल वंद रक्खा। इसी प्रकार श्री संघ की प्रार्थना पर खान साहिब सेठ नजरअली अलावख़्श जी के मिल के मालिक सेठलुक़मान भाईने भी मिल वंद रखने का निश्चय किया। ५,०००) रु० की हानि सही। अहले इस्लाम होकर भी यह धर्मनिष्ठा के घर पर मुहर्रम के दिनों में ३ दिन तक जाति भोजन होता था वह दो दिन तक तो हो चुका था तीसरे दिन (जिस दिन तपस्या का पूर था) के भोजन में उन्होंने खाने में मीठे चांवल बनवाये और इस प्रकार लगभग १०० बकरों को प्राण-दान मिला उन्होंने यह भी कहलाया कि यदि मुझे पहिले मालूम हो जाता तो पिछले दो दिनों में भी मैं और कुछ बनवा लेता इसके लिये श्रीसंघ, दिगम्बर जैन नेता सेवारामजी के सुपुत्र रखब दास जी पाटनी व बाबू बंशीधर जी भार्गव आदि ने मिलकर जनाब वाला क़ाजी साहब शहर व इस्लाम भाइयों से विनय की। इस कार्य्य में जनाब वाला क़ाज़ी साहब शहर, वज़रुद्दीन साहब उस्ताद, हसन मियां, मौलाना फैज़मुहम्मद और इब्रा-हीमजी क़स्साबने बड़ा सहयोग दिया और पूरी २ कोशिश की पूर के दिन चरित्रनायकजी का—"अहिंसापरमोधर्मः" पर एक

सुमधुर व्याख्यान हुआ। जज साहिब मौलवी फ़ाज़िल, सादुद्दीन हैदर, व सब जज साहब मिस्टर चौबे, पुलिस सुपरिण्टेन्डेन्ट साहब तथा अन्यान्य कई प्रतिष्ठित सज्जन पधारे थे। व्याख्यान समाप्त होजाने पर जज साहब ने सारगर्भित शब्दों में व्याख्यान और चरित्रनायक जी की वृत्ति की प्रशंसा की। जिस का सारांश इस प्रकार है:—

मैंने बहुत से भाषण, वाज़, स्पीच वग़ैरः सुने हैं लेकिन मुनि चौथमल जी ने जो व्याख्यान आज हम लोगों को सुनाया है, उस में बहुत बड़ा आनन्द आया है। वह इज़्ज़त करने के लायक़ है। जो २ बातें चरित्रनायकजी ने आप को सुनाई उन को याद रखना और उन पर अमल करना आप का फ़र्ज़ है। मैं यहां के और बाहर वाले साहबान का शुक्रिया अदा करता हूँ। हमारे सामने जो स्वामी जी महाराज बैठे हैं आप ने ३३ उपवास किये हैं। ख़याल कीजिये कि "३३ उपवास" ऐसा कहना कितना आसान है, लेकिन करना कितना मुश्किल है। हम लोगों में ३० रोज़े किये जाते हैं लेकिन उनमें दोनों वक्त सुबह और शाम खाने को मिलता है। उस पर भी रोज़े रखना मुश्किल का मैदान मालूम होता है स्वामीजीने सिर्फ़ गर्म पानीसे ही गुज़ारा किया और वह पानी भी दिन हो दिन में- रात को वह भी नहीं लिया क्योंकि आपके धर्म में उसकी मुमानियत है। स्वामो जी का तहे दिल से शुक्रिया अदा करता हूं। मैंने यहां आकर सुना कि क़स्साबों ने ब रज़ामन्दी ख़ुद बाहमी इत्तिफ़ाक़ (पारस्परिक मेल) से आज के दिन जानवरों का क़त्ल करना व गोश्त बेचना बन्द कर दिया जिसमें कि सरकार की जानिब से क़तई

दवाव नहीं किया गया था। मुझे इस वातसे वहुत ही ख़ुशी हासिल हुई सरकार तो चोर, पापी, अन्यायी, दुराचारी आदि को चोरी, पाप, अन्याय और दुराचरण करने पर पकड़ कर दंड देता है, लेकिन उससे उतना सुधार नहीं होता जितना स्वामी जी के व्याख्यान से। आपकी नसीहत से चोर चोरी करना, पापी पाप करना, अन्यायी अन्याय करना और दुराचारी दुराचार करना छोड़ देता है। इस हालत में प्रजा वत्सल ग्वालियर महाराज को वहुत फ़ायदा पहुँचता है। इसलिये मैं हमारे महाराजाधिराज सेंधियाकी तरफ़ से स्वामीजी का शुक्रिया अदा करता हुं इतना कहकर आपने स्थान ग्रहण किया। ख़ूव करतल ध्वनि हुई जावरा के नगर सेठ श्रीयुत् सोभागमल जी मेहता भी पूर के उत्सव में जावरा से आये थे। उन्होंने भी व्याख्यान मण्डप में खड़े होकर वड़े मधुर और सुललित शब्दों में उपस्थित सज्जनों को धन्यवाद देते हुये चरित्रनायक जी की प्रशस्ति में एक संक्षिप्त वक्तृता दी आप वड़े समाज हितैषी, शास्त्रवेत्ता और गम्भीर स्वभाव के हैं समाजोन्नति और विद्या प्रचार के सम्वन्ध में आपके वड़े उदार विचार हैं और समयर पर आप उन्हें कार्य-रूप में भी परिणत करते रहते हैं।

इस के पश्चात् मौलाना यादअली साहव ने सभा में खड़े होकर ज़ाहिर किया कि स्वामी जी महाराज के व्याख्यान की तारीफ़ करने के लिये मेरे पास अल्फाज़ नहीं हैं उस मुकाम को वड़ा ख़ुशक़िस्मत समझना चाहिये जहां ऐसे गुणी जनों की तशरीफ़ आवरी हो। धन्य है ऐसे महात्मा जो अपनी वेश क़ीमती ज़िंदगी को ताक़ते रूहानी (आत्मिक वल) और मज़हवी तरक्क़ी में गुज़ारते हैं। इन्हीं की

ज़िंदगी कामयाब समझना चाहिये वैसे तो दुनियामें बे इंतिहा (असंख्य) जीव पैदा होते और मरते हैं। ज़रूरत है कि हम भी ऐसे पाक दिल और पाक ख्यालात वाले महात्माओंकी नसीहतों पर चलें और अपने मज़हबी इख़्तिलाफात (साम्प्रदायिक मत भेद) को भूलकर अपनी क़ौम और मुल्क को तरक्क़ी पहुँचावें एक मुल्क में रहने और दीगर चन्द वजूहातों से जैनी हमारे भाई हैं हमको अपने तमाम कारोबार निहायत मेल और मुहब्बत से करने चाहियें" दूसरे दिन भी वहीं पर एक व्याख्यान फिर हुआ। ३०० लूले लंगडे अपंगों को भोजन कराया गया इसके बाद चरित्रनायक जी के व्याख्यान की और भी अधिक प्रशंसा फैल गई सर सूबा हयात मुहम्मदखां सा०, सूबासाहब वासुदेव जी निगुड़ कर, प्रांत जज मौलवी फाज़िल सादुद्दीन हैदर सा० सब जज साहब, नायब साहब, सूबा साहब, मेजर साहब, फौज ऑफीसर पुलिस इन्स्पेक्टर साहब, ठेकेदार निज़ामुद्दीन साहब आदि ने व्याख्यान श्रवण किया। व्याख्यान की प्रशंसा करते हुए सर सूबा साहब ने दुबारा आकर व्याख्यान सुनने की इच्छा प्रगट की साथ ही यह भी कहा कि यदि इतने दिन पहिले मालूम होता तो मैं पहिले भी व्याख्यान सुनने का लाभ ज़रूर लेता। क्योंकि महाराज श्री जी का व्याख्यान बड़ा दिलचस्प होता है. इसके पश्चात् जयाजीगञ्ज में रहने वाले श्रावकों ने वहां व्याख्यान कराने और चरित्रनायक जी की सेवा में जो दो भाई मुमुक्षु थे उनको दीक्षा दिये जाने की आग्रहपूर्वक प्रार्थना की। उसे स्वीकार कर आप आसोज वदि २ को जयाजीगंज में पधारे। वहां कार्तिक वदि ७ की दीक्षा निश्चित हुई। वदि ३ को वाने विठाये गये और यथासमय कलपघर के बाग़ में दीक्षा हुई। मुमुक्षुओं में एक रत्न-

लाम के रहने वाले ३२ वर्ष के बीसे ओसवाल थे। दूसरे भाई इन्दौर के रहने वाले १४ वर्ष के थे। साथ में उनकी माता भी थी। दीक्षा हो चुकने पर एक का नाम सन्तोष मुनि रखा गया जो चरित्रनायक जी के नेश्राय में रहा। दूसरे इन्दौर निवासी का नाम मगन मुनि रक्खा गया और वह छगनलाल जी महाराज के नेश्राय में रहा उनकी माता को धापूजी आर्याजी के नेश्राय में किया उस दिन चरित्रनायक जी सेवाराम जी के बाग़ में रात रहे। फिर जयाजीगञ्ज में पधारे और कुछ व्याख्यान देकर पीछे शहर में। वहां "गुरु गुण महिमा" नामक पुस्तिका (मुनि श्री प्यारचन्द जी महाराज विरचित) वितरिण की गई। वहां चरित्रनायक जी ने व्याख्यान के साथ रुक्मिणी जी का इतिहास वांचा इस प्रकार चतुर्मास में वहां अच्छा धर्म-ध्यान हुआ अजैन लोगोँ तक ने व्रत उपवासादि किये। जिनका उल्लेख क्षमा पत्रा में हो चुका है अग्रहन वदि १ को विहार करने के विचार से एक व्याख्यान देकर सब से क्षमत् क्षमापन्ना किया। विहार करना सुनकर जनता को बड़ा दुःख हुआ। सब चाहते थे कि आप अभी कुछ और विराजें। किन्तु कल्पता नहीं था, अतः देवास की ओर विहार किया। मार्ग में शहर से बाहर सेवाराम जी का बाग़ आया। वहीं लोगों ने आग्रह कर चरित्रनायक जी को ठहरा लिया। वहां चरित्रनायक जी ने स्तवन के साथ २ मंगलीक फ़रमाया दूसरे दिन अहले इस्लाम के पेशवा फैज़ मुहम्मदखां ने भी चरित्र-नायक जी से व्याख्यान होने का निश्चय करा लिया। यथा-समय उसी बाग़ में व्याख्यान हुआ। फिर विहार करने का विचार किया तो लोगों के पुन्य से बादल हो गये और वर्षा

दानवीर रायबहादुर श्रीमान् सेठ कल्याणमलजी इन्दौर

परिचय-प्रकरण ३३

होने के चिन्ह दिखाई देने लगे। तब जनता ने आग्रह पूर्वक प्रार्थना की कि इस अवस्था में आप विहार न करें तदनुसार दौलतगञ्ज में पधारे।

और कुछ व्याख्यान देकर देवास की ओर प्रस्थान किया उज्जैन श्री सङ्घ बहुत दूर तक पहुंचाने को आया। फिर आप नरवल पधारे। वहां भी चरित्रनायक जी ने व्याख्यान दिया और आहार पानी कर देवास प्रस्थान किया। देवास पधारने का मुख्य कारण यह था कि देवीलालजी महाराज का जब से वे चतुर्मास पूर्ण कर इन्दौर से पधारे थे, स्वास्थ्य ठीक नहीं था। दूसरे देवास श्री सङ्घ की प्रार्थना भी थी। अतः आप देवास पधारे। धर्म धुरन्धर महाराज सर मल्हारराव पंवार K. C. S I. देवास भी व्याख्यान में पधारे। आप प्रायः चरित्रनायक जी के निवास स्थान पर भी पधारते और अनेक उपयोगी विषयों पर चर्चा किया करते। एक समय सरकार ने हमारे चरित्रनायक जी से प्रार्थना की कि आप कुछ दिन विराज कर जनता का अज्ञानान्धकार दूर करने की कृपा करें। इसे उपकार समझ आपने स्वीकार किया। पहिले व्याख्यान कन्या पाठशाला में होते थे किन्तु जब श्रोतागण अधिक आने लगे तो तुकोजीगंज के मैदानमें व्याख्यान होने लगा सरकार सर तुकोजीराव बापू साहिब महाराजा पंवार K. C. S. I. राज्य तथा आपके छोटे भाई व दीवान रायबहादुर नारायण-प्रसादजी, श्रीयुत् पी० एन० भाजेकर B- A L- L- B- श्रीयुत् जी०ए० शास्त्री एम० ए०, श्रीयुत डी० आर० लहरी एम०ए० तथा अन्यान्य विद्वानों ने भी व्याख्यानों में योग दिया। मुसलमान भाइयों ने प्रभावना बांटी। फिर चरित्रनायक जी के व्याख्यान

देवास के घन्टाघर तथा राजवाड़े में हुए। जहां सर्वसाधारण को सरकारने आने दिया। राजवाड़े के व्याख्यान के दिन महाराजा सरकार साहिब की ओर से स्थूल पेड़े की प्रभावना बांटी गई। फिर दरबार ने चरित्रनायक जी से गोचरी की प्रार्थना की जिसे स्वीकार किया। दरबार ने विचार पूर्वक जैनधर्म की क्रिया के अनुसार आहार (वहराया) दिया। आप खुले पांव से चरित्तनायकको पहुंचाने के लिये राज वाड़े के दरवाज़े तक पधारे। फिर क़ाज़ी शहर व मुसलमान भाइयों के आग्रह से ईदगाह में व्याख्यान हुआ। शहर काज़ी ताजुद्दीन साहब ने व्याख्यान की समाप्ति पर डाक्टर गणपतरावजी सीताले साहिब सेकहा कि सर्व साधारण में प्रगट कर दो कि मैं ने जन्म भर के लिये माँस, मदिराका त्याग और पर स्त्री-गमन आदि अनेक बातों के त्याग किये। इस्लाम भाइयों की ओर से बताशे की प्रभावना बांटी गई। देवास राज्यकी ओरसे भी एक व्याख्यान के लिये प्रार्थना हो चुकी थी। वहां भी राज वाड़े में २ व्याख्यान हुए। ज़हां स्वतः नरेश सर तुकोजीराव बापू साहिब महाराज पंवार K. C. S. I, पधारे। और उन्हीं की तरफ़ से स्थूल पेड़े की प्रभावना हुई।

वहां से विहार कर इन्दौर पधारे और पीपली बाज़ार में ठहरे। बड़ी धूमधाम से स्वागत हुआ। तीन व्याख्यान श्रीमान् सेठ नन्दलालजी साहबकी पाठशाला में हुए। चरित्रनायकजी का दक्षिण की ओर पधारने का विचार था। किन्तु, जनता के प्रेम व आग्रह से २६ दिन ठहर कर बम्बई बाज़ार में व्याख्यान दिये। माहेश्वरी, अग्रवाल, नीमां, खण्डेलवाल, दिगम्बर श्वेताम्बर, स्थानकवासी, तथा मुसलमान सब ने

वड़ी भक्ति दिखाई। उन दिनों इन्दौर के आसपास प्रथानुसार सैंकड़ों जीवों की हिंसा होने वाली थी। लोगों ने डिस्ट्रिक्ट सूवा साहिब से प्रार्थना की। उन्होंने उसी समय उसका समुचित प्रवन्ध कर दिया। सेठ जड़ावचन्द जी तातेड़ वावू राजमलजी नायठा, हस्तीमल जी भटेवरा, मगनलालजी पोरवाड़, भेरवलाल जी ओसवाल, मथुरालाल जी जावरे वाले आदि १५ दिन रात गांवों में जा जाकर इसके लिये परिश्रम किया। और अपने धंधे रोजगार सब वन्द रक्खे। कुंवरजी नेमा ने इस कार्य में सहायतार्थ ५००) दिये लगभग १५०० जीवों को त्राण मिला फिर इन्दौर से रतलाम की ओर विहार किया। मार्ग में कृपकों के आग्रहसे १०-१२दिन के लिये हातोद नामक गांव में ठहरे। आस पास गावों के लोग लग भग १५०० केआकर व्याख्यान सुनते थे। वहां प्रत्येक मास की अमावस्या तथा एकादशी को निम्न लिखित नियम पालन करने की प्रतिज्ञा हुई।

(१) भड़भूंजे भाड़ और तेली घांणी वन्द रखेंगे।
(२) कुम्हार चाक न चलावेंगे।
(३) कृपक वैलों को न जोतेंगे।
(४) हलवाई भट्टी न चलायेंगे।
(५) सुनार अग्नि का काम वन्द रक्खेंगे।

इस प्रकार महावुदि १४ सम्वत् १९९९ को प्रतिज्ञा होकर इकरारनामा लिख दिया गया। हातोद तक लोग इन्दौर से मोटरों में बैठ २ कर दर्शनार्थ आते थे। फिर हातोद से आप विज्ञागांव के मनुष्यों के आग्रह से वहां (विज्ते) पधारे।

व्याख्यान दिया किशनलालजी सुनार (हातोद निवासी)ने बताशों की प्रभावना की। फिर आगरा (होल्कर स्टेट) में पधारे। वहां बद्रा पटेल ने सब कृषकों को एकत्रित कर व्याख्यान कराया। शक्कर की प्रभावना बांटी। वहां से विहार कर देपालपुर पधारे। वहां श्वेताम्बर स्थानक वासी का एक भी घर न था। परन्तु, मन्दिर मार्गी भाइयों के आग्रह से बाजार में व्याख्यान दिया। लोगों ने बड़ा प्रेम दिखाया। वहीं पर हैदराबाद निवासी रायबहादुर सेठ ज्वालाप्रसाद जी इन्दौर आये थे। उन्हें खबर लगी कि महाराज श्री देपालपुर विराजते हैं तब वे तथा रामलालजी और सुखलाल जी कीमती वहां आये। व्याख्यान सुनकर कुछ बातचीत कर वापिस इंदौर पधार गये। इधर चरित्रनायक जी एक व्याख्यान और देकर गौतमपुरे पधारे वहां कुछ व्याख्यान दे बड़नगर विहार किया। वहां भी स्थानक वासियों के १—२ ही घर हैं तथापि मन्दिर मार्गी भाइयों ने चरित्रनायक जी को आग्रह पूर्वक ठहरा कर छः व्याख्यान करवाये। वहां से विहार कर आप रतलाम पधारे। क्योंकि वहां शास्त्र-विशारद पूज्य मुन्नालाल जी महाराज विराजमान थे। वहां पूज्यश्री के दर्शनकर तथा चांदनी-चौक व नीमच चौकमें छः व्याख्यान दे धामणोद होकर चेत-सुदि १४ को सेलाने पधारे। वहां सर्वसाधारण में व्याख्यान हुआ और उसका अच्छा प्रभाव पड़ा।

प्रकरण ३३ वां ।

संवत् १९८० इन्दौर ।

नरेशों और सम्पत्तिशालियों की श्रद्धा

सेलाना पहुंच कर चैत्र शुक्ला १ को महलों के सामने व्याख्यान दिया। सेलाना नरेश व्याख्यान सुनने को पहिले से उत्कण्ठित थे। किन्तु, अस्वस्थता के कारण न आ सके अतः आपके दीवान साहब ने योग दिया। वहां से आप पिपलोदे पधारे। वहां प्रतिवर्ष माता जी के यहां बकरे का बलिदान होता था उसको ठाकुर साहब ने चरित्रनायक जी के उपदेश से बन्द किया। और स्वयम् ने शेर तथा सूर के अतिरिक्त तीतर कबूतर आदि परिन्दे जानवरों को न मारने की शपथ ली ठाकुर साहब ने और ठहराने का आग्रह किया। परन्तु, आप समयाभाव से न ठहर सके। वहां से विहार कर जावरे पधारे वहां महावीर जयन्ती मनाई। तथा कुछ व्याख्यान भी हुए। कजौड़ीमल जी महाराज का स्वास्थ्य ठीक न होने से आप वहां विराजे। २—३ डाक्टरों का इलाज हुआ किन्तु, अन्त में आलोयणा (संथारा) कर वे देवलोक हो गए। फिर चरित्रनायक जी ने वहां से रिंगनोद की ओर विहार किया क्योंकि वहां के कुमास्दार साहब ने जावरे आकर प्रार्थना की थी वहां २ व्याख्यान हुए। स्थिरता कम थी, लेकिन ठाकुर

साहब रणजोतसिंह जी तथा उनके छोटे भाई ने आग्रह कर ६ व्याख्यान और करवाये। वहां से विहार कर मन्दसौर पधारे दो व्याख्यान खिलचीपुर में हुए और वहां दिगम्बर जैन नेता भोप जी शम्भूराम के भय्या साहब ने आग्रह किया कि आप का व्याख्यान मेरी हवेली पर हो वहां गृह महिलाओं को भी सुयोग मिलेगा। तब उनके आग्रह पर चरित्रनायक जी के चार व्याख्यान हुये फिर झलकूपुरा बज़ाज़-ख़ाने में व्याख्यान हुये। पोरवाड़ भाइयों में कन्या विक्रय न करने की प्रतिज्ञा हुई। और नियम होगया कि जो ऐसा करेगा उस पर जातिदण्ड किया जायगा। एक व्यक्ति ने जिसने अपनी लड़की के दहेज के २०००) लेने ठहराये थे व्याख्यान में ही खड़े होकर दहेज का रुपया न लेने की प्रतिज्ञा की और कहा कि ३००) रू० तो मैं ले चुका हूँ। १७००) शेष हैं उनमें से एक पैसा भी नहीं लूंगा। और ३००) जो ले चुका हूँ उन्हें भी अपनी सुविधा के अनुसार चुका दूंगा। क्योंकि अभी मेरे पास नहीं है इसी प्रकार ओसवालों में भी सुधार हुआ और वृद्ध विवाह की प्रथा मिटी। सर्राफ़ लोगों ने प्रतिज्ञा की कि चांदी में अधिक मेल न करेंगे। दूसरे दिन विहार का विचार था लेकिन शहर कोतवाल हेतसिंह जी के आग्रह से एक व्याख्यान और दिया जिसमें बहुत सी जीवहिंसा बन्द हुई।

फिर आप पाल्ये पधारे वहां भोपजी शम्भूराम के भय्या साहब मोटर में बैठकर दर्शनार्थ पधारे। फिर चरित्रनायक जी मल्हारगढ़ और नारायणगढ़ पधारे। दोनों स्थानों पर व्याख्यान हुए और अच्छा उपकार हुआ। नारायणगढ़ में इसलाम धर्म के मुखिया व जागीरदार हफ़ीज़ुल्लाखां साहब के

आग्रह से व्याख्यान हुआ। शहर क़ाज़ी, मजिस्ट्रेट साहब डाक्टर साहब आदि कई ने व्याख्यान का लाभ उठाया। ठाकुर रणजीतसिंह जी साहब, व ठाकुर रघुनाथसिंह जी साहब और ठाकुर चैनसिंह जी साहब ने मदिरा सेवन तथा पर स्त्री-गमन का त्याग किया। वहां से झारड़े होते हुए महागढ़ पधारे। वहां कृषकों ने एक ही व्याख्यान सुन कर अमावस्या को हल न चलाने, वैश्यों ने दुकानें न लगाने तथा कन्या-विक्रय न करने आदि की प्रतिज्ञाएं की। ठाकुर भवानीसिंह जी, ठाकुर रणछोड़सिंहजी, ठाकुर कालूसिंह जी आदि ने जीव-हिंसा के त्याग किये। वहां से मणासे की जनता का अत्यन्त आग्रह देख कर आप वहां पधारे और व्याख्यान दिये वहां अल्हेड़ कामदार जी का पत्र आयाः—

ता० ५—६—२३
ज्येष्ठ वदि ७ स० १९८०

राजमान् राजे श्री १००८ श्री मुनि चौथमल जी महाराज अनेकानेक वन्दना पश्चात् विदित हो कि श्रीमान् का आज्ञाकारी ३ साल से दर्शनों का अभिलाषी है। आशा है, कि इस शुभ—अवसर पर हाज़िर होकर मनोरथ पूर्ण करूंगा।

कामदार ठि० अल्हेड़ { आपका दास
शेख महमूद बख़्श रायपुर
(मारवाड़)

मणासे से व्याख्यान देकर कुकड़ेश्वर पधारे। वहां तीन व्याख्यान हुए। जिससे तेलो लोगों ने मदिरा मांस सेवन की

शपथ ली और जाति-नियम बना लिया कि जो ऐसा करेगा उसको जाति दण्ड दिया जायगा। वहाँ से विहार कर रामपुरे पधारे। यह लिखने की आवश्यकता नहीं कि लोग दूर २ से चलकर चरित्रनायक जी के व्याख्यान श्रवण करने को आते हैं। अस्तु। रामपुरेमें देवीलालजी महाराज विराजते थे। उनके दर्शन कर कुछ सार्वजनिक व्याख्यान दिये। फिर वहांसे गरोट पधारे। औरगरोटसे गंगधार पधारे। वहां दो व्याख्यान हुए। जनताने और ठहरनेका आग्रह किया। परन्तु; वर्षा निकट होनेके कारण आप न ठहर सके और आलोट पधारे। वहां २ व्याख्यान हुए फिर ताल पधारे। वहां आपके शिष्य छगनलाल जी ६ साधु-सहित विराजे हुए थे। वहां से आपने पृथ्वीराजजी महाराज (आपके शिष्य) को आज्ञा दी कि तुम ३ साधुओं सहित जावरे चतुर्मास करो। तथा शंकरलाल जी महाराज को यह कि तुम चतुर्मास के लिये तीन साधुओं सहित मन्दसौर जाओ। आप स्वयम् दो व्याख्यान और देकर लोद होते हुए बड़ावदे पधारे वहां भी व्याख्यान हुऐ ठाकुर श्री रघुनाथसिंहजी और डाक्टर साहब ने लाभ लिया फिर खाचरोद पधारे। बज़ाज़ ख़ाने में व्याख्यान दिया। मुंशी ज़मीर हुसैन साहब बी० ए० मजिस्ट्रेट व लाला मनोहरसिंह वक़ील हाईकोर्ट आदिने भी व्याख्यान श्रवण किया, और व्याख्यान की समाप्ति पर चरित्र नायकजी को धन्यवाद देते हुए आप के गुणों की प्रशंसा की तथा और व्याख्यान देने को आग्रह पूर्वक-प्रार्थना की। तदनुसार चरित्रनायक जी के और भी व्याख्यान हुए। फिर धाने सुतेमें ३ व्याख्यान देकर बारोदे होते हुए आप बड़ नगर पधारे। स्टेशन पर स्टेशन मास्टर गोवर्द्धनलाल जी ने चरित्रनायक जी को स्टेशन पर ही ठहरा लिये। टेलीफ़ोन

से रुनीजे के बाबू बलदेव प्रसाद् जी ने प्रणाम कहलाया, और प्रार्थना की कि मैं पंचेड़ में दर्शन कर चुका हूँ। सायंकाल को शहर में से लोग आये, और शहर के व्याख्यान के लिये प्रार्थना की। जिसे चरित्रनायक जी ने सहर्ष स्वीकार किया किंतु जल वृष्टि होने के कारण शहर में न जासके फिर वहां से गौतम पुरे पधारे। वहां १ व्याख्यान देकर देपालपुर चम्वल होते बड्डा पटेल आगरा (होल्कर स्टेट) की प्रार्थना पर आगरा पधारे। वहां १ रात ठहर कर हातोद पधारे वहां २ व्याख्यान हुए। इसके पश्चात् वहां से विहार कर इन्दौर पधारे और पीपली बाज़ार में ठहरे। किंतु, व्याख्यान के लिये वहां स्थान की संकीर्णता थी। अतः आपको राय बहादुर सर सेठ हुकमीचन्द जी की धर्मशाला में ठहराया गया। वहां व्याख्यान भी होने लगे जनाब मुंशी अज़ीज़ुर्रहमान ख़ां साहब बेरिस्टर इन्सपेक्टर जनरल पुलिस तथा जनरल भवानीसिंह जी सा० आदि उच्च राज कर्मचारियों ने भी व्याख्यान में योग दिया। उसी समय मुनि श्री मयाचन्द जी महाराज ने ३५ दिन की तपस्या की। जिस पूर (समाप्ति) का निमन्त्रण पाकर दूर २ के सज्जन आये। पूर के दिन व्याख्यान आदि का भी प्रबन्ध किया गया था। श्रीयुत् ला० जुगमंदिर लालजी जैनी एम० ए० बेरिस्टर चीफ़ जज और ला० मेम्बर होल्कर स्टेट श्रीमान् शंकरलाल जी डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट आदि भी सम्मिलित हुए थे। श्रीयुत् बाबू वंशीधर जी भार्गव (उज्जैन) ने सभा मण्डप में खड़े होकर उज्जैन तथा इन्दौर में चतुर्मास होने के उपकार का दिग्दर्शन कराया। जैन अजैन बालकों ने,

मिलकर सुमधुर स्वर में विविध विषयों पर कविता-गान किया। जिन्हें समुचित पुरस्कार दिया गया। उज्जैन से दिगम्बर सम्प्रदाय के नेता श्रीयुत सेठ सेवारामजी के सुपुत्र श्रीयुत रखबदासजी भी उत्सव में सम्मिलित हुए थे। उस दिन शहर में कसाईयों की दुकानें बन्द रहीं। लग भग ६० हलवाईयों ने विना किसी की प्रेरणा के स्वेच्छा से ही भट्टियें बन्द रक्खीं। स्टेट मिल के कन्ट्राक्टर सेठ नन्दलाल जी भंडारी ने भी मिल बन्द रखवा कर दयाभाव का परिचय दिया। २००० के लगभग भिखारियों और दीन जनों को दूध मिठाई अन्न-भोजन आदि खिलाया पिलाया गया तथा सिवनी वाले सेठ नेमीचन्द जो गणेशलालजी तथा हस्तीमल जी की ओर से वस्त्र भी बांटे गये।

एक दिन 'जीव दया' विषयक का व्याख्यान सुन कर नज़ार मुहम्द कसाई ने खड़े हो प्रगट किया कि कुरान शरीफ़ की साक्षी देकर भरी सभा में यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि जन्म भर के लिये अपना (जीव-हिंसा करने का) धंधा छोड़ता हूं। और भी कई लोगों ने अनेक त्याग किये, जिनका उल्लेख यथा समय क्षमा पन्ना में हो चुका है।

श्रीयुत् नन्दलाल जी भटेवरा को आपके उपदेश सुन २ कर संसार से इतनी विरक्ति हो गई कि वे एक दिन दीक्षा लेने को तैयार होकर चरित्र नायक जी की सेवा में आये। कुटुम्बियों की आज्ञा लेकर उनको कार्तिक व० ७ के दिन दीक्षा दी गई। उसी दिन दीक्षा के समय ख़ानदेश ज़िले के पीपल गांव वाले श्रीयुत् सूरजमल जो हंसराज जी भामड़

वहां उपस्थित थे। उन्होंने पूछा कि दीक्षा में कुल कितना व्यय होता है। उत्तर में कहा गया कि ५०० से १०००० तक। जैसी श्रद्धा और इच्छा हो। इस पर उन्होंने यह कहा कि इस दीक्षा में २०००) रु० का भाग मेरा लिया जावे। इस के पश्चात् उन्होंने तार द्वारा २४००) रु० की हुंडी मंगवाई। इस में से ४००) रु० तो दया खाते में और २०००) रु० दीक्षा खाते में दिये।

इसके पश्चात् कुछ व्याख्यान और देकर चरित्रनायक जी ने वहां से विहार किया। लोगों ने विचार किया कि आप की स्मृति में कोई रचना प्रकाशित कराई जाय। वैष्णव धर्मानुयायी कुंवर जी रणछोड़दास ने उसका व्यय भार अपने ऊपर लिया। निश्चय हुआ कि चरित्रनायक जी ने जो सीता वनवास पर व्याख्यान दिया था उसी को हिन्दी भाषा में पुस्तकाकार छपाया जाय ताकि वह महिला-समाज के लिये भी विशेष उपयोगी होसके। सब ने मिल कर चरित्रनायक जी के सुयोग्य शिष्य श्री० प्यारचन्द जी महाराज से प्रार्थना की। जिस को आपने स्वीकार किया और केवल १५ दिन की अवधि में ही उसको सरल हिन्दी भाषा में तैयार कर दिया इस प्रकार पुस्तक बड़ी शीघ्रता से छपगई।

फिर वहां से विहार कर आप पधार रहेथे कि बहु संख्यक लोग आपको विदा करने के लिये आये। चलते समय, मार्ग में पुलिस कमिश्नर साहब गुलाम मुहम्मद खां आरहे थे। आप को देखते ही वे मोटर से नीचे उतरे। नमस्कार किया। इस पर चरित्रनायक जी ने फ़रमाया कि दया पर विशेष लक्ष्य

रखना फिर टाउनहाल की ओर होकर आप तुकोगंज पधारे। वहीं सूचना मिली कि अस्पताल में श्रीयुत् हीराचन्द जी कोठारी (रेविन्यू मेम्बर होल्कर स्टेट) आपके दर्शन करना चाहते हैं तब आपने उन्हें दर्शन दिये और तुकोगञ्ज में ठहरे। इतनेही में सेठ विनोदीराम बालचन्द के सुपुत्र श्रीयुत नेमिचन्द जी साहब, भंवरलालजी साहब आपके पास आये-और अपनी कोठी माणिक-भवन में ठहरने का आग्रह किया। चरित्रनायक जीने उनका अत्याग्रह देखकर माणिक-भवन में पदार्पण किया। प्रातः काल रायबहादुर सेठ कल्याणमल जी साहब की कोठी में व्याख्यान हुआ। वह स्थान शहर से दो मील था तथापि जनता वहां बहुत आई रायबहादुर सेठ कल्याणमलजी साहब ने भी व्याख्यान सुन कर बड़ी प्रसन्नता प्रगट की। आपही के आग्रह से २ व्याख्यान और हुए। श्रीयुत् लाला जुगमंदिरलाल जी साहब जैनी, दानवीर सर सेठ हुकुमचन्द जी साहब, राय-बहादुर सेठ कस्तूर चन्दजी साहब, नेमिचन्द जी साहब, भंवर लालजी साहब, शङ्कर लालजी डिस्ट्रिक्ट व्याख्यान में सम्मि-लित हुए। सब कहने लगे कि यदि आप जैसे २-४ उपदेशक भारत में होजांय तो जैन-जाति की उन्नति अति शीघ्र हो। तीसरे व्याख्यान में श्रीमान् कल्याणमल जी साहब व दोनों छोटे बड़े सेठानी साहब भी पधारे थे। आपही ने आग्रह किया कि दो व्याख्यान और हों। तदनुसार आपने दो व्याख्यान और सुनाये। फिर नेमिचन्द जी भंवरलाल जी सेठी ने विहार नहीं करने दिया और १ व्याख्यान की स्वीकृति ली। दूसरे दिन व्याख्यान दे आहार पानी कर पधारते ही थे कि श्रीमान् कल्याणमलजी साहब व दोनों सेठानी साहब आपहुंचे। और आग्रह कर उस रोज़ भी विहार नहीं करने दिया। अस्तु। एक

व्याख्यान और दिया उस समय वहां कुशलगढ़ के श्रीमान् राव रंजीतसिंह जी के राजा साहिब भी उपदेश सुनने को आये थे। आप का व्याख्यान सुनकर बड़े प्रसन्न हुए और अपना सौभाग्य प्रगट किया। व्याख्यान के अनन्तर मध्यान्ह के समय आप फिर पधारे और धार्मिक चर्चा करते रहे। साथ ही चरित्र-नायक जी से आग्रह पूर्वक क्षेत्र-स्पर्शना की प्रार्थना भी की। और विनय की कि यदि आप पधारें तो बड़ी कृपा हो क्योंकि मेरी प्रजा को भी यह सौभाग्य प्राप्त होजाय। इस पर आपने उत्तर में जैसा अवसर होगा ऐसा फ़रमाया। तदनु चरित्र-नायक महोदय ने वहां से हातोद की ओर विहार किया। स्टेट मिल्स के पास होकर जारहे थे कि मार्ग में कमाण्डर इनचीफ़ श्री भवानीसिंह जी जनरल बग्गी में बैठे हुए जारहे थे, उत्तर गये और नमस्कार किया और पैदल बहुत दूर तक पहुचाने आये क़िले के पास की बगीची में रात्रि निवास किया। वहां सेठरा०व०कल्याणमलजी दर्शनार्थ आये। दूसरे दिन हातोद की ओर जारहे थे कि वहीं देवास श्रीसङ्घ भी आगया। और देवास पधारने के लिये बहुत आग्रह किया। जिसे चरित्रनायक जी ने स्वीकार कर देवास की ओर प्रस्थान कर दिया। श्रीमान् सरकार सर मल्हारराव बाबा साहिब * के. सी. एस. आई. देवास राज्य (२) बम्बई थे; २-१ दिन में आने की खबर थी। यथासमय आप बम्बई से आगये और चरित्रनायक जी के दर्शन किये। फिर आप २-१ बार व्याख्यान में भी पधारे। बी. एन. भाजेकर B. A. L. L. B. (कारभारी साहब) भी व्याख्यान

* सरकार देवास के विशेष परिचय के लिये देखिये परिशिष्ट प्रकरण ३

में पधारे। उन्हों ने गौरक्षा अथवा विद्या विषय पर व्याख्यान देने की प्रार्थना की। लोगों ने गोरक्षा और विद्या-प्रचार केलिये द्रव्य एकत्रित कर लिया। औरतों ने गहने उतार २ कर सहायता के लिये अर्पित कर दिये।

सरकार ने भी व्याख्यान का लाभ लिया। गौचरी (भिक्षा) के लिये भी आप महलों में लेगये। फिर २-१ व्याख्यान और दे आपने उज्जैन की ओर विहार किया। लूण मण्डी, जियाजीगंज में व्याख्यान हुए। राज मान्य ख़ान साहब लुक़मानभाई साहब तथा फ़ैज मुहम्मद पेश इमाम साहब ने खड़े होकर आपकी वक्तृत्व-शक्ति आदि की बड़ी प्रशंसा की।

वहां से उन्हेल पधारे। वहां के जागीरदार ने जो मुसलमान हैं, उपदेश सुनकर जीनप्रेस बन्द रक्खा जागीरदार साहब ने अपनी हद में किसी को जीव न मारने देने की प्रतिज्ञा की। फिर चरित्रनायक जी नागदे पधारे। वहां भूरसिंहजी की पत्नी रुक्मिणी दीक्षा के लिये उत्सुक हो रही थीं। उन्हों ने चरित्रनायक जी का केवल एक बार ही उपदेश सुनाथा। भूरसिंहजी तो आपकी वाणी से संसार को पहिले ही असार जान चुके थे, परन्तु उनकी इच्छा थी कि मेरी स्त्री भी दीक्षा लेले तो ठीक हो। इतने ही में उसको भी वैराग्य उत्पन्न होगया। भूरसिंह जी का आज्ञा पत्र होजाने पर श्रीसंघ के आग्रह से दीक्षा दे उन्हें रंगूजी सती की आम्नाय के सती धापूजी महाराज के सुपुर्द किया। वहां से विहार कर खाचारोद होते हुए रतलाम पधारे और पूज्य श्री मुन्नालाल जी महाराज के दर्शन किये। वहां से जावरे, प्रतापगढ़, जीरण, नीमच, जावद,

होते हुए गंगार पधारे वहां जातियों में पहिले दोतड़े होरही थीं सो मेल कराया। कन्यां विक्रय बन्द कराया। फिर हमीर गढ़ पधारे चरित्रनायक जी के साथ अजमेर प्रान्त के जूनियां निवासी बीसे ओसवाल दीक्षा मुमुक्षु थे। और एक वहीं के रिखबचन्द जी भण्डारी भी दीक्षा मुमुक्षु थे। इनकी दीक्षा के लिये भीलवाड़ा श्रीसंघ ने हमीरगढ़ आकर प्रार्थना की। अतः वहां से विहार कर भीलवाड़े पधारे। वहां आपके कुछ व्याख्यान, और उपयुक्त दोनों वैरागियों को विधि पूर्वक दीक्षा का कार्य प्रारम्भ हुआ।

प्रकरण ३४ वां ।

सम्वत् १९८१ सादड़ी (मारवाड़)
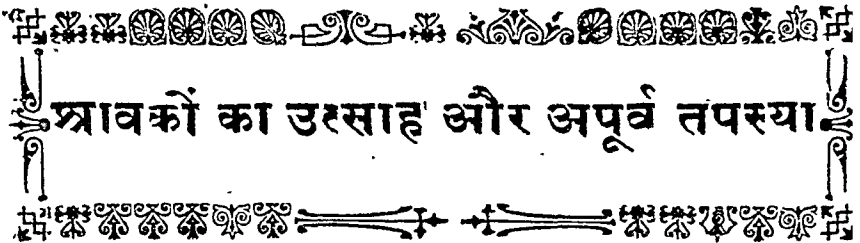
श्रावकों का उत्साह और अपूर्व तपस्या

उस समय भीलवाड़े में मन्दसौर निवासी वीसे पोरवाड़ श्रीमान् रत्नलालजी आगये। तीनों वैरागियों के विनोरे फिरने लगे। मुनि श्रीनन्दलालजी महाराज, मुनि श्री देवीलालजी महाराज व मुनि श्री खूबचन्दजी महाराज अपने शिष्यों सहित पधारे और पूज्य श्री एकलिङ्गदासजी महाराज की सम्प्रदाय के चौथमल जी महाराज भी पधारे। इस प्रकार भीलवाड़े में साधु-संगठन हुआ। इस अवसर पर महावीर स्वामी का जन्मोत्सव तथा तीन वैरागियों की दीक्षा है यह सुन कर बाहर के लगभग १२५ गांवों के क़रीब ५००० मनुष्य आये। उस समय का दृश्य बड़ा रमणीक था। यथा समय तीनों वैरागी सांसारिक वस्त्राभूषणों का त्याग कर साधु वेश में होकर मुनि-मण्डल के समीप आगये। उनके परिवार से आज्ञा लेकर मुनि-श्री नन्दलाल जी महाराज ने तीनों को दीक्षा दे, केशलोचन कर जय ध्वनि के साथ सभा विसर्जित की। महावीर स्वामी के चरित्र विषयक हमारे
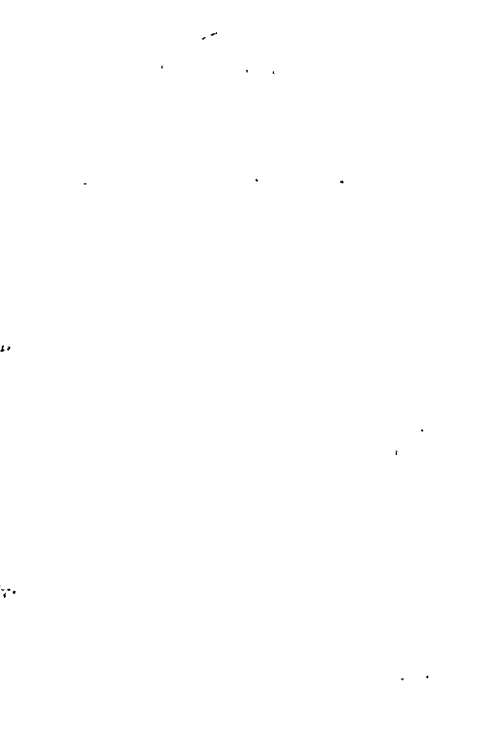
साहित्य प्रेमी दानवीर श्रीमान शेठ माणकचंदजी
लालचंदजी नेमीचंदजी भंवरलालजी
झालरा पाटन सीटी.

रित्र नायक जी ने कुछ फरमाया जिसके समर्थन में मुनि
ी देवी लाल जी महाराज भी बोले । उसी समय सादड़ी
मारवाड़) के श्री संघ ने चतुर्मास के लिये प्रार्थना की।
ससे महासभा ने स्वीकार किया कि बेशक वहां अच्छा
पकार होगा । अन्य मुनिवरों ने भी समर्थन किया तब
तुर्मास की प्रार्थना स्वीकृत हुई । वहां कई व्याख्यान हुए
जन में टेलर साहब भी आते थे । एक दिन उनकी मेम ने
रित्रनायक जी से अपने बंगले पर पधार कर दर्शन देने की
ार्थना की । तदनुसार आप वहां पधारे । लेडी टेलर ने
ाप से धर्म विषयक कई प्रकार की चर्चा की ।

फिर मुनि श्री देवीलाल जी महाराज तथा हमारे चरित्र
ायक जी ने साँगानेर की ओर विहार किया। सांगानेर में
ाहेश्वरियों का पारस्परिक वैमनस्य दूर हुआ । बनेड़े के
ाई भी वहीं आगये । उनके आग्रह से आप बनेड़े पधारे
यह राज्य उदयपुर में शाहपुरा से उत्तर पूर्व में स्थित है ।
वहां केशरिया जी के मन्दिर में ठहरे । श्रीमान् राजा अमरसिंह
जी साहब रईस बनेड़ा ने जब महाराजा श्री के व्याख्यान की
प्रशंसा सुनी तो वे भी व्याख्यान में पधारे । व्याख्यान सुन
कर उन्हों ने आपके शुभागमन को अपना सौभाग्य
मान कर उपदेश की प्रशंसा की तथा दूसरे दिन आने का
भाव प्रदर्शित किया दूसरे दिन आप फिर पधारे और तीसरे
दिन का व्याख्यान नज़र बाग में हो इसके लिये प्रार्थना की,
ताकि राज महिलाएं भी लाभ ले सकें । ऐसा ही हुआ ।
सर्व साधारण लोग भी वहां आये । राजा साहब की ओर
से दाख बादाम की प्रभावना हुई । मध्यान्ह को स्वयम् नरेश

चरित्र नायक जी के ठहरने के स्थान पर आये और धार्म्मिक विषय पर वार्तालाप करने लगे:—

नरेशः—महाराज ! क्या जैन धर्म बुद्ध धर्म की शाखा है ?

मुनि—नहीं, जैन धर्म स्वतंत्र है न कि बुद्ध धर्म की शाखा है। बौद्ध धर्म में बुद्ध ही पहिला अवतार माना गया है और वह हमारे चौवीसवें महावीर स्वामी के समकालीन हुआ है। वैसे तो जैन धर्म अनादि है। पर इस अवसर्पिणी काल में जैन धर्म के मुख्य प्रथम अवतार श्री ऋषभ देव हुए हैं। उनको हुए-करोड़ों वर्ष हो चुके। जिनका श्री मद्-भागवत् में भी कुछ उल्लेख हुआ है। इस से सिद्ध है कि जैन धर्म प्राचीन और स्वतन्त्र है। न कि बुद्ध की शाखा जैसा कि कुछ पश्चिमीय विद्वानों ने विना खोज से लिख दिया है। जिस से लोग बुद्ध की शाखा कहने लगे। पर अब उन्हें खोज से पता लगा है कि जैन धर्म बौद्ध धर्म की शाखा नहीं है। वल्कि उस से वहुत प्राचीन है। इस प्रकार कई प्रमाणों से आपने जैन धर्म की प्राचीनता सिद्ध की।

नरेश—महाराज ! जीव मारा मरता नहीं है:—

"नैनं छिंदति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
"नचैनं क्लेदयंत्यापो न शोषयति मारुतः ॥"

(श्री मद्भगवद्गीता अ० २ श्लोक २३)

तब आप हिंसा करने से क्यों रोकते हैं।

मुनि—आप कहते हैं सो तो ठीक है। बेशक जीव मारा नहीं मरता। वह अजर, अमर, अरूप है। पर स्थूल शरीर के संयोग से आत्मा दुखित होती है। क्योंकि आत्मा स्थूल शरीर को अपना मानकर उस में निवास करती है। जब उसके शरीर को कष्ट पहुंचता है तो उसके साथ ही आत्मा भी दुखित होती है। बस इसी तरह आत्मा को दुःख पहुंचाने का नाम हिंसा है। मान लीजिये एक मकान में कोई एक मनुष्य बैठा हुआ है उसको आप धक्का दे कर बाहर निकालना चाहते हैं। एक तो वह अपनी इच्छा से चला जाय, और एक यह कि उसको बलात्कार निकाला जाय। अब सोचिये कि उसको किस अवस्था में सुख होगा? इसी प्रकार सब प्राणी मात्र एकेन्द्रि से पचेन्द्रि पर्यन्त आयुष्य रूप अवधि से पहिले अपने शरीर को छुड़ाने वालेसे दुखित नहीं होंगे क्या? अतः मनुष्यमात्र का दया करना मुख्य धर्म है। महात्मा तुलसीदास जी ने कहा भी है किः—

दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान।
तुलसी दया न छांडिये, जब लग घट में प्रान।

नरेश—महाराज! पृथ्वी, वायु, वनस्पति में भी जीव है तो सांसारिक अवस्था में रह कर उनकी रक्षा कैसे की जाय।

मुनि—हां, सांसारिक अवस्था में बिलकुल दया होना बहुत कठिन है। परन्तु यथा साध्य जितनी दया हो सके उतनी ही मनुष्य को करनी चाहिये। बिना प्रयोजन-अकारण एकेन्द्रि जीवों को सताना पाप है।

नरेश—तो महाराज, आपके द्वारा बिल्कुल दया होती है।

मुनि—ध्यान तो यही रखते हैं कि हमारे द्वारा जीव हिंसा न हो। इसी से आपने देखा होगा कि हम लोगों में बोलने चलने फिरने आदि प्रत्येक अवस्था में पूरा अहतियात रखा जाता है। कोई व्यक्ति हम से कहीं आने जाने की आज्ञा मांगे या सम्मति ले तो हम उत्तर में 'दया पालो' ऐसा कहते हैं। इसका अभिप्राय यही है कि हमारे निमित्त से कोई कार्य ऐसा न हो जिससे हिंसा की संभावना हो। कच्चा पानी भी हम इसी लिये नहीं पीते हैं क्योंकि पानी की एक बूंद में ही असंख्य त्रस जीव होते हैं। पहिले तो सम्भव है हमारी ऐसी धारणा पर लोगों को विश्वास न हुआ हो। किंतु, अब तो विज्ञान प्रत्येक बात को स्पष्ट कर रहा है। अभी हाल ही में सिद्ध पदार्थ विज्ञान नामक पुस्तक इलाहाबाद प्रेस से प्रकाशित हुई है जिस में सा० ने सिद्ध किया है कि पानी की एक बूंद में सूक्ष्म यन्त्र द्वारा ३६४५२ जीवाणु चलते फिरते देखे गये हैं। उस यन्त्र का चित्र देखियेः—

हम लोग छाछ करने अथवा स्नान के निमित्त जो गर्मजल किया जाता है उसे, अथवा दाख, पिस्ता, चांवल आदि का धोवन (जल) लेते हैं। चाहै जितनी ठण्ड क्यों न पड़े परन्तु तीन वस्त्र जो हमने ओढ़ रखे हैं इससे अधिक नहीं रख सकते और न ओढ़ सकते। गृहस्थ से भी नहीं मांग सकते और न अग्नि द्वारा ही शीत निवारण कर सकते हैं। हम नाई से बाल नहीं बनवाते। अपने

हाथों से घास की तरह उखाड़ डालते हैं। रेल, मोटर बग्घी, हाथी घोड़े आदि किसी भी प्रकार की सवारी नहीं करते। पैदल ही शहर और गावों में घूम २ कर उपदेश देते फिरते हैं। बोझा उठाने को साथ में —दमी नहीं रखते। गृहस्थ से हाथ पांव नहीं दबवाते ᐧ, हुंडी अशर्फी, रुपये, पैसे, कार्ड लिफ़ाफ़े अर्थात् त धातुओं से बनी हुई कोई भी वस्तु अपने पास ीं रखते न अन्य किसी से अपने लिये रखवाते हैं। यहां ᐧ कि कपड़ा सीने के लिये सुई की आवश्यकता हो तो ःस्थ से लाते हैं। यदि भूल से वह एक रात भी पास जाती है तो एक उपवास का दण्ड लेना पड़ता है। त्र सब काष्ठ के रहते हैं। क्योंकि तांबे पीतल कांसी पात्र में नहीं खाते, और न उन्हें पास रखते हैं। रात अन्नजल ग्रहण नहीं करते। दिन में भी एक ही घर भोजन न लाकर अनेक घरों से थोड़ा २ लाते हैं। इसी लिये इसको गोचरी कहते हैं। हमारे लिये कैसा भी अच्छे से अच्छा भोजन क्यों न बनाया गया हो उसे हम नहीं लेते।

नरेश—महाराज तब आप कैसा भोजन करते हैं।

मुनि—जो कुछ गृहस्थी के निमित्त बनाया गया हो उस में से थोड़ा २ लेते हैं। हमारे लिये क्रय विक्रय करके भोजन दे तो उसे हम अंगीकार नहीं करते। गर्भवती स्त्री के हाथ से भोजन नहीं लेते। क्योंकि उसके उठने बैठने, चलने फिरने में कष्ट हो। किवाड़ खोल कर भोजन दे

अथवा कच्चा जल, अग्नि, वनस्पति, नमक, बीज, फूल आदि का संगठन कर भोजन दे तो उसे भी हम नहीं लेते। ककड़ी, भुट्टा, खरबूजे, जामफल, सीताफल नारंगी दाड़िम आदि फलों को नहीं खाते क्योंकि इनमें जीव हैं। बंगाली विज्ञान वेत्ता डाक्टर जगदीशचन्द्र बोसने वनस्पती आदि में प्रत्यक्ष जीव बताये हैं।

हम गांजा, भांग, चण्डू, चरस, सिगरेट, बीड़ी तम्बाकू और अफ़ीम आदि किसी भी नशीली वस्तु का सेवन नहीं करते। किसी पुष्प की गन्ध नहीं लेते। हार पुष्प माला कभी नहीं पहिनते। इत्र तेलादि का लेप नहीं करते। हाथ में मोजे व पांव में बूट शूट इत्यादि कुछ नहीं पहिनते। धूप से बचने को छाता नहीं रखते। जाजम, कुर्सी, गद्दी आदि पर नहीं बैठते।

इस प्रकार हमारे चरित्र नायक महोदय के मुखारविन्द से स्थानक वासी साधुओं का आचरण सुन कर राजा साहब चकित हो बोले कि आपकी तपस्या बड़ी कठिन है। इस प्रकार वार्तालाप कर आहार पानी का समय होजाने पर दूसरे दिन आने का वचन दे पधार गये। दूसरे दिन प्रातः काल व्याख्यान हुआ। राजा साहब की मां साहब की ओर से बादाम खारकों की प्रभावना हुई।

(दूसरा दिन)

नरेश—महाराज! आपके जैनागम प्राचीन समय के लिखे हुए होंगे।

मुनि—हां, जी, लगभग १००० वर्ष पहिले के। उस समय के ग्रन्थ प्रायः कहीं २ मिलते हैं। हमारे पास एक अन्तकृतजी नामक शास्त्र है जो मूल सम्वत् १५०० के द्वितीय श्रावण में लिखा हुआ है। (उसे आपने राजा साहब को दिखाया)

नरेश—महाराज ! आपके माननीय आगमों में कौनसा आगम बड़ा है?

मुनि—भगवती जी और पन्नवणादि सूत्र (देखिये)

नरेश—श्रीमहावीर स्वामी की जन्म भूमि कहां थी और उन्हों ने कब दीक्षा ली तथा कैसे तपस्या की।

मुनि—इस पर आपने महावीर स्वामी का जीवन, जन्मभूमि आदि बतलाई और तपस्या के लिये कहा कि उन्हों ने ५ महीने २५ दिन की तपस्या सब तपों से उत्कृष्ट की थी। जिसका पारण धनावह सेठ के घर राजाकी कन्या चन्दनबाला के द्वारा हुआ।

नरेश—महाराज ! चन्दन बाला राजा की कन्यां होकर सेठ के घर क्यों ?

मुनि—सुनिये मैं संक्षेप में आपको उसका वृत्तांत सुनाता हूं। चम्पापुरी का राजा महाराज दधिवाहन था। उसकी पतिव्रता स्त्री श्रीमती धारिणी की कोख से एक कन्या उत्पन्न हुई जिसका नाम वसुमती था।

धर्मशाली माता पिता की सन्तान प्रायः धर्मात्मा ही निकला करती है क्योंकि ऐसे धर्मात्माओं के यहां ही योगभ्रष्ट आत्माएं अपने अपूर्ण योग को पूर्ण करने के लिये अवतार लिया करती हैं। वसुमती की आत्मा पूर्वजन्म में एक पदच्युत जीव था। इस जन्म में वह अपने घाती कर्म्मों को नाश करके मोक्ष पद को पाने के लिये आई थी।

वसुमती का बाल्य काल शास्त्राध्ययन में बीता। धर्म्म शास्त्र के ज्ञान के साथ वह जप, तप, व्रतादि धर्म साधन क्रियाओं में भी बड़ी पक्की थी। अपनी यौवनावस्था में वह संसार में विख्यात होगई। कारण कि एक तो वह अतिरूपवती थी दूसरे यौवन काल, तीसरे ज्ञान की अन्तर ज्योति ने उसके सौन्दर्य को और भी बढ़ा दिया था।

संसार की कैसी विचित्र गति है। सृष्टि पदार्थों की उन्नति में अनेक बाधाएं आपड़ती हैं उनको अपने अभीष्ट-साधन में तरह २ की विपत्तियों का सामना करना पड़ता है। परन्तु धीर पुरुष ही धैर्य्य को न छोड़ते हुए दुःख सागर से पार जासकते हैं:—"धीरास्तरन्ति विपदम् न तु दीनचित्तः"।

वसुमती जैसी कि लोक-प्रिय थी वैसे ही आपत्तियों का पहाड़ उस पर टूट पड़ा। परन्तु, धन्य है वह सती कि उसने धैर्य को न छोड़ा और संसार में हमारे लिये एक दृष्टान्त छोड़ गई।

राजा दधिवाहन का काशांबी नगरी के राजा शतानिक से किसी कारण वैमनस्य होगया। राजा शतानिक ने उसके साथ लड़ने का संकल्प किया और बहुत बड़ी सेना एकत्रित की।

एक दिन अवसर पाकर चुपके से चम्पा नगरी पर चढ़ाई करदी और नगर को घेर लिया। राजा दधिवाहन ने अपनी प्रजा के रक्षा के लिये बहुतेरे उपाय किये परन्तु सोये हुए शेर को हर एक मार सकता है। राजा शतानिक की जय हुई और दधिवाहन को नगर छोड़ कर भाग जाना पड़ा। इस प्रकार राजा शतानिक ने उसके नगर में प्रवेश किया, राज्य पर कब्जा किया और प्रजा से अपनी आज्ञा का पालन कराने लगा। इसी प्रसङ्ग में राजा शतानिक ने दधिवाहन की रानी और कन्या वसुमती को एक सुभट के साथ कर दिया जो उन दोनों को अपने साथ ले चला। मार्ग में महारानी के अनुपम सौन्दर्य्य को देख कर वह मोहित होगया और उससे प्रतिदान मांगा। परन्तु पतिव्रता धारिणी ने उसका तिरस्कार किया। कारण

> वरं शृङ्गोत्सङ्गाद्गुरुशिखरिणः क्वापि विपमे।
> पतित्वायं कायः कठिनदृपदन्तेविगलितः ,,
> वरं न्यस्तो हस्तः फणिपतिमुखे तीक्ष्ण दशने।
> वरं वह्नौ पातस्तदपिन कृतः शील विलयः,,

"बड़े ऊंचे पर्वत की चोटी पर से गिरे हुए पत्थर से शरीर चूरा २ भले ही हो जाय, तीक्ष्ण दांतों वाले सर्प के मुख में हाथ भले ही दे दिया जाय, अग्नि में हाथ भले ही जल जावे किंतु शील का भंग कदापि न होगा यह पतिव्रता स्त्रियों का सिद्धांत है।

अपने शील की रक्षा करने के लिए धारिणी ने सुभट को बहुत समझाया क्रोधवश हो कई बातें भी कहीं परन्तु कामांध सुभट न माना और अयोग्य व्यवहार करने के निमित्त रानी की ओर हाथ बढ़ाया महासती रानी धारिणी ने किसी प्रकार भी अपने शील का बचाव न देखकर मृत्युदेव को अपनी सहायतार्थ बुलाया और आत्महत्या करके अपने शील को बचाया क्योंकि सतियों की यह रीति चली आई है कि वे अपने शील के बचाने के समय अपने प्राणों की परवाह नहीं करतीं। यह घटना देखकर सुभट हाथ मलता रह गया और मातृहीन वसुमती बहुत दुखी हुई। इस समय मातृ-स्नेह और वत्सलता के वश हो वसुमती बड़े करुण स्वर में रुदन करने लगी। प्रत्येक हृदय भेदक रुदन ने और शोककारक घटना ने सुभट के पाषाण हृदय को भी मोम बना दिया अब वह सुभट वसुमती को धैर्य देने और कहने लगा—"वसुमती ! क्यों व्याकुल हो रही है। शोक छोड़ दे मैं तेरे साथ पुत्री और बहिन का सा बर्ताव करूंगा।" सुभट के इन वाक्यों को सुनकर और ज्ञानदृष्टि से शोक को त्याग वसूमती सुभट के साथ चल पड़ी। सुभट ने रानी अर्थात् वसुमती की माता के आभूषण उतार लिये और उसकी मृतदेह को रथ में से नीचे गिरा दिया और फिर रथ हांक कर वसुमती को अपने घर ले आया।

एक सुन्दर कन्या के साथ सुभट को आता हुआ देखकर उसकी स्त्री उस पर अति क्रुद्ध हो गई और यद्वा तद्वा बोलना आरम्भ किया। जिसको सुनकर "वसुमती को बाज़ार में जाकर बेच देना चाहिये।" के खोटे विचार ने उसके हृदय में प्रवेश किया वह उसे बाजार में ले गया और पुकार २ कर

कहने लगा "नगरवासी जनो! एक सुन्दरी दासी बिकती है। जिसको खरीदना हो आ जावे।" इस आवाज़ को सुनकर बहुत से मनुष्य आ जमा हुये। उनमें एक वारांगना (वेश्या) भी थी जिसने ५०० सोने की मुहरें सुभट को देकर वसुमती को ख़रीद लिया और अपने घर ले गई।

अब वसुमती के दुःखों का पारावार न रहा मनुष्यमात्र पर दुःख आते हैं परन्तु उनमें जो धैर्य को नहीं छोड़ता वही दुःखों के दुस्तर समुद्र को सुगमतया पार कर जाता है। वसुमती ने धैर्य को न छोड़ा। पिता का राज्य गया, माता दुःख पाती हुई उसके सामने आत्महत्या कर गई इस असह्य वियोग को उसने सहन किया। दुष्टमति दुर्जन सुभट के साथ बाज़ार में आना पड़ा, यह भी उसने जैसे तैसे सहा परन्तु एक नीच कोटि की अधम स्त्री के घर में जो कि उसको कारागार से कुछ कम न था शील और धर्म की रक्षा कैसे होगी इस महानिरयपात में जीवन के दिन किस तरह बीतेंगे इस प्रकार के विचारों से उस का धैर्य टूट गया। वारांगना उसको दासी के तौर पर हाथ पकड़ कर अपने घर ले जा रही थी कि वसुमती मूर्छा खाकर गिर पड़ी हा! राजसुखों को भोगने वाला और बड़े २ योगियों के समान शास्त्रों में रमण करने वाला शरीर ज़मीन पर पड़ा है परन्तु उस वारांगना ने कोई परवाह न की।

कर्म की गति गहन है संसार के वातावरण में इस प्रकार की अदृश्य सत्ताएं विचरती हैं जो कि निस्सहायोंकी सहायता करती हैं वारांगना के घर की नरक यातना के ख़याल से वसुमती गिरी ही थी कि तुरन्त उस वेश्या के मुख की भूषण रूप

नासिकाको कोई अदृश्य सत्ता छेदन कर गई। नासिका छेदन से उपहास को प्राप्त हुई। वेश्या अपना द्रव्य वापिस ले वसुमती को बिना ख़रीदे वहां से चली गई। शील रक्षक देव ने वन्दर जैसा रूप बनाकर वेश्या को लखूर डाला। वेश्या ने विचारा कि अभी से यह हाल है तो आगे चलकर क्या होगा। अतः वसुमती को वहीं छोड़गई।

फिर वह सुभट उसको बेचने के लिये दूसरे बाज़ार में गया। वहां एक धनावह नाम बड़ा धनाढ्य बनिया आगया। उसने पूरा दाम देकर वसुमती को ख़रीद लिया। जल से पूर्ण वादलों में पूर्णिमा का चन्द्र छिप गया परन्तु उसके स्थान में वसुमती का चन्द्र मुख, धर्म शील के प्रभाव से प्रकाशित होरहा था। उसके शान्त मुख से धनावह को बहुत आनन्द मिलता था। वसुमती को दुःखी देखकर धनावह ने कहा "पुत्री! तू डर नहीं। हमारे घर में धर्म का पालन होता है और साधु साध्वियों की सेवा शुश्रुषा भी यथाशक्ति होती है। तुम जिस तरह से चाहो धर्म करना। हम से किसी प्रकार का भय न करो। हम तुम्हें अपनी पुत्री की तरह रखें। गे।" उस श्रीमन्त के अमृतमय वचनों को सुनकर वसुमती के हृदय को संतोष हुआ और वह उसके साथ चल पड़ी। धनावह सेठ ने घर आकर अपनी स्त्री से कहा "यह कोई अच्छे कुल की कन्या है। मैं इसे पुत्री समझ कर लाया हूँ। इसको तू अच्छी तरह रखना। आज से हम इसको चन्दन-बाला के नाम से पुकारा करेंगे।" सेठ के इस वचन को सुन कर उसकी स्त्री जिसका नाम मूला था उससे दासी का काम कराने लगी। परन्तु, स्त्री ज़ाति अज्ञानता के क़ारण सहज में

मोहली जाती हैं। दूसरी तरफ़ अपने पति की वसुमती से निर्दोष प्रीति को वह देख न सकती थी। जिसके प्रमाण में चन्दन वाला के अनुपम सौंदर्य्य को देखकर उसके मन में शङ्का उत्पन्न हुई कि शायद इस स्त्री के रूप पर मोहित होकर मेरा पति इसको मोल ले आया। मूला उस समय तो कुछ न बोली और बदला लेने के लिए किसी अवसर की प्रतीक्षा करने लगी।

सेठ धनावह धार्मिक-संस्कार और धर्मशास्त्र का वेत्ता था और चन्दन वाला एक उत्तम श्राविका थी। इसीलिये वे परस्पर प्रेम भाव रखते थे और एक दूसरे का मान करते थे। चन्द्रमा के समान शीतल सुश्राविका चन्दनबाला धनावह को पिता के तुल्य मानती थी और धनावह भी वात्सल्य भाव रखता था। चन्दनवाला को धर्माराधन के लिए बहुत अवकाश मिलता था जिसका वह पूरा २ उपयोग करती थी। सर्व प्रकार के रोगों को छोड़ कर शांत और पवित्र जीवन विताने और कर्मों को क्षय करके केवल ज्ञान प्राप्ति के सुसमय की राह देखने लगी परन्तु जिनका कर्म फल क्षय नहीं हुआ उनको अपने कर्मों के अनुकूल भोग भोगने ही पड़ते हैं।

एक दिन सेठ बाहर से घर आया। उस समय मूला कार्य वशात् बाहर गई हुई थी और चन्दन वाला धर्माराधन में रुकी हुई थी उसने अपने धर्म के पिता को घर आया जान उठकर योग्य सत्कार किया और बैठने के लिये आसन दिया। धनावह सेठ अपनी पुत्री के समान उस पर प्यार करने लगा इतने में मूला बाहर से आ पहुंची। उसने इन पिता पुत्री के पवित्र प्रेम को देख लिया जिस से उसके दिल में ठहरी हुई

शङ्का के विषय में उसको निश्चय होगया और वह विचार
लगी कि ' सेठ इस युवती पर आसक्त है और मैं बूढ़ी होगई
इसीसे शायद यह मुझे मारकर इसके साथ व्याह करना चाहत
है मैं यह कदापि न होने दूँगी" यह सोच कर उसने चन्द
वाला को नाश करने की दिल में ठान ली। एक दिन धनाव
सेठ अपनी दूकान के काम में लगे रहने से घर न आया
मूला ने अपने अभीष्ट साधन के लिये इसे अच्छा समय जा
कर एक नाई को बुलाया और चन्दन बाला के केश जो ि
इसके सौंदर्य्य के लिये भूषण रूप थे मुंडवा दिए और उ
बाँध कर घर के अंदर एक कोठरी में डाल दिया। इस मह
यातना से भी धीर हृदय चन्दन वाला को कुछ दुःख न हुआ
क्योंकि यह श्लोक उसको हर प्रकार आश्वासन दे जाता था:

विपत्तौ किं विषादेन, सम्पत्तौ वा हर्षेण किम्।
भवितव्यं भवत्येव कर्मणा मीदृशीगतिः ॥

"विपत्ति में खेद किस बात का और सम्पत्ति आने पर
खुशी काहे की ? क्योंकि कर्म्मों की तो ऐसी ही गति है
जैसा होना होगा होकर ही रहेगा"।

इस प्रकार विचार करती हुई अपने एकान्त समय का
सदुपयोग करने के लिये जिनेश्वर प्रभु की भक्ति में मग्न हो
नवकार मन्त्र का जाप करने लगी।

कार्य्य से निपट कर धनावह सेठ अपने घर आया और
चन्दन वाला को न देख कर अपनी स्त्री से पूछने लगा।
परन्तु उसने "कहीं यहीं होगी" यह कह कर उसे टाल दिया

दूसरे दिन भी इसी तरह हुआ। परन्तु तीसरे दिन उसे उस उत्तर से शान्ति न मिली और वह व्याकुल हो गया। अपनी स्त्री को खूब धमकाया तब कहने लगी कि उसका सङ्गी साथी आया होगा, जो उसे ले गया होगा मुझे तो कोई खबर नहीं। इतना द्रव्य खर्च कर मैं ने लड़की खरीदी थी अब व्यय भी गया और लड़की भी गई जिसके रञ्ज में मैं खुद मर रही हूँ। पर शोक तो यह है कि साथ ही आप भी मुझ पर निकम्मा क्रोध करने लग गये। यह कह कर मूला तो चुप हो गई।

धनावह सेठ ने उस समय भोजन नहीं किया। और "जब तक चन्दन बाला का मुख न देखूंगा अन्न नहीं पाऊंगा" यह प्रतिज्ञा कर अनशन व्रत धारण कर शोकातुर हो बैठ गया इतने में एक वृद्ध पड़ोसिन ने आकर सेठसे कहा कि "तुम घर में क्या तलाश करते हो तुम्हारी स्त्री ने जिसका उसके ऊपर पहिले ही से द्वेष था उसे बांध कर छिपा रक्खा है" पड़ोसिन के वाक्य सुनकर धनावह व्याकुल हो गया। फिर उसने घर के बड़े खंडों के ताले खोल २ कर तलाश करनी शुरू की। वह उस कोठरी में भी पहुंच गया जहां कि चन्दन बाला नीचा सिर किये विचार मग्न बैठी थी। अपनी प्राणप्यारी पुत्री की यह दुर्दशा देख उससे रहा न गया और तत्क्षण नीचे लाया। चन्दन बाला पञ्च परमेष्ठी नमस्कार रूप नवकार मन्त्र का जाप जपती ध्यानस्थ थी। धनावह ने उसे सचेत किया और उसकी इस दशा का कारण पूछा। चन्दन बाला को तीन दिन का उपवास था और शरीर क्षीण हो रहा था इससे साफ २ न बोल सकी परन्तु मस्तक हाथ रख उसने

संकेत से कहा "कर्मों की माया विपाद के समुद्र में डूबा हुआ धनावह उसको बाहर लाया परन्तु दुष्टा मूला सारे द्वार बन्द करके बाहर चली गई थी। धनावह सीढ़ियों के नीचे उतर कर आंगनमें आया और एक वृद्ध दासी से खाना लानेके लिये कहा दासीने कहा "इस समय और कुछ नहीं मिल सकता पर हाँ कुछ उड़द बाकलियां तैयार हैं यदि आज्ञा दें तो लाऊं" धनावह ने कहा "वही ले आ" वह एक बर्तन में कुछ पकाये हुए उड़द ले आई। धनावह ने उन्हें चन्दन बाला को खाने के लिये दिया। मगर आज अष्टमी का पारण था और पारने के लिये उस ने इस भोजन को स्वीकार किया। परन्तु उस भोजन को उपयोग में लाने से पहिले उसने यह भावना की कि "इस समय यदि कोई मुनि महाराज आवें तो उनका सत्कार कर अपने व्रत का पालन करूं"।

न वै स्वयम् तदश्नीयादतिथिं यन्न भोजयेत्।
धन्यं यशस्यमायुष्यं स्वर्ग्यम् चातिथि भोजनम्॥

धर्मशास्त्र की यह देशना चन्दन बाला के हृदय में घर कर चुकी थी इसी लिये उसके हृदय में ऐसी भावनाओं का उदय होता था।

इसी समय एक विचित्र घटना हुई। श्रीमान् महावीर स्वामी यहां भिक्षार्थ आगये। उन्होंने यह प्रतिज्ञा की हुई थी कि आज उस स्त्री से आहार लेंगे जो राजपुत्री हो पर दासी-पद को प्राप्त हुई हो, सिर मुण्डा हो, पांवों में बन्धन पड़े हों और आंख में आंसू हों और भिक्षा काल व्यतीत होने के

श्रीमान् राज्यमान्य खान साहिब सेठ लुकमानभाई उज्जैन

परिचय–प्रकरण ३२

पीछे यदि उड़द की बाकलियां मिले तो ही आहार लेंगे। यह भाव करके प्रभु कौशाम्बी नगरी के मन्त्री की सुश्राविका धर्मशालिनी पत्नी नन्दा के यहां भिक्षार्थ आये। परन्तु, वहां अपने अभियोग के सफल होने की संभावना न थी। इस लिये आहार स्वीकार न किया। नन्दा उदास हुई। कौशाम्बी के राजा की महारानी मृगावती के पास गई और प्रभु के आने और आहार अस्वीकार करने का उसने वृतान्त कहा। फिर मृगावती ने प्रभु को आहार के लिये निमंत्रण किया परन्तु वहां भी निज भाव की सानुकूलता न देख कर आहार स्वीकार न किया। महारानी मृगावती और नन्दा प्रभु से आहार अस्वीकृति का कारण पूंछने लगी तो प्रभु ने उनकी चिन्ता को दूर किया।

इस के पश्चात् प्रभु फिरते २ धनावह सेठ के यहां जा पहुंचे। साक्षात् भगवान् को अतिथिपने आया देख कर चन्दनबाला अति प्रसन्न हुई और आहार के लिये प्रार्थना करने लगी। यहां और तो सब बातें थीं लेकिन एक शर्त की कमी थी। वह क्या चन्दन बाला के नेत्रों से अश्रुपात नहीं होता था। अतः प्रभु ने भोजन लेना स्वीकार न किया और वापिस जाने लगे। अपने घर में आये अतिथि को नहीं २ भगवान् को आहार न पाकर लौटते देख चन्दन बाला से रहा न गया। उसकी आंखें जल से डबडबा भर गईं और वह रोने लग गई। फिर क्या था? कमी तो इसी बात की थी और तो सब शर्तें पहिले ही सहानुकूल थीं। भगवान् अपने भाव को सर्व विधिपूर्ण होते देख लौट पड़े और आहार स्वीकार कर लिया। यह देख चन्दन बाला के आनन्द का पारा बार न रहा

इस समय आकाश मंडल में देवताओं ने दुंदुभी बजाई और स्वर्ण वृष्टि की। सेठ धनावह के घर में उत्सवादि होने लगे। राजा शतानिक मन्त्री और परिवार के साथ वहां आया। सब ने भगवान् को वन्दना की इसके अनन्तर ५ दिन कम छः मास के बाद पारणा करके भगवान् ने वहां से विहार कर दिया राजा शतानिक ने चन्दन बाला को तमाम स्वर्ण की स्वामिनी बना दिया जो कि देवताओं ने बरसाया था और फिर अपने घर आया। इसके पश्चात् चन्दन बाला ने महावीर स्वामी से जब उन्हें केवल ज्ञान प्राप्त हुआ, दीक्षा ली और साध्वी हो अपने जीवन को सार्थक किया।

आप में से राजपूत राजा भी पहिले जब ज्ञानी होजाते थे तो इस असार संसार को दुःख और अशान्ति का केन्द्र जान कर त्याग देते थे और वैराग्य ग्रहण कर लेते थे। हमारे यहां ऐसे कई नरेशों का वर्णन है। उसमें से आप को अनाथी मुनि का वर्णन सुनाता हूँ।

राज-ग्रही नगरी के श्रेणिक राजा के एक मण्डित कुक्षि-नामक बगीचा था। नये २ वृक्ष और लता-मण्डप की सुव्य-वस्था से उसकी शोभा बड़ी अपूर्व दिखाई देती थी। एक समय श्रेणिक राजा अपनी फौज के साथ मण्डित कुक्षि बगीचे की तरफ़ गये। उसमें प्रवेश करते ही राजा की दृष्टि एक वृक्ष पर गई; जो वहां से कुछ दूर था। उसके नीचे उस को एक तेजस्वी आकृति दिखाई दी। यह कौन है ? यह जानने को वह उस ओर गया। जैसे २ आगे चलता गया वैसे २ राजा के मन में सन्देह की मात्रा बढ़ती गई। पहिले,

उसके मन में यह कल्पना हुई थी कि यह दिव्य आकृति किसी वस्तु की है, परन्तु निकट जाने पर मालूम हुआ कि यह तो सजीव मनुष्य है, जिसका सौन्दर्य्य अलौकिक है। अहा! इसका कैसा आकर्षक मुख-मण्डल है, शरीर की दीप्ति कैसी उज्ज्वल है, और नेत्र कैसे मनोहर हैं। इसके अर्द्ध-चन्द्राकार कपोल ऐसे हैं जो देखने वाले को विस्मित करदें। उसकी आकृति ही सुन्दर हो, सो नहीं, बल्कि "आकृति गुणान् कथयति" के अनुसार गुण भी इस में ऐसे ही दिखाई देते हैं। इसकी शान्त मूर्ति भी बड़ी उत्कृष्ट प्रतीत होती है। परन्तु, यह व्यक्ति है कौन? शरीर पर पूर्ण यौवन झलक रहा है, किन्तु इसके पास सांसारिक सुख भोग की कोई भी सामग्री क्यों नहीं है? इस के पास तो वस्त्राभूषण, नौकर चाकर वाहन आदि कुछ भी नहीं दिखाई देता। क्या इसकी ऐसी ही स्थिति होगी? किन्तु यह तो सम्भव नहीं। इस के मस्तक के तेज के अनुसार तो यह कोई भाग्यशाली पुरुष होना चाहिये। और इस दशा में इसका सम्पत्तिशाली होना भी निर्विवाद है। तो क्या उस सम्पत्ति का इसने त्याग किया है? यदि किया है तो किस लिये। ऐसे एक के बाद एक अनेक प्रश्न राजा के मन में उत्पन्न होते गये। उनका स्पष्टीकरण करने वाला उस समय उसके पास कोई मनुष्य न था। इस कारण वह स्वयम् ही अपने वाहन से उतर कर उस दिव्याकृति धारी पुरुष के पास आया। त्यागी पुरुषों का अभिवादन करने की प्रणाली को जानने वाले राजा ने दोनों हाथ जोड़ कर मस्तक नमाया, और

शिष्टाचार करके उस त्यागी युवक का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने को उसके साथ वाग्-व्यापार शुरू किया। वह भव्याकृति धारी पुरुष और कोई न था। एक पञ्च महाव्रत धारी मुनि थे। वृक्ष के नीचे एक आसन लगा कर शान्ति पूर्वक—समाधि दशा में लीन होरहे थे। राजा के प्रश्नारम्भ करने पर मुनि ने भी अपना ध्यान उस ओर आकर्षित करके बातचीत करना शुरू किया। राजा ने पूछा कि आपने इस तरुणावस्था में गृहस्थाश्रम का क्यों त्याग किया? क्या आप पर कोई दुःख अथवा विपत्ति—विशेष आगई थी या किसी से लड़ाई झगड़ा होगया था। मुनि ने कहा कि राजन्! न तो मेरा किसी के साथ लड़ाई झगड़ा हुआ—और न कोई दुःख या आपत्ति ही आई। गृहस्थाश्रम परित्याग करने का केवल एक ही कारण है, और वह है मेरी अनाथता। अर्थात् मेरा कोई सहायक, स्वामी या त्राण देने वाला न था। इसी से मैंने गृहस्थाश्रम में रहना उचित नहीं समझा।

श्रेणिकः—क्या तुम अनाथ थे? तुम्हारी रक्षा करने वाला तुम्हें कोई मनुष्य नहीं मिला।

मुनि—हां, मैं अनाथ था।

श्रेणिक—यह बात मुझे तो सन्देह भरी जान पड़ती है। तुम्हारा ऐसा सौन्दर्य्य, ऐसा तेज और फिर भी तुम्हें आश्रय देने वाला कोई न मिले इस को मैं नहीं मान सकता। फिर भी सम्भव है, कदाचित तुम सत्य कहते हो तो क्या तुम्हें किसी आश्रय दाता अथवा रक्षक की आवश्यकता है? वैसा कोई व्यक्ति तुम्हें मिल जाय तो क्या तुम उसे स्वीकार करोगे?

मुनि—क्यों नहीं, अवश्य।

श्रेणिक—तब तो बहुत अच्छा, चलो मेरे साथ। मुझे तुम पर बड़ी दया आती है—मैं तुम्हें बड़े प्रेम से देखता हूं। मैं तुम्हें अपने साथ ही रक्खूंगा। तुम्हारी रक्षा करने में—तुम्हारी इच्छा को पूर्ण करने में मैं किसी प्रकार की त्रुटि न होने दूंगा। तुम्हारे लिये रहने को सुन्दर महल दूँगा, और रुपये पैसे आदि जिस वस्तु की भी तुम्हें—आवश्यकता होगी मैं पूर्ण करूंगा। फिर क्या है? चलो, करो संसार की सैर।

मुनि—राजन्! तू मुझे तो फिर आमन्त्रित करना। पहिले तू अपना तो विचार कर।

श्रेणिक—इसमें क्या विचार करना है। मैं पूरी तरह से सामर्थ्यवान और ऋद्धिशाली हूं। चाहे जिस दुश्मन का मुक़ाबला करने को मेरे पास काफ़ी बल और पराक्रम है। यदि कोई तुम्हारा दुश्मन होगा तो उससे तुमको बचाने की मेरे पास पूरी शक्ति है।

मुनि—राजन्! ठहर, ठहर। तू बोलने में बहुत आगे बढ़ा जा-रहा है। विचारों की सीमा का उल्लंघन कर रहा है। अभिमान के आवेश में मनुष्य अपनी सुध, बुध भूल जाता है। मुझे अपने दुश्मन से बचाने की तुझ में—शक्ति नहीं है यह तो निर्विवाद है। परन्तु, अपने दुश्मन से ख़ुद को बचाने की शक्ति का भी तुझ में अभाव है। मेरे और तेरे दोनों के दुश्मन के सामने तू दीन है—रङ्क है। इस कारण

मैं ज़ोर देकर कहता हूँ कि जिस प्रकार मैं अनाथ था, उसी प्रकार तू स्वयम् भी अनाथ है। तू स्वयम् अनाथ होकर दूसरे का नाथ किस तरह होसकेगा।

श्रेणिक—मेरे पास कितनी फ़ौज है-कैसा बल है-कैसी ख्याति है। इसकी तुम्हें खबर नहीं है। इसी से मुझ पर अनाथता का झूंठा आरोप लगा रहे हो। महाराज ! सुनो, मेरे पास तैंतीस हज़ार हाथी, तैंतीस हज़ार घोड़े, इतने ही रथ और पैदल फ़ौज है। इसके सिवाय मेरे कोष में अनन्त सम्पत्ति है। मैं चाहूं उस वस्तु को पा सकता हूँ। सुखोपभोग की कोई वस्तु मेरे लिये अलभ्य नहीं है। चाहे जैसा दुश्मन हो किन्तु, मेरे साथ युद्ध करने का किसी को साहस नहीं होसकता। इस कारण तुम ज़रा विचार कर बोलो बिना विचारे किसी को अनाथ कह देना निरी अज्ञता और अविवेक है।

मुनि—राजन् ! मैं अपनी अज्ञता प्रगट करता हूँ या तू अपनी मूर्खता ज़ाहिर करता है। इस बात को तो कोई तीसरा मध्यस्थ व्यक्ति ही कह सकता है। परन्तु, मैं तुझ से कुछ कहूंगा तो उसको सुन लेने पर तू स्वयम् ही स्वीकार कर लेगा कि वास्तव में मैं—स्वयम् ही मूर्ख हूँ। प्रथम तो अनाथ शब्द किस स्थान पर किस अभिप्राय से प्रयुक्त होता है इसको तू नहीं समझता। मेरे घर में समृद्धि न थी; अथवा कोई कुटुम्बी न था, इससे मैं अनाथ हूँ या किसी अन्य कारणसे। इसे भी तू नहीं समझ सका।

श्रेणिक—तो 'अनाथ' शब्द का क्या आशय है? और तुम किस तरह अनाथ हुए यह मुझे सुनाओगे?

मुनि—बेशक, अगर तू विक्षेप दूर कर के शांति पूर्वक सुनेगा, तो मैं प्रसन्नता पूर्वक सुनाऊंगा।

श्रेणिक—मुझे किसी प्रकार का विक्षेप नहीं, मैं उस बात को तो बड़े ध्यान से सुनने को तैयार हूँ। इस कारण आप सुनाइये।

मुनि—राजन्! यदि मैं अपना चरित्र अपने ही मुंह से वर्णन करूंगा तो उसकी गणना आत्मश्लाघा में हो जायगी। परन्तु अनाथता और सनाथता का वास्तविक अर्थ समझानेके लिये इसके अतिरिक्त और कोई साधन है भी नहीं। मैं कौशाम्बी नगरी का निवासी हूं मेरे पिता का नाम धनसंचय है वे कौशांबी नगरी में एक इज़्ज़तदार गृहस्थ हैं। राजा और प्रजा दोनों में उनका बड़ा मान है। उनके कोष में इतना संचित द्रव्य है कि उसकी गणना करना कठिन है। किम् बहुना उस कोष के आगे बड़े से बड़े राजा का खज़ाना भी कोई वस्तु नहीं। मेरा पहिले गुणसुन्दर नाम था। मेरा बाल्यावस्था में उसी ढंग से लालन पालन हुआ है जैसा कि एक धन सम्पन्न व्यक्ति की सन्तान का होना चाहिये। इसके पश्चात् मैं पढ़-लिख कर होशियार हुआ तो एक उच्च कुल की सुन्दर कन्या के साथ मेरा विवाह किया गया। उस समय का मेरा अपना सारा जीवन-काल खेल-कूद, भोग वि-

लास और सुख में व्यतीत हुआ। दुःख अथवा संकट क्या वस्तु है, इसका मुझे कभी ध्यान तक न आया। मेरे और भी भाई बहिन थे। उन सब का मुझ पर बड़ा स्नेह था। किसी भी बात में वे मुझे अप्रसन्न नहीं होने देते थे। युवावस्था में मेरी एक युवक से मित्रता होगई हम दोनों परस्पर बड़े मेल से रहते और यथावकाश विनोद की बातें कर अपना मनोरञ्जन किया करते। मेरा मित्र मुझ से प्रायः वैराग्य की बातें किया करता और कहा करता कि सारे सांसारिक-सम्बन्धी स्वार्थ-वृत्ति वाले होते हैं। यह सुनकर मैं उसका खण्डन किया करता और अपना खुद का उदाहरण देकर उसको समझाता कि मेरे माता पिता और स्त्री आदि मुझ पर इतना प्रेम रखते हैं कि वे मुझे पल भर के लिये भी अपनी आंखों की ओट नहीं होने देते। यदि किसी दिन मैं उनको थोड़ी देर तक न दिखाई दूं तो उनका चेहरा उदास हो जाय। और वे मेरी खोज करने लगें। हमारे कुटुम्ब में स्वार्थ-मय प्रेम किसी का है ही नहीं। बल्कि शुद्धान्तःकरण से ही सब मुझे चाहते हैं। मेरा मित्र मेरी इस बात को सच्ची न मानकर कहता कि भाई! जगत् के पशु पक्षी और मनुष्य सब मतलब के साथी हैं। मतलब निकल जाने पर कोई किसी के काम नहीं आता। एक समय हम किसी तालाब पर गये थे। उस समय वहां अनेक पक्षी क्रीड़ा कर रहे थे। तथा कमल पर भौंरे गुंजार रहे थे। दूसरी बार गये तो तालाब सूखा पाया और किसी पशु पक्षी को विचरते नहीं देखा, देखो यह स्वार्थान्धता!

दोहा

स्वारथ के सब ही सगे, बिन स्वारथ कोइ नांहि।
सेवें पंछी सरस तरु, निरस भये उड़ि जांहि ॥

बगीचा और मनुष्य, वृक्ष और पक्षी आदि अनेक उदाहरण देकर उसने मुझे सांसारिक स्वार्थ को समझाने का प्रयत्न किया। किंतु, मैंने उसकी बात पर बिल्कुल भी ध्यान नहीं दिया। मैंने अपने निश्चित किये हुए विचार को ही ठीक समझा। मेरा मित्र मुझ से इस बात के लिये क्यों इतना ज़ोर देता है यह बात मैं उस समय न समझ सका था। अन्त में वह मुझको समझाते २ थक गया, और कहने लगा कि अब मैं बाहर जाने वाला हूँ, इस कारण कुछ समय तक तेरे पास न आ सकूंगा। राजन्! मेरा वह मित्र मेरे पास से गया कि शीघ्र ही अचानक मेरे अंग प्रत्यंग में वेदना होने लगी हड्डियों में इस तरह की पीड़ा होनी शुरू हुई कि मैं मछली की तरह तड़फने लगा। घड़ी भर पलंग पर और घड़ी भर भूमि पर। किंतु, मुझे किसी जगह भी चैन नहीं मिला। मानो भीतर से मेरे कोई सुई चुभो रहा हो। ऐसा असह्य कष्ट होने लगा। मेरे घर के और बाहर के सब कुटुम्बी लोग इकट्ठे होगये और सब मेरा उपचार करने लगे। कोई वैद्य को लाया तो कोई हकीम को। कोई ज्योतिषी को तो कोई मन्त्र शास्त्री को। इस प्रकार एक के पश्चात् एक ने आकर चिकित्सा की। परन्तु मुझे कुछ आराम नहीं मिला। समय बहुत होगया

था इस कारण मारे बेचैनी के मैं तो अधीर होगया। और सोचने लगा कि इसकी अपेक्षा यदि प्राणान्त होजाय तो अच्छा। घर के सब लोग तंग आगये। इस प्रकार मुझे कई दिन बीत गये। इसी बीच में वहां एक विदेशी वैद्य आये। वे देखने में जैसे सुन्दर थे, वैसे ही अनुभवी भी प्रतीत होते थे। मेरे पिता ने उनको बुलाया और कहा कि मेरे पुत्र को स्वस्थ करें तो मैं आप को मुंह मांगे रुपये दूंगा। वैद्य जी ने कहा कि रुपयों का नाम क्यों लेते हो मैं तो परमार्थ के लिये ही दवा देता हूं। मेरे पास ऐसी अकसीर दवाइयां हैं, कि मैंने जिस रोगी को भी हाथ में लिया है वही मेरे पास से स्वास्थ्य-लाभ करके गया है। यह होते हुए भी मैंने किसी से एक पैसा न लिया। चलो, तुम्हारे लड़के की हालत देखूं। ऐसा कह कर वे आये और मेरी नाड़ी परीक्षा की। कुछ देर ठहर कर बोले कि सेठ जी! इस लड़के को कोई रोग नहीं है, इसको तो कोई खटका 'भूत का आवेश' है।

इस पर मेरे पिता ने कहा कि वैद्यराज! इसका उपाय भी आप ही के पास होगा। वैद्यराज जी ने कहा:— "हां, हां, अवश्य!" किंतु उसके अलावा मेरे पास कोई उपाय नहीं है। इस पर मेरे पिता ने कहा कि खैर। अधिक उपाय से क्या काम है, एक उपाय तो है न? यदि इसी से यह स्वस्थ होजाय तो दूसरे किसी उपाय की क्या आवश्यकता? वैद्य जी ने कहा:— "एक उपाय है तो अकसीर परन्तु.................मेरे पिता ने कहा, फिर परन्तु, क्या? आप कहते क्यों नहीं, रुकते क्यों? इस

पर वैद्य जी ने कहा कि वह उपाय ज़रा टेढ़ा है कष्ट साध्य है। इतना अवश्य है कि उस उपाय से मैं इसके शरीर में से सब खटका निकाल डालूंगा । परन्तु, उस रोग को लेने के लिये तुम में से कोई एक मनुष्य तैयार होना चाहिये । यह खटका व्यन्तर ऐसा बुरा है कि जीव के बदले जीव लेता है। एक को बचाऊं तो उसके बदले दूसरे एक व्यक्ति को मरने के लिये तैयार होना पड़ेगा।

यह सुन कर कुछ देर तक तो सब लोग विचार में पड़ गये। कुछ ऐसा भी कहने लगे कि यह वैद्य गप्पी मालूम होता है। ऐसा भी कहीं होता है ? लेकिन, खैर। देखने तो दो। यह सोच कर कहने लगे कि वैद्यराज ! आप गुण सुन्दर के शरीर में से रोग निकालिये फिर उसको जिस के लिये आप कहेंगे वही लेलेंगे। हम सब यहीं मौजूद हैं। इस पर वैद्यजी ने कहा कि फिर पलट न सकोगे। इस से विचार कर बोलना। सब ने कहा कि हां, हां, हम सब विचार कर ही बोले हैं। इस प्रकार पक्की बात करके वैद्य राज ने सब को उस कमरे से बाहर निकाला। और उसके दरवाज़े बन्द कर दिये। इसके पश्चात् उन्होंने मेरे शरीर पर एक बारीक वस्त्र ढक कर कुछ मंत्र पढ़ा। थोड़ी ही देर में मुझे पसीना आया। वस्त्र भीगगया। उन्हों ने उसको एक प्याले में निचोड़ लिया और फिर मुझे उढ़ा दिया। इस प्रकार तीन चार उस वस्त्र को निचोड़ा। इस से सारा प्याला पसीने से रोग से भर गया। तब मुझे एक दम शान्ति अनुभव हुई इस के पश्चात् वैद्य जी ने किंवाड़ खोल कर सब को भीतर बुलाया। और दर्द का प्याला हाथ में लेकर कहा कि देखो ! अब इस लडके

को बिल्कुल आराम होगया है। इसका सारा रोग अब इस प्याले में इकट्ठा होगया है। कहो, तुम में से कौन इसको पीना चाहता है। इस पर मेरे पिता, माता, भाई, बहिन, भोजाइयें सबको पृथक् २ बुला कर वैद्य जी ने कहा परन्तु, प्याले का भीतर का द्रव पदार्थ जो तेज़ाब की तरह खदबदा रहा था और जिस में धुआं तथा अग्निकी ज्वाला जैसी ज्वाला निकल रहीथी उसको पीने का किसी को साहस न हुआ। पिता ने कहा कि मैं पीजाऊं लेकिन दूकान का सारा कारोबार मेरे हाथ में है। प्याला पी लेने पर यह रोग मुझे घेर लेगा और उस दशा में मैं अपने व्यापार की कुछ देख भाल न कर सकूंगा। माताने कहा कि गुण सुन्दर के पिता का मिज़ाज़ ऐसा तेज़ है कि उसको मेरे सिवाय दूसरा कोई बरदाश्त नहीं कर सकता। इसी प्रकार भाई और भोजाइयों ने भी इन्कार कर दिया। बहिनों को उनके पतियों ने रोक दिया। स्त्री ने भी कुछ बहाना लेलिया। रहे दूसरे आत्मीय, सो वे भी एक २ करके पेशाब पाखाने का बहाना करके चलते बने। आख़िर को वैद्यजी ने वह दर्द का प्याला पीछा मुझ पर ही छांट दिया इससे मुझे जैसी पीड़ा पहिले थी वैसी ही होने लगी। वैद्य जी वहां से चले गये। उस समय मुझे अपने मित्र की बात याद आई। सांसारिक स्वार्थ पर मुझे बड़ा ख़याल गुज़रा। सोचा कि अभी तक काच को हीरा और पीतल को सोना मान कर मैं मोह जाल में लिपटा रहा। और इस प्रकार मैं ने जो अपना अमूल्य समय नष्ट किया उसका भान हुआ। शीघ्र ही मैं ने विचार किया कि यदि अब मेरा यह रोग दूर होजाय तो मैं इस स्वार्थी संसार का त्याग करके संयम मार्ग को अंगीकार करलूं। यह विचार कर लेटा। इतने ही में मुझे एक स्वप्न

आया। स्वप्न में मेरे मित्र से भेंट हुई। उसने कहा मित्र।
सम्हल, सम्हल। अब भी सम्हलजा। तू और मैं दोनों देव
थे। पूर्व जन्म में जब तेरी आयु पूर्ण होने लगी तो तैंने मुझ
से कहा कि:-" तेरी आयु अभी शेष है इस कारण मैं यहां से
मर कर मनुष्य होता हूँ वहां तू मुझे समझाने के लिये आना।
और चाहे जिस तरह मुझ को शिक्षा देना"। उसके लिये
उससे मैंने वचन लेलिया। मैंने वचन दिया कि अवश्य ही मैं
तुझे समझाने को आऊंगा। क्या तू उस बात को बिल्कुल
भूल गया? उस समय का तेरा वैराग्य, समझ सब कहां रफू
होगये? मित्र! आज मैं (वचन देने वाला देव) तेरे पास
तीसरी बार आया हूं। एक बार मित्र की भांति तुझ से
सम्बन्ध जोड़ा, तुझ को हर तरह से संसार का स्वरूप
समझाने की कोशिश की, परन्तु, तू नहीं समझा। तब मैंने
यह कष्टसाध्य, परन्तु अनुभव कराने वाला दूसरा उपाय किया।
दूसरी बार वैद्य बन कर तेरे पास आया वह भी मैं ही था।
मैंने तुझ को वचन दिया था इसी से आज तीसरी बार
स्वप्नावस्था में तेरे पास आया हूं। अब बता, कि तुझे
संसार के स्वार्थ-मय सम्बन्ध की पहिचान हुई या नहीं?
यदि होगई हो तो उसको त्याग कर आत्मसाधन करने को
कटिबद्ध होजा। इस से तेरी वेदना शीघ्र ही दूर होजायगी।
इतने ही में तेरी नींद खुल गई तो देखा कि वे देवता अदृश्य
होगये। मैंने तो संसार परित्याग करने का विचार पहिले ही
से कर लिया था। किन्तु, स्वप्नावस्था के विचार ने मेरी
इच्छा को और भी मजबूत कर दिया। मैंने संकल्प कर लिया
कि इस वेदना के मिटते ही संसार का परित्याग करना। ऐसा
निर्णय करते ही धीरे २ मेरी वेदना कमहोने लगी। कुछ ही देर

में मुझे बड़ी शान्ति से गहरी नींद आगई। दूसरे दिन प्रातः-काल सोकर उठा उस समय सगे सम्बन्धियों से मेरा सारा कमरा भर गया। गड बड़ होने से मैं जाग न जाऊं इस लिये सब लोग शान्ति पूर्वक बैठे हुए मेरे जगने की राह देख रहे थे। मेरे जगते ही सब लोग मेरी तबियत का हाल पूछने लगे जब मैंने कहा कि अब मेरी तबियत पहिले से अच्छी है तो सुन कर सब लोग बड़े प्रसन्न हुए और कहने लगे कि ईश्वर ने हमारी अभिलाषा पूर्ण की। कोई कहने लगा मैंने अमुक यक्ष की मानता की थी कोई कहने लगा मैंने अमुक माता जी को प्रसाद चढ़ाने का संकल्प किया था। आदि ! इस पर मैंने उन सब से कहा कि तुम में से किसी की मानता सफल नहीं हुई है। केवल मेरी ही मानता फली भूत हुई है। मेरे माता पिताने पूछा कि तेरी कौनसी मानता है वह बता। हम सब से पहिले उसी को पूर्ण करेंगे। मैंने कहाः—"खंतो दंतो निरारंभो पव्वइए अणगारियं" अर्थात् मैंने ऐसी मानता की है कि यह वेदना मिट जाय तो क्षमा का पाठ सीखूं, और इन्द्रियों का दमन करके आरम्भिक परिग्रहों को छोड़ कर साधु धर्मको ग्रहण करूं। यह विचार करते ही मेरी वेदना एकदम, शान्त होगई इस कारण अब मैं अपने आत्मकर्म्म की साधना करूंगा। किसी को मेरे इस संकल्प में विघ्न नहीं डालना चाहिये, बस। मैं आप सब से इतनी ही कृपा करने की याचना करता हूं।

इसके पश्चात् मेरे माता पिता मेरे सम्बन्धियों से बहुत कुछ वाद-विवाद हुआ। किन्तु, अन्त में मैंने सब को समझा कर दीक्षा लेली। तभी से अनाथता से छुटकारा पाकर मैं

सनाथ हुआ हूँ। अब मैं केवल अपनी ही आत्मा की नहीं, बल्कि दूसरे प्राणियों की भी रक्षा करता हूँ इस कारण अपना खुद का और साथ ही दूसरों का भी नाथ हुआ हूं। इसी पर से विचार करले कि तू स्वयम् अनाथ है या सनाथ। तू मुझको जो ऋद्धि और भोग विलास के साधन देने को कहता है, इनकी अपेक्षा अधिक साधन मुझ को प्राप्त थे। सगे सम्बन्धी, स्नेही मित्र आदि भी यथेष्ट थे, किन्तु, यह सब होते हुए भी मुझे दुःख से कोई न बचा सका। इस से स्वयम् सिद्ध है कि मैं अनाथ था।

क्या तुझ में किसी को दुःख अथवा मृत्यु से बचाने की शक्ति है? मनुष्य का बड़े से बड़ा वैरी मृत्यु अथवा कर्म्म है। उन से बचाने की शक्ति तुझ में नहीं है, इसी से मैंने तुझ को अनाथ कहा था। यदि अब तुझे मेरे ये वचन अनुचित लगते हों तो उन्हें वापिस लेलूं।

श्रेणिकः—महाराज! आपके वचन सत्य हैं। मेरी ही भूल है। अब मुझको विश्वास है कि इस-हिसाब से मैं स्वयम् भी अनाथ हूँ। मैंने अपनी सम्पत्ति के लिये वृथा अभिमान किया। मृत्युरूपी वैरी के सामने चाहे जितनी सम्पत्ति अथवा चाहे जैसी सत्ता हो लेकिन वह तुच्छ है। आप एक दृढ़ वैरागी और सच्चे त्यागी पुरुष हैं। ऐसी दशा में आपको सांसारिक भोग विलास के लिये प्रेरित कर मैंने जो अपराध किया इसके लिये मैं क्षमा चाहता हूँ और आप धर्म सुनने का अभिलाषी हूँ।

इसके पश्चात् मुनि ने धार्मिक बोध दिया जिसको श्रवण कर श्रेणिक राजा ने बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार किया।

मुनि की स्तुति, सम्मान, और वन्दना नमस्कारादि करके श्रेणिक राजा वहां से विदा हुए। मुनिवर भी पृथ्वी मण्डल के अनेक भव्य जीवों को प्रतिबोधित कर आन्तरिक शत्रुओं को जीत कर अन्त में अनन्त पद को प्राप्त हुए। सनाथ हो-गये परन्तु, दूसरे लोगों को समझाने के लिये उन्होंने अपना नाम "अनाथ" ही रखा। इसी से उनको अनाथी ही कहा जाता है।

जिसके पास इतना वड़ा राज्य था-जो ऐसा समृद्धि शाली था-ऐसे गुण सुन्दर और श्रेणिक राजा जैसे भी अनाथ थे तो सामान्य पुरुष किस प्रकार सनाथता का दावा कर सकते हैं ?

इस प्रकार मुनि महाराज और बनेड़ा राजा साहब में बात चीत हुई। राजा साहब ने कहा कि आप से वार्तालाप कर वड़ी प्रसन्नता हुई। मेरा वड़ा सौभाग्य है जो आप जैसे महात्मा के दर्शन हुए। आपका व्याख्यान किसी मज़हब वाले को कटु नहीं होता। प्रत्येक की समझ में आजाता है। कृपया एक व्याख्यान महलों में भी दें। तदनुसार आपने एक व्याख्यान दिया। जिसे रनिवास में से मां साहब रानी साहब कुंवरानी साहब ने भी सुना। पश्चात् राजा साहब ने मलमल के थान महलों में वैराने का आग्रह किया किन्तु, मुनि महाराज वोले कि हमारी उत्तम से उत्तम भेंट यही है कि आपकी ओर से कोई दया अथवा उपकार का कार्य्य हो जाय। जब राजा साहब का वहुत आग्रह देखा तो आपने उसमें से ३ तीन हाथ वस्त्र ले लिया। फिर राजा साहब ने प्रार्थना
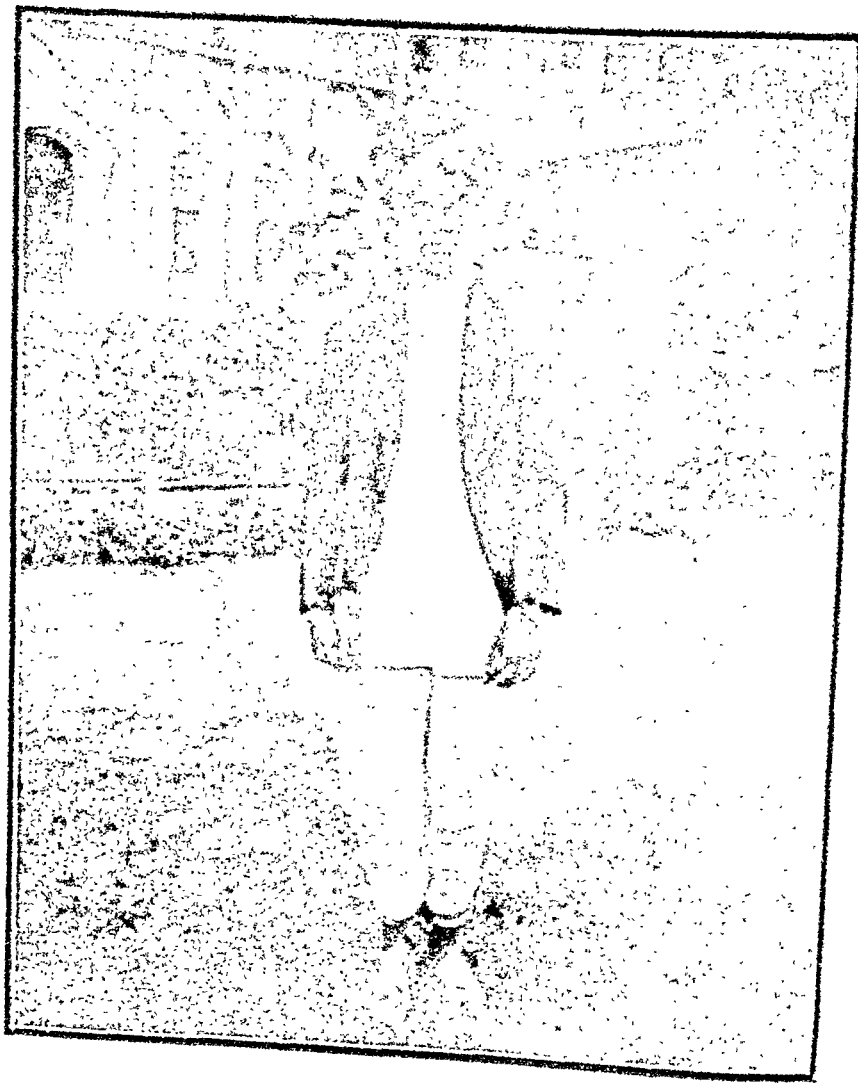
धर्मप्रेमी श्रीयुत् जुहारमलजी पुनमिया–सादडी (मारवाड)

की कि आगे का चतुर्मास यहां करें। यह चतुर्मास तो सादड़ी स्वीकार हो चुका। इस पर जैसा अवसर होगा कह कर आप मांडल पधारे। मार्ग में चनेड़ा सरकार का दया-विषयक पट्टा *लेकर कारभारी आये। मांडल में आपके व्याख्यान से बहुत उपकार हुआ। लोगों ने मदिरा, मांस, तम्बाकू और झूठी गवाही देने का त्याग किया और २ भी अनेक त्याग हुए। सूर्योदय पर प्रतिलेखणा कर आपने वहां से विहार किया।

वहां से वागोर पधारे और फिर वावरास। जहां रावले में व्याख्यान दिया। फिर कोसिथल पधारे। वहां के ठाकुर सा० श्रीमान् पद्मसिंह जी के सुपुत्र श्रीमान जवानसिंह जी ने भी व्याख्यान सुना और कई त्याग किये और एक पट्टा भी दिया * फिर आप रायपुर पधारे जहां पूज्य श्री एकलिंगदास जी महाराज विराजते थे। आपके प्रति उन्होंने बड़ा प्रेम-प्रदर्शित किया। मानो दोनों एकही संप्रदाय के अनुयायी हों। बीच बाज़ार में आप का व्याख्यान हुआ जिसके फल-स्वरूप एक जैन पाठशाला की स्थापना हुई। ज्येष्ठ कृ० ५ को प्रातःकाल आपने देखा कि कोई हाल ही में उत्पन्न हुए एक बालक को कोई छोड़ कर चला गया है। बालक गांव के बाहर भैरव जी के चबूतरे पर पड़ा हुआ सिसकियें ले रहा था। हाकिम सा० ने उसकी तहक़ीक़ात की उसके बाद नायन के द्वारा उसको आपके पास लाया गया। जहां आप व्याख्यान दे रहे थे आपने उसे

*पट्टे की नक़ल के लिये देखिये परिशिष्ट प्रकरण २।

* पट्टे की नक़ल के लिये देखिये परिशिष्ट प्रकरण २।

देखते ही अनुसन्धान करना आरम्भ किया । जब यह निश्चय हो गया कि यह किसी विधवा की करतूत है तो लोगों को सम्बोधित कर आपने कहा कि लो देखो इस देश में कैसे अत्याचार होते हैं। इसके पश्चात् आपने विधवा स्त्री के कर्तव्य" पर कुछ व्याख्यान दिया जिस में यह दिखलाया कि पति की मृत्यु के पश्चात् विधवा का कर्तव्य धर्म से पतित होकर पाप की वृद्धि करना नहीं है। बल्कि शील और धर्म की रक्षा करते हुए अपने जीवन को परमात्मचिन्तवन में व्यतीत कर सदाचार पूर्वक रहना ही परमधर्म है।

फिर यथा समय वहां से विहार कर आप करेड़े पधारे। करेड़े के राजा सा० ने व्याख्यान सुन कर बड़ी प्रसन्नता प्रगट की । ठहराने का भी आग्रह किया परन्तु, स्थिरता नहीं थी । इस कारण केवल पांच ५ रोज़ ही ठहरे और उसके बाद वहां से विहार कर ताल पधारे । वहां ताल ठा० साहिब के प्रार्थना पर आप ने राजमहल में व्याख्यान दिया । ठाकुर सा० की माता ने जैन रीत्यानुसार आप की वन्दना कर अपनी पुत्र-वधू (राणी सा०) को सम्यक्त्व दिलाई और स्वयं ने रात्रि भोजन का परित्याग किया। तथा प्रतिज्ञा की कि मैं यावज्जीवन इसका पालन करूंगी। रानी सा० तथा कई दास दासियों ने मांस भक्षण मदिरा पान आदि कई प्रकार के त्याग किये । ठाकुर सा० उम्मेदसिंह जी ने महीने में २२ रोज़ शिकार न खेलने और पांच जानवरों के सिवाय किसी जानवर का शिकार न करने की प्रतिज्ञा की । साथ ही एक हुक्म भी ऐसा ज़ारी कर दिया जिसके अनुसार इलाक़े के तालावों में कोई व्यक्ति मछलियें न मार सके । अन्यान्य लोगों ने भी कई

प्रकार के त्याग किये। ताल के ठाकुर सा० २ कोस की दूरी पर थाणा तक चरित्रनायक जी को पैदल पहुंचाने आये थांणा के ठाकुर साहब ने परिन्दे जानवरों की शिकार का त्याग किया, और लोगों ने कई जीवों को अभयदान दिया। फिर आप चीवड़े और भीम होते हुए गोदा जी के गांव पधारे वहां भी अच्छा उपकार हुआ। रावत लोगों ने मदिरा माँस का त्याग किया। और २ भी कई जाति के लोगों ने त्याग उपवासादि किये। फिर कोकरखेड़ा बरार, टाटगढ़, ठेकरवास होते हुए लसाणी पधारे। वहां ताल के ठाकुर श्री उम्मेदसिंह जी साहब प्रति दिन व्याख्यान सुनने को पधारते थे उन्होंने एक दिन व्याख्यान में यह प्रतिज्ञा की कि वर्ष भर में मेरे यहां जितने बकरे राज्य के आते हैं उन्हें मैं अमरिया कर दुंगा। और लसाणी ठाकुर श्रीमान् खुमाणसिंह जी साहब भी प्रति दिन उपदेश में पधारते थे। आपने प्रतिज्ञा की कि भाद्रव माँस में शिकार न करेंगे। चैत्र शु० १३ का भी किसी जीव की हिंसा न करेंगे तथा मादीन जानवरों को आजन्म न मारने का प्रण किया। फिर चरित्रनायक जी ने देवगढ़ की ओर विहार किया। लसाणी ठाकुर साहब अपने पाटवी पुत्र सहित अपनी सीमा तक पहुंचाने को आये। चरित्रनायकजीने देवगढ़ पहुंच कर लगातार सात व्याख्यान दिये। जनता ने और अधिक ठहरने का आग्रह किया परन्तु चतुर्मास निकट होने के कारण आप अधिक न ठहर सके। वहांसे चारभुजाजी, वहां दो व्याख्यान दिये हाकिम सा० जतनसिंह जी ने अच्छी सेवा भक्ति की आप बड़े सज्जन और धर्मनिष्ठा हैं। लोगों ने वहां भी चरित्रनायकजी को ठहराने का अत्याग्रह किया। परन्तु, समय का अभाव था। अतः प्रातःकाल ही प्रतिलेक्षणा कर आप

देसूरी पधारे। देसूरी में स्थानक वासियों का एक भी घर नहीं है। किन्तु, फिर भी वहां आपको लोगों ने बड़ी भक्ति-भाव से ठहराकर दो व्याख्यान दिलवाये। जिनमें हाकिम सा० मान-मल जी B.A. L.L.B., डा० सा० सुरेन्द्रनाथ सरकार पुलिस मुहर्रिर गणेशमल जी, पं० आतमा प्रसाद जी हेड मास्टर, श्री-युत पारसमल जी खज़ान्ची, आदि ने बड़े उत्साह से योग देकर व्याख्यान का लाभ लिया। फिर आप घाणेराव पधारे कोतवाली के सामने आपके दो व्याख्यान हुए बेहद भीड़ थी श्रीयुत बाबू श्रीनाथ जी मोदी मास्टर देसूरी ने स्व-रचित मनोहर स्वागत कविता पढ़ी जिसे लोगों ने बहुत पसन्द की। कविता भाव पूर्ण तो थी ही। किंतु आपके सुमधुर तथा कर्ण-प्रिय स्वर और लय ने उसे और भी रोचक बना दिया था। वह कविता यह थीः—

अध्यापक श्री नाथ जी मोदी
सादड़ी (मारवाड़) को
स्वागत-कविता।

वर्षाई सुधाधारा २ मुनिवर पुण्यो से मिला।
पंच महाव्रत के मुनि धारी, राग द्वेष को दूर टारी।
चारों कषाय निवारा, निवारा ॥ मुनिवर ॥ १ ॥
विविध प्रान्त में विचरे मुनिवर सब जनता को नसीहत देकर।
भ्रम को दूर निकारा, निकारा ॥ मुनिवर ॥ २ ॥

दिल दर्शन को चाह रहा है। देख २ मन मोह रहा है।
किया दर्शन सुख कारा, सुखकारा ॥ मुनिवर ॥ ३ ॥
"श्री चरणों में शीष नमावे, हाथ जोड़ मुनि के गुण गावे।
जय २ शब्द उच्चारा ॥ मुनिवर ॥ ४ ॥

श्रीमान् अनोपचन्द जी पूनमिया
सादड़ी (मारवाड़) की ओर से

स्वागत-कविता ।

तर्ज़:—दया पालो बुद्धजन प्राणी--
चौथमलजी मुनि उपकारी, जगतवल्लभ जग में जारी ॥ टेर ॥

जन्म मुनि नीमच में पाया, देश मालव मम मन भाया।
तात तस गंगाराम कहाया, मात केशर के कूँख जाया।

दोहा।

उन्नीसे-बावन विषे, निज जननी के लाल।
फाल्गुन सुद दिन पंचमी, लीनो संयम भार ॥
त्यागी नव वधू परणी नारी, चौथमल जी मुनि उपकारी ॥ १ ॥
जबर गुरु हीरालाल कीना जिन्हों ने शिर पै हाथ दीना।
भक्ति उनकी कर यश लिना, पूर्ण वैराग्य में चित्त दीना।

दोहा।

गुरु आज्ञा आगे करी, पीछे चलते आप।
शुद्ध चारित्र पालते, जिम पूरण शशि साप॥
विनय कर लिया ज्ञानधारी, चौथमलजी मुनि उपकारी॥२
वाणी मुख से अमृत बर्षे, सुनके भव्य जीव अति हर्षे।
मूढ़ से मूढ़ चाहे खरसे, सो भी सुन ज्ञान हृदे धरसे।

दोहा।

देश २ में विचरके, करते पर उपकार।
कई जीवों के आपने, दीने प्राण उबार।
दिये कई पापी को तारी, चौथमलजी मुनि उपकारी॥ ३॥
गुरु की महिमा है भारी, पार नहीं पाते नर नारी।
लिखते लेखनी भी हारी, कहा तक करूं महिमा थारी।

दोहा।

गहरे उदधि सम आप हो, नहीं गुणों का पार।
निज अनुचर पै महर कर, दीजो पार उतार।
अर्ज़ यही चरणों में डारी, चौथमलजी मुनि उपकारी॥४॥
शहर सादड़ी विचरत आये, मुनिवर अष्ट संग लाये।
सज्जन जन के मन अति भाये, महिमा सुन पामर घबराये

दोहा।

साल इक्यासी आषाढ़ सुद, सातम ने बुधवार ।
अनोपचंद ने जोड़के, गाई सभा मझार ।
सुनके हर्ष सब नर नारी, चौथमल जी मुनि उपकारी ॥५॥

आषाढ़ शु० ७ संवत् १९८१ वि० को आप मादा (गांव) होकर सादड़ी पधारे । नगर से बाहर लगभग ५०० नरनारी बड़ी भक्ति और प्रेम के भाव लिये हुए आपके स्वागत को उपस्थित थे । यथा समय वीर जयध्वनि और धूमधाम के साथ आपका सादड़ी नगर में पदार्पण हुआ । और इस प्रकार वहां के निवासियों ने अपने को बड़ा सौभाग्य शाली जाना ।

जिस दिन से चरित्र नायक महोदय सादड़ी में पधारे उसी दिन से नियमित रूप से प्रति दिन आप के सुललित व्याख्यान होने लगे । श्रोताओं की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती गई । क्या जैन और क्या जैनेत्तर सभी लोग तथा राज कर्मचारी पोस्टमास्टर पं० हरलाल जी शर्मा सा० डाक्टर अबदुल लतीफ़खां P. E. H. (इलाहाबाद) सा० आदि भी समय २ पर आपके व्याख्यान में योग देते थे । आपके उपदेश का लोगों पर बड़ा प्रभाव पड़ा । व्रत, पच्चखाण, दया पौषध आदि खूब हुए जो क्षमा पत्रों में सविस्तर प्रकाशित हो चुके हैं ।

एक दिन श्रीयुत आनन्द जी कल्याण जी (मंदिर मार्गी) की दूकान के सुयोग्य मुनीम श्रीयुत् भगवान धारसी जी जी आदि मिल कर चरित्रनायक जी की

सेवा में आये और प्रार्थना की कि गांव से बाहर प्रति वर्ष माता जी के आगे जो पाड़े का वध होता है उसको रोकने की कोशिश की जाय। साथ ही यह भी विनय की कि आप भी श्रावकों को इसके लिये उत्तेजना दें चरित्रनायक जी ने इसे स्वीकार किया और सब लोगों को इसके लिये उत्तेजित किया जिस के फल स्वरूप दोनों गच्छ के सज्जनों ने प्रतिवर्ष होने वाली इस हिंसा को सदैव के लिये बन्द करवा दिया।

इस चतुर्मास में विशेष उल्लेखनीय बात मुनि श्री मया-चन्द जी महाराज की ३६ दिवस की तपस्या है जिसे आपने गरम जल के आधार पर किया। तपस्या श्रावण शु० ८ से आरम्भ हुई थी जिसका पूर भाद्रपद शु० १४ को हुआ। इस की सूचना समाचार पत्रों तथा निमन्त्रण पत्रिकादि द्वारा सादड़ी श्री संघ ने सवत्र भेजदी थी। उसके अनुसार पूर के २ दिन पहिले से ही दूर २ के सज्जनगण पधारने लगे उपाश्रय के बाहर के मैदान में व्याख्यान मण्डप सजाया गया था। पूर के दिन सभा मंडप में सब से पहिले साहित्य प्रेमी और चरित्रनायक जी के सुयोग्य शिष्य पंडित मुनि श्री प्यार-चन्द जी महाराज ने प्रेम के विषय में कुछ देर तक एक सुमनोहर भाषण दिया। इस के पश्चात् चरित्रनायक जी का उपदेशात्मक व्याख्यान हुआ। श्रोतागण बड़े, प्रसन्न हुए। सबने कहा कि ऐसा आनन्द हमारे जीवन में यहां कभी नहीं हुआ।

उत्सव में रतलाम, जावरा, मन्दसौर जोधपुर, ब्यावर आदि कई शहरों के लगभग ६०० व्यक्ति सम्मिलित हुए थे पूरके दिन

आनन्द जी कल्याण की दुकान के मुनीम श्रीयुत् भगवान्‌ धारसी आदि २ सज्जन भी पधारे थे। उस दिन स्थानकवासियों की दूकानें तो वन्द रही ही थीं, परन्तु मन्दिर मार्गी भाइयों ने भी अपना सब प्रकार का कारोबार वन्द रक्खा था लगभग १२००) रुपये के जीव छुड़ाये गये। गरीबों को मिठाई तथा वस्त्रादि दिये गये। श्रीमान् जुहारमल जी पूनमियां ने जैन सुख चैन वहार ५ वां भाग (चरित्रनायक जी रचित) अपनी ओरसे छपवा कर सभा मण्डप में मुफ्त वितरण किया। आप की अवस्था थोड़ी है। तो भी आप दिल के सखी और बुद्धिमान हैं। परोपकार की ओर आप का हमेशा विशेष लक्ष्य रहता है श्रीयुत् हस्तीमल जी पूनमियां ने भी ज्ञानगीत संग्रह छपवा कर अमूल्य वितरण की। आपने व रूपचन्द जी व अनोपचन्द जी साहब ने भीलवाड़े में चतुर्मास की स्वीकृति के समय मंजूरी लेने में वड़ा परिश्रम किया था।

सादड़ी श्री संघ ने मुनि जी की अच्छी भक्ति की तथा आगत सज्जनों की तन मन धन से प्रेम पूर्वक सेवा की। यहां का श्रीसङ्घ बड़ा धर्मप्रिय और भक्तिकारक है। श्री सङ्घ ने हमारे चरित्रनायक जी का जीवन चरित्र लिखवाने में वड़े उत्साह से पूरी २ सहायता दी।

पर्यूषण पर्व के दिन फतापुरा के ठाकुर साहब ने भी उपदेश सुनने का लाभ लिया। कई अजैन लोगों ने उपवासादि किये और तम्बाकू पीने तथा मदिरा मांस भक्षण का परित्याग किया।

ता० १५। १०। २४ को श्रीमान् वूसी (मारवाड़) ठाकुर

सा० व्याख्यान श्रवणार्थ पधारे। आप ने चरित्रनायक जी के उपदेश से निम्नलिखित त्याग कियाः—

(१) हरिण और पक्षी की शिकार न करना।

(२) महीने में १० दिन तक बिलकुल शिकार नहीं करना।

आप के साथ एक महाशय और थे उन्होंने भी हरिण का शिकार न करने का प्रण किया।

यथासमय चतुर्मास पूर्ण होने पर चरित्रनायक महोदय ने सादड़ा निवासियों को व्याख्यान रूपी सुधा रस से अतृप्त रख वालीकीओर विहार किया। लोगों की बड़ी उत्कण्ठा रही।

सादड़ी से विहार कर आप वाली पधारे यद्यपि वहां श्वेताम्बर स्थानकवासी जैनियों के घर बहुत कम हैं, तथापि चरित्रनायक जी के पबलिक व्याख्यान में जनता बहुत जमा होती थी, श्रीमान् पन्नालाल जी बी०ए० हाकिम साहिब श्रीमान् रामस्वरूप जी बी० ए० एल० एल० बी० नायब हाकिम आदि भी उपदेश सुनने में सम्मिलित होते थे। वहां से विहार कर खिवेल पधारे वहां पर स्वामीजी श्री बक्तावरमलजी महाराज विराजते थे। उन से प्रेमपूर्वक वार्तालाप हुई। तदनुसार वहां दो व्याख्यान दे राणी स्टेशन पर पधारे। वहां स्थिरता कम थी तदपि जनता ने रात्रि में उपदेश सुनने की अत्यन्त अभिलाषा प्रकट की उस को आप ने स्वीकार कर एक व्याख्यान दिया। वहां से विहार करते हुए वूसी पधारे। वहां

श्रीमान् ठाकुर साहवने भी उपदेश सुना। वहां से चरित्रनायक जी विहार कर पाली पधारे। सैकड़ों नर नारी स्वागत को आये जयध्वनि के साथ शहर में मुनि श्री का पदार्पण हुआ मुनि श्री के प्रभाव से लोगों को यह पूर्ण विश्वास हो गया कि हमारे शहर में जो दो धड़े हो रहे हैं वे इन महापुरुष के प्रभावशाली सदुपदेश से एक होकर शांति हो जावेगी। अस्तु मुनि श्री के पधारने की ख़वर शहर में विजली की तरह फैल गई। व्याख्यान में कितने मनुष्य आते थे उसका उल्लेख करना हमारी लेखनी से तो क्या पर वहां की जैन जनता कहती थी कि व्याख्यान में इतने लोगों का समूह पर्यूषण में भी होना कठिन ही नहीं वरन् दुर्लभ है। जैन और जैनेतर सव ही लोग व्याख्यान रूपी पीयूष धारा से प्यास बुझाने को आते थे। नाना विषय सन्दर्भित उपदेश होने से प्रत्येक व्यक्ति के हृदय स्थल से संप का अंकुर प्रकट होने लगा। वहां जोधपुर से कैप्टैन ठाकुर केसरीसिंह जी साहव देवड़ा जागीरदार गलथनी (मारवाड़) और ब्रह्मचारी श्री लाल जी ठाकुर लालसिंह जी तुंवर कुचामण व जगदीशसिंह जी गहलोत H.L.M.S. मुनि जी के दर्शनों को आये दर्शन कर उपदेश सुन वड़े प्रसन्न हुए कैप्टन साहव ने कहा कि मैं ने सम्वत् १९७३ में जोधपुर कुचामण की हवेली में आप के उपदेश सुने थे आप ही के व्याख्यान रूपी समुद्र में से अहिंसा विषयक लहरे लेकर मैं जगह २ भ्रमण कर के कितने ही जागीरी ठिकाणों में व अन्य लोगों में दारू मांस के परित्याग का प्रचार कर रहा हूँ जिस में मुझे वड़ी सफलता मिली है अनेक स्थान पर दारू व मांस का व्यवहार वन्द हो चुका है। अवशेष प्रयत्न जारी है। यह आपही के व्याख्यान का फल

समझें। और यह ब्रह्मचारी जी भी इसी कार्य में लगे हुवे हैं। संप विषयक प्रयत्न पूर्ण सफली भूत न होता देख कर मुनिजी ने पोष कृष्ण ४ को वहां से विहार कर दिया और रात्री को शहर के वाहिर रामस्नेही आश्रम में निवास किया रात्री को श्रीमान् हाकिम साहिव भी मुनिजी के दर्शनों को आये और कई तात्विक विषयों पर बात चीत हुई। मुनि श्री से जनता ने प्रातः काल को एक व्याख्यान और भी वहां होने की स्वीकृति ली। यद्यपि स्थान शहर से दूर था तथापि जन संख्या ने उपदेश श्रवण करने में अधिक उपस्थिति होने का परिचय दिया। चरित्रनायक जी पुनः संप विषयक उपदेश देने में कुछ संकुचित हुवे कि इतने व्याख्यानों का असर नहीं हुवा तो आजका उपदेश मानो तप्ततवे के ऊपर पानी की बुंद छिटक के छू वुलाना मात्र है। क्योंकि पुनः संप विषयक उपदेश देने में संकुचित होना स्वभाविक ही है। परन्तु चरित्र नायकजीने कुछ उपदेश दिया। हम अपनी लेखनी से नहीं वता सकते कि उन थोड़ेही वाक्यों में क्या जादू था या कुछ और। अस्तु मुनि श्री के उपदेश से पाली श्री संघ ने फ़ौरन सम्प करलीया। इस जगह हम पाली श्री संघ व अन्य उन महानुभावों को कि जिन्हों ने इस कार्य में परिश्रम किया धन्यवाद देते हैं। श्रीमान् मिश्री लालजी मुणोत का नाम विशेष उल्लेखनीय है कि जिन्हों ने ऐक्यता विषय में भारी परिश्रम कर जनता के मनको प्रमोदित किया। पाली श्री संघ ने चरित्र नायक जी से २ व्याख्यान की और मंजूरी ले पुनः शहर में पदार्पण कराया। प्रातः काल के उपदेश की पूर्ति होने पर श्रीमान् सेठ मुकनमलजी वालीया की ओरसे श्रीफलों की प्रभावना बांटीगई। दुसरे दिन श्रीमान्

मोती लालजी मूथा की ओर से व जनता ने ऐक्यता की खुशी में क़रीब ३५० बकरों को अभयदान व गौओं के लिए घासादि का प्रबन्ध किया । चरित्र नायक जी का उपदेश प्रत्येक व्यक्ति के लिए अत्यन्त उपयोगी होने के कारण हिन्दू मुसलमान सब ही जनता उपदेश श्रवण करने में भाग लेती थी यहां तक कि वेश्याएं भी चरित्र नायक-जी के वाक्य श्रवण करने को आती थी "मगनी" और 'बनी" वेश्या ने चरित्र नायक जी का उपदेश सुन सैकडों मनुष्यों के सामने यावज्जीवन पर्यन्त शीलव्रत धारण किया । और "श्रृणगारी" वेश्याने एक अमुक व्यक्ति के अतिरिक्त और के त्याग किये । इससे पाठक स्वयं विचार सकते हैं कि चरित्र-नायक जी के उपदेश में कितना असर भरा हुवा है । चरित्र-नायक जी वहां से विहार कर पुनावले होते हुए चोटिले पधारे जहां पाली के क़रीब ७०-७५ श्रावक आपके दर्शनोंको आ पहुंचे एक व्याख्यान देकर वहां से विहार किया । श्रीमान् ठाकुर अभयसिंहजी भी पहुंचाने को साथ आये उन्होंने कहा कि सम्वत् १९७३ में आप यहां पधारे थे तब मुझे श्रावण और भादों मास में शिकार नहीं खेलने की प्रतिज्ञा कराई थी अब आपका पुनः पदार्पण हुआ इसलिए अब मैं आषाढ़ पूर्णिमा से कार्तिक पूर्णिमा तक और एक वैशाख मास में शिकार नहीं करूंगा । श्रीमान् ठाकुर साहब के भ्राता मगसिंह जी ने स्वयं शिकार करने व दूसरों को बताने के त्याग कर दिये ठाकुर साहब के साथ में आये हुए एक व्यक्ति ने हिरण पर बन्दूक न चलाने की प्रतिज्ञा की । वहां से चरित्रनायक जी विहार कर रोहिट होते हुए लूनी जंकसन पधारे । वहां से सेलावास की ओर विहार किया रास्ते ही में शिकारपुर (मारवाड़) के

ठाकुर श्रीमान् नाहरसिंहजी साहिब की ओर से संदेशा मिला कि ठाकुर साहिब को आपका उपदेश सुनने की अभिलाषा है चरित्रनायक जी ने इस विनती को स्वीकार कर पीछे लौट कर शिकारपुर पधारे वहां एक व्याख्यान देकर आपने विहार किया श्रीमान् ठाकुर साहिब बहुत दूरतक पहुंचाने को आये। मुनिश्री मोगड़े झालामंड होते हुए जोधपुर पधारे। वहां की जनता मुनिश्री से भली भांति परिचित है शहर में पधारने की ख़बर सुनते ही जनता प्रमोदित हुई वहां पर प्रथम साहित्यप्रेमी पंडित मुनिश्री प्यारचंदजी महाराज कुछ समय तक उपदेश फ़रमाते थे तत्पश्चात् चरित्रनायकजी मधुरता लिए हुए अपनी ओजस्विनी भाषा में उपदेश फ़रमाते थे जनता की उपस्थिती बहु संख्या में होती थी ता० ४-१-२५ को पबलिक व्याख्यान आहोरकी हवेलीमें "मनुष्य-कर्तव्य" विषय पर हुआ जनता की उपस्थिती क़रीब ५०००) के थी श्रीमान् ठाकुर राज श्री उगरसिंह जी साहिब सुपरिन्टेन्डेन्ट कोर्ट आफ़ वार्ड्स, श्रीमान् किसन सिंहजी साहिब होम मेम्बर कोन्सिल स्टेट व ट्रेजर, श्रीमान् हंसराज जी कोतवाल जोधपुर सीटी, श्रीमान् उदेराज जी साहिब नायब कोतवाल, श्रीमान् मोती-लाल जी साहब फर्स्ट क्लास मजिस्ट्रेट दीवानी व फोजदारी, श्रीमान् रणजीतमलजी साहिब बी० ए० एल० एल०बी सेकिंड क्लास मजिस्ट्रेट दीवानी व फौजदारी, श्रीमान् नवरत्न मलजी साहिब भूतपूर्व मजिस्ट्रेट कोर्ट आफ वार्डस, श्रीमान् केवल चंदजी साहिब भूत पूर्व दीवानी मजिस्ट्रेट श्रीमान् जसवन्त राजजी साहिब बी० ए० एल० एल० बी० भूतपूर्व सम्पादक ओसवाल व रजिस्ट्रार, रायसाहब श्रीमान् किसन लालजी साहब बी० ए० भूतपूर्व मजिस्ट्रेट, श्रीमान् अमृत लाल जी

डाक्टर असिसटेन्ट सर्जन श्रीमान् सोनी नारायण प्रताप जी बी० ए० एल० एल० बी० बार एट ला, श्रीमान् क़ाज़ी सैयद अली जी H. L. M. S, (लेदन); श्रीमान् भभूतसिंह जी राज वकील आदि कई राज्य कर्मचारी महाशयों ने उपदेश श्रवण करने का लाभ उठाया। चरित्रनायक जी का उपदेश सुन जनता आनन्दित हुई। ता० १८-१-२५ को ओसवाल यंग मेन्स सोसाइटी के कार्य कारिणी सभा के सभासदों के आग्रह से "ऐक्यता' विषय पर चरित्र नायक जी ने भाषण दिया। जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा अनेक सज्जनों ने कई त्याग। किये सभा के सेक्रेटरी राय साहिब किशनलालजी बाफणा बी० ए० ने निम्नोक्त त्याग किये। मैं अपने स्वार्थ व किसी मनो कामना के लिए कभी असत्य नहीं बोलूंगा। मैं स्वकीय परकीय किसी मृतक के समय १२ दिन से अधिक शोक नहीं रखूंगा। मैं बारह महीने में चौबीस दिनके सिवाय शीलव्रत पालूंगा। मैं अपनी रक्षा के सिवा ईर्षा व द्वेष किसी पर क्रोध न करूंगा और आप ही के सुपुत्र अमृतलाल जी असिसटेन्टसर्जन एल० एम० एस० ने भी प्रतिज्ञा की कि आज से जोधपुर शहर के ओसवाल भ्राताओं का इलाज विना फीस करूंगा। चौपड़ शतरंज आदि में समय व्यतीत नहीं करूंगा, वृद्धविवाह में सहमत न होऊंगा। प्रत्येक महिने में २० रोज शीलव्रत रखूंगा, स्वदेशी जूतों के सिवाय चमड़ा काम में न लूंगा। तदनुसार ता० २५ को सरदार मार्केट में पुनः भाषण कराने के लिए ब्रह्मचारी लालजी महाराज वैदिक ने चरित्र नायकजी से अत्याग्रह के साथ मंजूरी ले शहर में निम्नोक्त प्रकार के विज्ञापन चढ़वा दिये।

॥ ओ३म् ॥

सार्वजनिक व्याख्यान PUBLIC LECTURE.

अहिंसा का महत्व

सन्त समागम हरिकथा तुलसी दुर्लभ दोय।
सुत दारा अरु लक्ष्मी पापी घर भी होय॥

इस बात को सम्पूर्ण धर्मानुरागी देशहितैषी और विद्वान् सज्जन मान सकते हैं कि संसार में सत्संग अमूल्य पदार्थ है। जितना होसके अवश्य करना चाहिये तो सज्जनों से क्यों आशा न की जाय कि और लोग श्रीमान् ....जैनमुनि व्याख्यान-वाचस्पति पंडितवर **महात्मा श्री चौथमल जी महाराज** का "अहिंसा का महत्त्व" विषय पर सुललित और चित्ताकर्षक पब्लिक व्याख्यान सुन कर लाभ उठावेंगे। यह लेक्चर ता० २५ जनवरी सन् १९२५ तदनुसार माघ सुदि १ सं० १९८१ वि० रविवार को सुबह ९ बजे सरदार मार्केट (घंटाघर) में होगा।
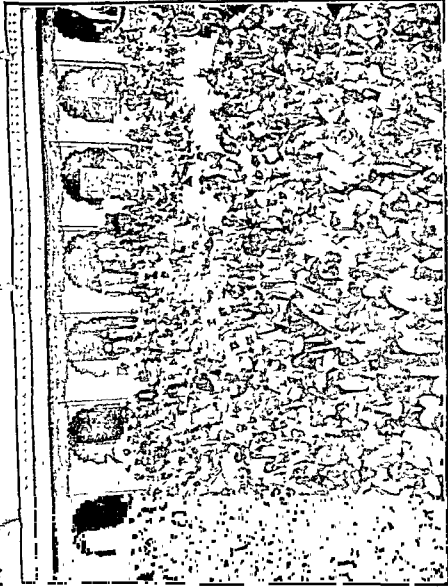
ार मार्केट (घंटाघर) जोधपुर मे ता. २५ जनवरी सन १९२५ को प्रसिद्ध वक्ता पण्डित मुनि
चौथमलजी महाराजके भाषणमें आई हुई जनताका दृश्य

परिचय–प्रकरण ३४

आपके व्याख्यान बड़ेही भावपूरित सर्वप्रिय और ओजस्विनी भाषा में इतने सरस होते हैं कि बालक, युवा वृद्ध व गृहलक्ष्मियां तक सभी समझ सकते हैं।

ऐसे महात्माओं के सत्संग का अवसर विरला ही मिलता है। इस लिये सर्व सज्जनगण अपने इष्ट मित्रों सहित अवश्य पधारें ताकि "समय चूकि पुनि का पछताने" पीछे पश्चाताप न करना पड़े।

जोधपुर ता०२२-१-२५ई० } आप सर्व श्रीमानों का दर्शनाभिलाषी,
ब्रह्मचारीलालजी महाराज
"वदिक" (तुवर राजपूत)

मुनिजी यथा समय पर सरदार मारकेट में पधारे जनता उत्कण्ठ से राह देख ही रही थी। चरित्रनायक जी ने अपने जोशीले भाषण में अहिंसा का सिद्धांत जनता के सन्मुख रख दिया अहिंसा का इतना महत्व जनता सुनते ही चित्रित होगई। हिंसा की रोक के लिए अनेकों ने कई प्रकार के त्याग किये विशेष कर स्वदेशी जूते के सिवा चमड़ा काम में न लेने के लिए बहुतों ने प्रतिज्ञा की। व्याख्यान समाप्त होने पर जनता की ओर से मुनिश्री के लिए चौतरफ़ से धन्यवाद के शब्द भेट स्वरूप में आरहे थे।। और आगन्तुक चतुर्मास की विनती पर जनता न ज़ोर दिया। उसी समय श्रीमान् व्यास

तनसुक जी वैद्य व्यावर ने व्यावर में चतुर्मास करने के लिए विनती की। आर्य समाज के नेता श्रीमान् लछमनदासजी ने खड़े होकर चरित्रनायक जी की मुक्त कंठ से प्रशंसा की उस भाषण में दादूपंथ, कबीरपंथ, रामस्नेही आदि कई सम्प्रदाय के सन्त भी आये थे। पाठक इस बात को सुनते ही उस दृश्य के देखने की प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में इच्छा उत्पन्न होगी कि अहाहा वह दृश्य तो हम भी देखते तो क्याही अच्छा आनन्द आता अतः उसी दृश्य का पाठकों के देखने के लिए वह चित्र दिया जाता है कि चरित्र नायक जी के भाषण में प्रत्येक सम्प्रदायानुयायियों की जनता कितनी संख्या में उपस्थित हुई थी और होती हैं यह चित्र सर्वाङ्ग सम्पूर्ण जनता का नहीं है क्योंकि पहिली और दूसरी सीट पर बैठे हुए करीब १५०० मनुष्यों का चित्र नहीं आया केवल सड़क पर बैठे हुए कुछ दूरी पर खड़े हुए मनुष्यों का ही चित्र आया हुआ है। अस्तु चरित्रनायक जी वहां से विहार कर झालामण्ड होते हुए कांकेराव पधारे जहां इटावे की तरफ के कई ब्राह्मण व्याह के जलूस में आये हुए थे और उसी अवसर पर आस पास गावों के ब्राह्मण भी विशेष संख्या में आये हुए थे। जितने ब्राह्मण उपस्थित थे प्रायः सभी चरित्र नायक जी से अपरिचित थे हां केवल २-१ व्यक्ति नाम से भले ही परिचित हों चरित्रनायक जी के मुख मण्डल पर ही अद्भुत व्याख्यान की चमत्कृति का चिन्ह किससे छिपा रह सकता है। फौरन कई ब्राह्मण व उपदेशक कविवर लालचन्द जी शर्मा अलीगढ़ सिटी आदि मिलकर चरित्रनायक जी के पास आ उपदेश श्रवण करने की इच्छा प्रकट की मुनि श्री ने उनकी विनती स्वीकार कर एक व्याख्यान दिया उसका उन ब्राह्मणों पर

बहुत प्रभाव पड़ा वह चरित्रनायक जी की मुक्त कंठ से प्रशंसा करने लगे। वहां से विहार कर विशाल पुर बिलाड़े होते हुए ब्यावर पधारे वहां कोशिथल निवासी स्वर्गीय श्रीमान् सेठ जवाँरमल जी कोठारी के पुत्र प्यारचन्दजी और इन्हीं के लघु-भ्राता बख्तावरमल जी और इनकी माता कंकूबाई ये तीनों माता पुत्र दीक्षा मुमुक्षु थे। अतः ब्यावर श्रीसंघ ने फाल्गुण शुक्ला ३ का मुहूर्त निश्चित कर आमंत्रण पत्र गांव २ भेज दिये श्री सङ्घ ने बड़े समारोह के साथ तीनों की दीक्षा का उत्सव किया। दोनों शिष्य चरित्रनायकजी के नेश्रित हुए और कंकुबाई श्रीमती महासति जी धापूजी महाराज के नेश्राय में हुई। दीक्षा का बड़ा ही अपूर्व आनन्द आया। उन दिनों में वहां खण्डे-लवाल जैन महासभा का अधिवेशन और भारत वर्षीय दि० जैन महासभा का नैमित्तिक अधिवेशन भी हुआ था उस समय दिगम्बर जनता बहु संख्या में बाहिर गांवों से आई हुई थी दानवीर रायबहादुर श्रीमान् सेठ कल्याणमल जी इन्दौर खण्डेलवाल जैन महासभा के अधिवेशन के सभापति थे। श्रीमान् सेठ कल्याण मल जी उज्जैन श्रीमान् सेठ भयासाहब मन्दसौर श्रीमान् सेठ रिखबदास जी उज्जैन भी उस सभा में आये हुए थे। उपरोक्त सभापति व सब महानुभावों को चरित्रनायक जी के विराजने की खबर मिलते ही आपके दर्शनों को रायली के कम्पाउंड में आये परन्तु उस समय चरित्रनायकजी वहां नहीं थे वे नव दीक्षित शिष्यों की दीक्षा होने के कारण दानवीर राय बहादुर श्रीमान् सेठ कुन्दनमल जी कोठारी (जैसलमेरी) के बंगले में ठहरे हुए थे अतः उन्हें चरित्रनायक जी के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त न होसका

केवल शिष्य वर्ग के दर्शन कर पीछे लौट गये चरित्रनायक जी वहां से विहार कर आनन्दपुर (काल्ह) पुष्कर होते हुए अजमेर पधारे। वहां एक पबलिक व्याख्यान दिया जनता की गहरी उपस्थिती हुई थी। साहबजादा अब्दुल वाहिदखां साहब डिस्ट्रीक्ट सेशन जज अजमेर राय साहब मुन्शी हरविलासजी रिटायर्ड जज अजमेर व मेम्बर लेजिसलेटिव कौंसिल मुन्शी शिवचरणदास जी साहिब जज खफीफा कोर्ट अजमेर आदि राज्यकर्मचारी भी अधिक संख्या में व्याख्यान का लाभ ले रहे थे। भाषण की समाप्ति पर साहब जादा अब्दुल वाहिद खां साहिब ने व्याख्यान की भूरि २ प्रशंसा की और कहा कि यदि पहले भी मुझे सूचना होती तो जरूर आता आदि।

चतुर्मास के दिन सन्निकट आरहे थे अतएव जोधपुर से चरित्रनायक जी के चतुर्मास की स्वीकृति के लिये तार व पत्र आरहे थे। जयपुर के श्रावक गण वहां आकर अनुनय विनय कर रहे थे। और व्यावर का श्रीसङ्घ पहले आचुका था परन्तु जयपुर जोधपुर को तो नकारात्मक सा ही उत्तर मिला। और व्यावर श्री सङ्घ की विनती स्वीकृत हुई।

यहां पर यह वतलाना अनावश्यक न होगा कि कोटा की संप्रदाय के श्रीमान् पण्डित मुनि श्री रामकुंवारजी महाराज व उनके शिष्यगण के हृदय में बहुत समय से यह भावना थी कि श्रीमान् प्रसिद्धवक्ता पंडित मुनि श्री चौथमल जी महाराज साहबकी सेवामें चतुर्मास कर ज्ञान ध्यानका विशेष लाभ लेवें जब आपको इन्दौर में चरित्रनायक जी के अजमेर पधारने की खबर मिली तब आप अपने शिष्यगण सहित शीघ्रगति से

विहार कर अजमेर पधारे। इच्छानुकूल अवसर देखकर चरित्रनायक जी ने फ़रमाया कि हमारा चतुर्मास ब्यावर स्वीकृत हुआ है अतः आप भी वहीं चातुर्मास करना स्वीकारें तो ज्ञान ध्यान की विशेष वृद्धि होने की सम्भावना है। तब मुनि श्री रामकुंवार जी महाराज ने सहर्ष उत्तर दिया कि हमारे हृदय में भी बहुत समयसे यही इच्छा थी अब यह शुभ अवसर प्राप्त हो गया है इस लिये हमारे भाव भी यथा सम्भव चतुर्मास आपकी सेवा में ब्यावर हो करने के हैं। यहां से मुनि श्री रामकुंवार जी महाराज चरित्रनायक जी के साथ ही विहार करते रहे। वहां से चरित्रनायक जी विहार कर शहर के बाहर श्रीमान् रघुनाथ प्रसादजी वकील बी०ए० एल०एल०बी० की कोठी में ठहरे और आपने वहां दो व्याख्यान दिये। नसीरावाद से दिगम्बर आम्नाय वाले श्रीमान् घीसूलालजी चरित्र नायक जी के अजमेर विराजने की सूचना मिलने पर फ़ौरन दर्शनार्थ आये और मुनि श्री से नसीरावाद पदार्पण करने के लिए अत्यन्त आग्रह के साथ प्रार्थना की उत्तर में "अवसर" शब्द कह कर मुनि श्री किशनगढ़ पधारे वहां पर भी लोगों ने अच्छी संख्या में व्याख्यान का लाभ उठाया। श्रीमान् हिज हाईनेस, उमद राजाह्री बलन्दमकां लेफटिनेन्ट कर्नल महाराजाधिराज सर मदनसिंह जी बहादुर के० सी० एस० आई० के० सी० आई ई० किशनगढ़ नरेश ने अपने राज्य कर्मचारियों के साथ व्याख्यान का लाभ लेने के लिए संदेशा चरित्रनायक जी की सेवा में पहुंचाया परन्तु यकायक कार्यवश श्रीमान् राजा साहिब का बम्बई जाना होगया जिससे उन्हें चरित्रनायक जी के व्याख्यान श्रवण करने का सौभाग्य

प्राप्त नहीं हो सका। किशनगढ़ श्रीसङ्घ के अत्याग्रह प
महाराज श्री ने मुनि श्री वृद्धि चन्दजी व चांदमल जी के
चतुर्मास वहां पर ही करने की अनुमति देदी व सादड़ी श्रीसं
की तरफ से भी चतुर्मास के लिये अत्याग्रह पूर्वक विनन्
करने पर श्रीमान् मुनि श्री छगनलाल जी मगनलाल जी
सन्तोष मुनि जी को ठाणा ३ से चतुर्मास सादड़ी करने के
लिये आज्ञा प्रदान की। वहां से चरित्रनायक जी नसीराबाद
होते हुए मसूदे पधारे। इन सब रास्तों के गावों में कई राज
पूतों ने शिकार खेलने मदिरा पीने इत्यादि कई प्रकार के त्याग
किये। मसूदे में मुनि श्री ने ७—८ व्याख्यान फरमाये वहां के
श्री संघ के विशेष आग्रह करने पर महाराज श्री ने मुनी श्री
भेरूंलालजी व चम्पालालजी महाराज को चतुर्मास वहीं करने
की आज्ञा प्रदान करदी। वहां से मुनि श्री अपनी स्वीकृत्यनु
सार संवत् १६८२ का चतुर्मास करने के लिये ब्यावर पधारे
ब्यावर की जनता दीर्घ काल से चतुर्मास का अत्याग्रह कर ही
रही थी। क्यों न करें भला आप जहाँ तहां अपना पावन चरण
कमल रखते हैं वहां धर्मोन्नति अधिक रूप से होती है क्योंकि
आपका उपदेश सरल सरस ओजस्वी और निष्पक्षपात होता
है। जिस विषय को आप लेंगे उस विषय को जैन सिद्धान्त की
विशेषता दिखाते हुए भिन्न २ आम्नाय के ग्रन्थों से सिद्ध कर
दिखावेंगे और जनता के हृदय में धार्मिक व सुरीति प्रचार
के भाव ठोस २ कर भर देंगे जिसका पूरा अनुभव तो उन्हीं
व्यक्तियों को हो सकता है कि जिन्होंने महाराज श्री के मुखार-
विंद से व्याख्यान श्रवण किया हो। सिर्फ नमूने मात्र के
लिये संक्षिप्त दिग्दर्शन पाठकों की जानकारी के लिये ऊपर

दे चुके। हमारी हार्दिक भावना है कि परमात्मा ऐसे आदर्श मुनि के हृदय में वर्तमान से भी विशेष धार्मिक बल स्फुरित करते रहें कि जिससे वे हमेशा आत्मोन्नति समाज सुधार इत्यादि के महत्वपूर्ण कार्य्यों में दिन प्रति दिन अग्रसर होते रहें और आपके आदर्श जीवन से शिक्षा ग्रहण कर हमारी समाज उन्नती के उच्च शिखर पर पहुंच कर सच्चे आत्मिक सुखों की प्राप्ती के मार्ग को ढूंढ सकें।

धार्मिक व समाजिक उन्नति के महत्पूर्ण कार्य्य चरित्र नायक जी द्वारा वर्तमान में हो रहे हैं व भविष्य में होते रहेंगे उनका दिग्दर्शन पाठकों को (Second edition) या Second Part में कराने की यथाशक्ति कोशिश की जावेगी।
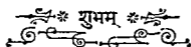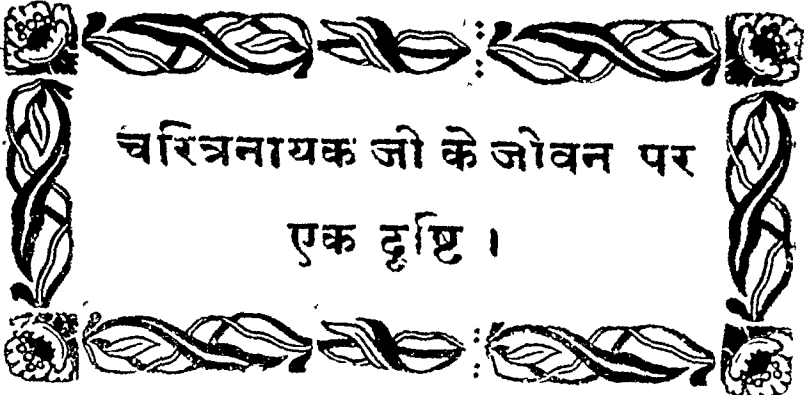
इहं सि उत्तमो भन्ते, पच्छा होहिसि उत्तमो।
लोगुत्तमुत्तमं ठाणं, सिद्धिं गच्छसि निरउ॥

उत्तराध्ययन सूत्र अ० ६ गा० ५८

भावार्थ—हे पूज्य यहां भी आपका उत्तम जीवन है और परलोक भी आपका जीवन उत्तम ही रहेगा और उत्तम से उत्तम स्थान जो मोक्ष है उसकी भी आपको प्राप्ति होगी।

प्रकरण ३५ वाँ

चरित्रनायक जी के जीवन पर एक दृष्टि ।

विज्ञ पाठक ! आपने चरित्रनायक जी के पवित्र और उच्च जीवनचरित्र का पाठ किया । आपने उनके त्याग, सत्यान्वेषण, तप, धर्म, जिज्ञासा और मानसिक संग्राम की अनेक घटनाओं का अध्ययन किया । और साथ ही, उन के अनेक उपदेशों, वार्ताओं, व्यवहारों, कार्यों, भावों और विचारों को शान्तिपूर्वक पढ़ा । आइये, अब यह देखें कि हम इस महान् आत्मा के जीवन से क्या २ शिक्षाएँ लेसकते हैं ।

महात्माओं के चरित्रों के पढ़ने का मुख्य उद्देश्य यह है कि हम उन का अनुकरण करके अपने जीवन को सफल बनावें । मुनि महाराज का जीवनचरित्र कोई पौराणिक गाथा या औपन्यासिक कहानी नहीं है । बल्कि, यह वास्तविक पुरुष के जीवन की वास्तविक चर्चा है । आप के महत्वपूर्ण कार्य्य एवम् आपके जीवन सम्बन्धी घटनाएं काल्पनिक रचना नहीं हैं, किन्तु वे सब मानव स्वभाव और हृदय की उच्चतम अवस्था

का आज्वल्यमान उदाहरण हैं। मुनि महाराज का जीवन यह सिद्ध करता है कि प्रत्येक मनुष्य में प्रलोभनों और कुवृत्तियों के निरोध की सामर्थ्य है। वह मानव-हृदय को आशा और उत्साह से भर कर उसे उच्च और पवित्र चरित्र पर मनन करने के लिये प्रेरित करता है। मुनि महाराज की शिक्षा और उपदेश का मुख्य उद्देश यह है कि मनुष्य पापों और दुःखों से छूट कर आत्मिक शान्ति को प्राप्त करे। आप का जीवन हमें यह सिखलाता है कि संसार के कल्याण और सुधार के लिये सब से बड़ी आवश्यकता यह है कि प्रत्येक व्यक्ति अष्टाङ्ग मार्ग का आचरण करे और समस्त मानसिक और शारीरिक प्रलोभनों, रोगों और व्याधियों से परिश्रम तथा दृढ़ता पूर्वक संग्राम करते हुए निर्वाण पद को प्राप्त हो।

आज सारे संसार में अशान्ति छाई हुई है। प्रत्येक देश और प्रत्येक समुदाय में हलचल मच रही है। कहीं आर्थिक संग्राम हो रहा है तो कहीं फ़ौजी युद्ध। एक देश दरिद्रता से दुखी है, तो दूसरा धनमत्तता से। बाहरी सभ्यता और बाह्य आडम्बरों के मारे वास्तविक अवस्था और वास्तविक समस्या की ओर संसार का ध्यान नहीं है। संसार में नित्य नई औषधियां निकलती हैं, आविष्कारों की संख्या दिन प्रति दिन बढ़ती जाती है। किन्तु, उन की वृद्धि के साथ ही डाक्टरों और वैद्यों की संख्या भी बढ़ रही है। आज रोगियों की भी कोई सीमा नहीं है। हजारों चिकित्सकों और औषधियों के होते हुए भी रोगियों की संख्या में कमी नहीं दि-

खाई देती। इस से सिद्ध होता है कि रोग का निदान ठीक नहीं है। अन्तर्जातीय और सामाजिक द्वन्द्वन्द्वियों की प्रचण्ड अग्नि सर्वत्र फैली हुई है। गरीबों और अमीरों, किसानों और ज़मींदारों, मालिकों और नौकरों, काले और गोरों, स्वदेशियों और विदेशियों, उदारों और अनुदारों, नीचों और ऊंचों की प्रति द्वन्द्विता और शत्रुता ने सारे संसार को अशान्त और विक्षिप्त कर रक्खा है। धार्मिक मत-मतान्तरों, राजनैतिक दलों, वैज्ञानिक आविष्कारों, आर्थिक संस्थाओं और अन्तर्जातीय सम्बन्धों तथा अधिकारों को ही समस्त खराबियों की और बुराइयों की जड़ बताया जाता है। आज समाज और समुदाय, राष्ट्र और जाति आदि शब्दों ने व्यक्ति शब्द को आच्छादित कर लिया है। वर्तमान काल में जातीय चरित्र, जातीय बल, सामाजिक दुर्दशा और राष्ट्रीय ह्रास की चर्चा सर्वत्र सुनाई देती है, किन्तु यह कोई भी नहीं कहता और सोचता कि जाति, समाज अथवा राष्ट्र किस से बनते हैं? जिस जाति के व्यक्ति निर्बल, चरित्रहीन और विचारशून्य हैं, क्या वह जाति समाज अथवा राष्ट्र कभी बलवान, चरित्रवान या विचारशील हो सकता है? हर्गिज़ नहीं।

पाठको! यदि आप व्यक्तियों के नैतिक और आत्मिक शारीरिक और सामाजिक जीवन को बलवान तथा चरित्रवान बनाना चाहते हैं तो मुनि महाराज के पवित्र जीवन चरित्र को बारम्बार पढ़ और मनन कर उस का अनुकरण कीजिये। आइये, हम इस जीवन से कुछ बातें सीखने का यत्न करें।

वक्तृत्व-शक्ति

यदि आप ने कभी किसी सहृदय शान्त और मधुरभाषी धर्मात्मा वक्ता की प्रभावशालिनी और हृदय ग्राहिणी वाणी को सुना है तो आप अनुभव कर सकेंगे कि मुनि महाराज की वक्तृता और वार्ता कितनी मधुर, पवित्र और शुद्ध एवम् विश्वासोत्पादनी होती होगी। आपने अब तक अनेकों उपदेश और व्याख्यान दिये हैं जिन्हें सुनते ही मानव-हृदय में एक अलौकिक परिवर्तन हो जाता है और श्रोतागण धर्म सङ्घ तथा कर्तव्य के पाश में तत्काल ही आजाते हैं जैसा कि इस चरित्र में उल्लिखित कितने उदाहरणों से सिद्ध होता है।

आप के व्याख्यान बड़ी सुललित और मधुर एवम् हृदय-ग्राही भाषा में होते हैं। साथ ही वे बड़े मनो मोहक, चित्ताकर्षक, सारगर्भित और धार्मिक भावों से पूर्ण भी रहते हैं। श्रोतागण उन्हें बड़े ध्यान से सुनते और भूरि २ प्रशंसा कर अपने को कृतकृत्य जान आल्हादित होते हैं। वैसे आप स्वयम् भी दया व गुणों की साक्षात-मूर्ति हैं। परन्तु जिस समय आप अपने हृदयोद्गारात्मक सरस और सरल भाव वाक्यों में प्रकट कर जनता के कर्ण विवरों द्वारा प्रवेश कराते हैं—उस समय आप की शोभा एक श्रेष्ठ सौन्दर्यता धारण कर लेती है। श्रोता का मन स्वभावतः ही आकर्षित हो जाता है। समय २ पर आप के वचनामृतों से जैन सम्प्रदायावलम्बी तथा इतर सद् गृहस्थों का जो उपकार हुआ है, वह अकथनीय है।

प्रायः देखा जाता है कि एक वक्ता साधारण जनता पर तो खूब प्रभाव डाल लेता है किन्तु, शिक्षित और विचारशील समु-

दाय पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता इसी प्रकार एक वक्ता शिक्षित समुदाय पर प्रभाव डाल सकता है किंतु, साधारण लोगों में उस की अवहेलना होती है। हम देखते हैं कि मुनि महाराज के पास यदि आज एक धुरन्धर पण्डित आता है तो कल एक गंवार किसान। कभी वह नगर वासियों को उपदेश देते हैं और कभी ग्राम वासियों को। उन की शिक्षा और उपदेश को सभी मनोयोग से सुनते और ग्रहण करते हैं।

मुनि महाराज कोई व्याख्यान दाता ही नहीं हैं। यह आप को आगे चल कर विदित होगा। वे मानव प्रकृति के ज्ञाता, भिन्न २ मनुष्यों की विविध आवश्यकताओं और प्रवृत्तियों के निरीक्षक तथा दया और करुणासागर हैं। वे सब भ्रमों और शंकाओं को मिटा कर उन्हें सुपथ पर लाने की उत्कृष्ट अभिलाषा रखते हैं। वे मनुष्यों के हृदय और बुद्धि को प्रकाशित करने के लिये पुस्तकीय प्रमाणों को उद्धृत नहीं करते वलिक कहते हैं कि मनुष्यों! तुम स्वयम् देखो और सुनो न तो वे प्राचीनता के अन्धभक्त हैं, और न नवीनता के आत्म विस्मृत पुजारी। वे तो सत्य के अन्वेषक, सत्य के ग्राहक और सत्य ही के प्रचारक हैं।

लोग मुनि महाराज का उपदेश सुनते सुनते यह अनुभव करने लगते हैं कि वे हमारे हृदय के रहस्यों के ज्ञाता, हमारे दुःखों के निवारक और हमारे पापों के त्राता हैं अब तक आपने बाल विवाह, वृद्ध विवाह, कन्या विक्रय, अहिंसा, धर्म, मांसाहार, मदिरा पान, व्यभिचार, संगति, मेल दृढ़ता, सत्यता, क्रोध, दया क्षमा, मोक्ष-मार्ग, धार्म्मिक तत्त्व, मनुष्य के कर्तव्य, लोक-सेवा, भक्ति, वैराग्य, प्रेम, ज्ञान, आत्मज्ञान दृढ़ता, इच्छा शक्ति, कर्तव्य पालन, संसार की निःसारता, सामाजिक

जीवन, दुराग्रह, त्याग और वैराग्य, सदाचार, विद्या, तपसादर्श, जीवन संग्राम और उसमें विजय प्राप्ति, अतीत स्मृति, हमारा धार्मिक पतन, ब्रह्मचर्य्य, इन्द्रिय निग्रहता, पर्यूषण पर्व और जैन धर्म, जैन धर्म की श्रेष्ठता, जैन धर्म की तात्त्विक मीमांसा, हमारा गार्हस्थ्य जीवन, मानस मुक्तावली, सत्यनिष्ठा आदि २ अनेकानेक विषयों पर अनेकानेक व्याख्यान दिये हैं और दे रहे हैं। उनके द्वारा जाति, धर्म समाज और देश का बहुत कुछ हित साधन हुआ है। विस्तार भय से यहां उसका उल्लेख नहीं किया जा सकता।

वक्तृत्व शक्ति एक बड़ा ही अद्भुत गुण है। सद्वक्ता अपनी इस शक्ति के बल पर युगान्तरकारी परिवर्तन कर देते हैं। मुनि महाराज की वक्तृत्व-शक्ति बड़ी बढ़ी चढ़ी है। आपके व्याख्यान बड़े सार गर्भित, भावोत्तेजक ओजस्वी, सुललित, सर्व साधारण के समझने योग्य, प्रभावोत्पादक, मनोहर, हृदयग्राही, चित्ताकर्षक और मधुर होते हैं। व्याख्यान देते समय आप श्रोताओं की रुचि के अनुसार उसमें यदा कदा मनोरञ्जन का भी पुट लगा देते हैं। आपने अपनी इस प्रतिभा के बल पर अभी तक न केवल जैन-जनता का ही उपकार किया है-प्रत्युत अनेक अजैन लोगों और विधर्मियों (हिन्दू मुसलमान) तक को अपना अनुयायी बना लिया है और अङ्गरेजों को भी प्रतिबोधित किया है अबतक आपके उपदेश से अनेक धार्मिक संस्थाएं और ज्ञानवर्धक सभाएं स्थापित हो चुकी हैं और होती जारही हैं। आपकी शिक्षा से हज़ारों कुमार्ग गामी सुमार्ग पर आगये जिन लोगों ने इस सम्बन्ध में कुछ अन्वेषण किया है उनका कथन है कि मुनि महाराजने इस प्रांत में ही नहीं बल्कि दूर २ भी अच्छा धर्म-प्रचार किया है। सब

जगह लोग आपको स्मरण भी किया ही करते हैं। जिस दिन जिस स्थान से आप विहार करते हैं उस दिन नगर के छोटे बड़े सब लोगों की आंखों में से अश्रुधारा बहने लगती है, वे आप की मधुर वाणी का स्मरण कर २ के निर्निमेष दृष्टि से आप की भव्याकृति की ओर देखा करते हैं और कहते हैं कि अब मुनि महाराज से पृथक् हो। न जाने ईश्वर फिर कब ऐसा सुयोग लावेगा आदि।

आपको किसी सम्प्रदाय विशेष से द्वेष या घृणा नहीं है। सब को आप बड़े प्रेम की दृष्टि से देखते हैं। बात चीत अथवा व्याख्यान आदि में कभी २ आपके मुख से ऐसा कोई शब्द नहीं निकला जो ईर्षा लिये हुए हो। व्याख्यान तो आप श्रावकों में देते हैं परन्तु उस समय किसी भी धर्म या सम्प्रदाय का अनुयायी चला जाय तो उसको यही प्रतीत होगा कि मुनि महाराज मेरे धर्म के सम्बन्ध में ही व्याख्यान दे रहे हैं।

इसका कारण यह है कि आप धर्म सम्बन्धी व्याख्यान देते समय भी किसी दूसरे मत का खण्डन नहीं करते। आपके प्रत्येक शब्द में प्रेम होता है। आप अपने मधुर शब्दों में गम्भीर विचारों को बड़ी सरलता से सबके हृदयङ्गम कर देते हैं। आपका कथन है कि मनुष्य धर्म-सम्बन्धी मतान्तर के झगड़ों में न फंस कर परब्रह्म परमात्मा की सच्ची उपासना कर अपने जीवन-संग्राम में सफलता प्राप्त करे। धर्म का अत्युच्च उद्देश्य जो आत्मरक्षा और लोक सेवा है उसमें प्रवृत्त हो। दीन दुखियों और दरिद्रयों का क्लेश निवारण करे। सच पूछिये तो इससे बढ़कर और कोई धर्म है भी नहीं। यह बात दूसरी है कि

कालकी कुटिल गति से हमारे देश में ऐसे व्यक्तियों की कमी नहीं है जिनका धर्म के नाम पर ही धन बटोरना लक्ष्य रहता है। किंतु उन्हें चरित्र नायक जी के विशुद्ध चारित्र से शिक्षा ग्रहण कर अपना कर्तव्याकर्तव्य निश्चित करना चाहिये।

यह बात नहीं है कि आप हमेशा जैन जनता में उपदेश करते हों। या तो आप सार्वजनिक स्थान में अपना व्याख्यान देते हैं या स्थानादि की समुचित व्याख्यान न होने से कहीं किसी समय उपाश्रय आदि में व्याख्यान देना पड़े तो वहां हिन्दू मुसलमान सब लोगों को (बिना किसी रोक टोक के) व्याख्यान लाभ लेने का सुयोग दिया जाता है। वैसे यदि कोई धर्मावलम्बी व्याख्यान के लिये आपको विनती करे तो आप यथासम्भव कभी इन्कार नहीं करते यदि इसी प्रकार प्रत्येक धर्म के अनुयायी निःसङ्कोच भाव से एक दूसरे के स्थान में जायं और उपदेशादि करें तो देश में खूब प्रेम वृद्धि हो। और अज्ञानता के कारण उसमें जो संकुचितता प्रविष्ट हो गई है वह सदा के लिये दूर हो जाय।

हमारे देश और समाज में आजकल मत भेद और सिद्धान्त विरोध का रोग प्रबल हो रहा है। इस रोग ने हम को यहां तक जकड़ लिया है चाहे कोई कैसा ही विद्वान् क्यों न हो पर मत भेद के कारण उसके विचारों का प्रचार नहीं हो पाता। आवश्यकता है कि हम अपनी इस संकुचित वृत्ति और पारस्परिक वैमनस्य एवम् मत भेद को दूर करके हेल-मेल से रहते हुए उन्नति पथ की ओर अग्रसर हों।

यहां यह प्रश्न हो सकता है कि वर्णित नायक जी के भाषण में इतना प्रभाव क्यों है ?

बहुधा देखा जाता है कि किसी प्रसिद्ध व्याख्यान दाता के व्याख्यान को सुन कर हृदय पर जो प्रभाव पड़ता है उसे व्याख्यान के पढ़ने से नहीं। स्वर्गीय मि० गोखले, कर्मवीर महात्मा गांधी, माननीय मालवीय जी और लाला लाजपतराय के व्याख्यानों को सुनते समय हृदय में जो भाव उत्पन्न होते हैं वे भाव उनके व्याख्यानों को पुस्तकों या पत्रों में पढ़ने से नहीं हो सकते। वास्तव में यह प्रभाव व्याख्यान दाता के व्यक्तित्व, आत्मिक बल, त्याग, माधुर्य, उत्साह, वाक्य रचना, भाषण शैली, स्वर-परिवर्तन आदि में वास करता है। यदि वक्ता का हृदय दुखियों के दुःखों से दुःखी, रोगियों के रोगों से व्याकुल और अत्याचारियों के अत्याचारों से विक्षिप्त है। यदि वह पापियों की पतितावस्था पर आंसू बहाता और विषय वासना ग्रस्त लोगों की मानसिक वेदनाओं का अनुभव कर उनके उद्धार का निरन्तर चिन्तन करता है।

अविद्यान्धकार में पड़ी हुई जनता के साथ पूर्ण करुणा मयी सहानुभूति रखता है क्या यह सम्भव है कि उसकी वाणी में अलौकिक-शक्ति, उसके शब्दों में आध्यात्मिक चमत्कार, उसके विचारों में प्रतिभा उसके भावों में सत्यता और उसके चरित्र में विचित्रता तथा विशेषता न हो ? क्या यह सम्भव है कि जो व्यक्ति इन शस्त्रों और आभूषणों से अलंकृत और सुसज्जित हो वह मानव हृदय और मानव समाज, नहीं, नहीं, समस्त सृष्टि में अभिलषित शक्ति का सञ्चालन कर युगान्तर उपस्थित नहीं कर सकता।

चरित्रनायकजी इन सब विभूतियों की साक्षात् मूर्ति और इन दैवी-शक्तियों के गम्भीर श्रोत हैं।

इसी से आप अनुमान कर सकते हैं कि आपके अनुपम प्रभाव का क्या कारण है?

चरित्रनायकजी के भाषण के प्रभाव का एक मुख्य कारण आपका अत्युच्च चारित्र बल और सरल स्वभाव भी है। आपने आरम्भ से ही ब्रह्मचर्य्य आदि से संयमका पालन किया है। राग-द्वेषादि से आप हमेशा दूर रहे हैं। वैसे तो साधु महात्माओं का यह धर्म ही है किन्तु, आप में चारित्र-सम्बन्धी विशेषताएं प्रारम्भ से ही हैं। व्यसनादि से आप सर्वदा दूर रहे हैं। हमेशा सत्संगति में रहना, व्यवहार की साधारण सी बातों में भी सत्या सत्य भाषण का विचार रखना आदि बातें आरम्भ से ही आपके ध्यान में रहती आई हैं, और दीक्षा लेलेने के पश्चात् तो वे और भी दृढ़तर होगई जिस के फल-स्वरूप आपका जीवन आदर्श और एक प्रकार से निर्विकार (विकार रहित) होगया। इस अवस्था में जनता पर आपका प्रभाव पड़े और आपके व्याख्यान को लोग बड़ी रुचि और चाव से सुनें तथा प्रत्येक सम्प्रदाय के मनुष्यों की उनमें अपार भीड़ होजाय इस में आश्चर्य्य की क्या बात? उपदेश देने से आदर्श दिखाना अधिक उत्तम है और उसी का अच्छा प्रभाव पड़ता है। वैसे तो दुनियां में "पर उपदेश कुशल बहुतेरे, जे आचरहिं ते नर न घनेरे" की कमी नहीं है। किंतु सच्चा सुधारक वही कहा जा सकता है जो पहिले अपना खुद का सुधार करे। अमिट प्रभाव उसीका पड़ सकता है जो अपने शुद्ध आचरण द्वारा अपने व्यक्तिगत जीवन को आदर्श बनाले।

कोई व्यक्ति मदिरा पीकर दूसरों का मदिरा पान नहीं छुड़ा सकता। इसी प्रकार समाज सुधार की भी दशा है। 'खुदरा फ़ज़ीहत दीगरा नसीहत' अथवा 'भट्टजी गुलगुले खावें औरों को पच बतावें' के अनुसार समाज पर उस व्यक्ति का कभी कुछ प्रभाव नहीं पड़ सकता जो सदाचारी न हो। अभिप्राय यह कि चरित्रनायक जी ने सदाचरण के द्वारा पहिले अपना चारित्र विशुद्ध बनाया और फिर समाज सुधार और लोक हित साधन का कार्य्य हाथ में लिया। यही कारण है जो सफलता आपके आगे हाथ बांधे खड़ी रहती है और अपने उपदेश के द्वारा जनता की रुचि को जिधर चाहें मोड़ सकते हैं।

अब पाठक महाशय समझ गये होंगे कि सर्व-साधारण पर आपका इतना प्रभाव कैसे पड़ता है। साधारणतया लोग व्याख्यान की सूक्ष्म तर्क, अकाट्य प्रमाण, गम्भीर गवेषणा ऐतिहासिक और दार्शनिक हेतु के लम्बे चौड़े सम्बन्ध की अपेक्षा सच्चे हृदय से निकले हुए उत्साह और सहानुभूति, आशा और आश्वासन-पूर्ण स्पष्ट वाक्यों से अधिक प्रभावित होते हैं। ये वाक्य अपनी सरलता और स्पष्टता, सुन्दरता और मनोहरता के कारण भी विशेष स्थाई अर्थ रखते हैं। इस शब्द-सागर में जितना गहरा गोता लगाया जाय उस में उतने ही अमूल्य रत्न दृष्टि गोचर होते हैं। उपदेशक की बाहरी सूरत और शब्दावली निःसन्देह बड़े महत्त्व की वस्तु है किन्तु सब से अधिक महत्त्व और मूल्य की वस्तु विषय की आन्तरिक-आत्मा है। सूरत केवल सिक्के की ऊपरी तस्वीर है, असल चीज़ तो धातु है। वह सोना हो या चांदी, रूपा हो, या तांबा।

आप चरित्रनायक जी के उपदेशों पर ध्यान दीजिये। तो मालूम होगा कि वे सदा ऐसी बातों को उठाते हैं जो मनुष्य की सफलता और उत्कृष्टता के लिये परमावश्यक है। वे श्रोताओं को काल्पनिक, पौराणिक दार्शनिक और याज्ञिक विषयों की भूल भुलैयों और ताने बानों में डाल कर उनकी भ्रान्तियों और शङ्काओं की संख्या नहीं बढ़ाते बल्कि, उनके सामने उन विषयों को उपस्थित करते हैं जो प्रत्येक मनुष्य के मानसिक और व्यवहारिक जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक और हित कर हैं और यही कारण है कि आपके उपदेश और बुराइयों को अनुभव कराने वाले और सत्या सत्य विवेकनी शक्ति को तीक्ष्ण करने वाले होते हैं।

आप श्रोताओं से जैसा कुछ करने को कहते हैं उसे स्वयम् भी करते हैं। व्रत उपवासादि रखते हुए भी आप नियम पूर्वक धड़ाके से व्याख्यान देते हैं। प्रत्येक मास में आंबिल व्रत रखना आपका नियम है और जिस दिन आंबिल व्रत करते हैं उस दिन भी आप व्याख्यान अथवा शास्त्र-चर्चा को स्थगित नहीं रखते।

शास्त्रार्थ-शैली।
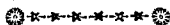
आज कल शास्त्रार्थ का नाम बदनाम होरहा है। जिस प्रकार के उपदेशक और महोपदेशक, शास्त्री और पण्डित, मौलवी और पादरी हैं, उसी प्रकार के शास्त्रार्थ भी होते हैं। यदि आपको दुराग्रह, हठ धर्मी, पक्षपात, साम्प्रदायिक अहङ्कार और अनर्थ का साकार रूप देखना हो तो वर्तमान मतवादियों के शास्त्रार्थ में जाने का कष्ट उठाइये। आप को

ऐसे सकड़ों मौलवी, पंडित और पादरी मिल सकते हैं जिनका पेशा शास्त्रार्थ ही करना है। आजकल शास्त्रार्थ के अर्थ लड़ाई, झगड़ा अथवा वाग्युद्ध समझा जाता है।

किसी समय में शास्त्रार्थ ही सत्यासत्य के निर्णय करने का एक मात्र साधन था। उस समय न समाचार पत्र थे और न यन्त्रालय अर्थात् छापा खाने। आज यदि आपको किसी विषय का निर्णय करना है तो आपको उस विषय के अनेकों ग्रन्थ मिल सकते हैं जिन को पढ़ कर आप प्रत्येक मत और सिद्धांत के सम्बन्ध में अपनी राय क़ायम कर सकते हैं। प्राचीन काल में विद्वानों और पण्डितों को केवल धार्मिक और दार्शनिक विषयों के अनुसन्धान करने का ही मुख्य कार्य था किन्तु, आज उनके लिये अनेकानेक कार्य और व्यवहार उपस्थित होगये हैं। अस्तु।

जिस प्रकार चरित्रनायक जी की वक्तृत्व शक्ति बहुत बढ़ी चढ़ी है इसी प्रकार शास्त्रार्थ शैली भी बड़ी प्रौढ़ है। इसके अनेक कारण हैं जब आप घरबार छोड़कर अपनी आत्मोन्नति और मनुष्य जाति के दुख निवारणार्थ सत्यान्वेषण में प्रवृत हुए तब पहिले आपने भारत के अनेक धर्म्म और सम्प्रदाय के ग्रन्थों का अध्ययन किया और इस प्रकार उस समय के भिन्न २ विचारों और प्रश्नों का ज्ञान प्राप्त कर लिया। आपने अब तक स्वधर्म और पर धर्म के जिन २ ग्रन्थों का अवलोकन किया है उनमें से कुछ यह हैं:—

(१) श्वेताम्बर आम्नाय के आगमः—

१	आचाराङ्गजी	१७	कप्पियाजी
२	सूत्र कृताङ्गजी	१८	कप्पवण सियाजी
३	स्थानाङ्गजी	१६	पुप्फियाजी
४	समवायाङ्गजी	२०	पुप्फ चूलियाजी
५	भगवती जी	२१	वन्हिदशाजी
६	ज्ञाताजी	२२	दशवैकालिकजी
७	उपाशकदशाङ्गजी	२३	उत्तराध्ययन जी
८	अन्तकृतजी	२४	नन्दीजी
६	अणुत्तरोववाई जी	२५	अणुयोगद्वारजी
१०	प्रश्नव्याकरणजी	२६	निशीथजी
११	विपाकजी	२७	व्यवहारजी
१२	उवाई जी	२८	वेदकल्पजी
१३	रायप्रसेणी जी	२६	दशाश्रुत स्कन्धजी
१४	जीवाभिगम जी	३०	आवश्यकजी
१५	प्रज्ञापन्नाजी		
१६	जम्बू द्वीप पन्नति जी		

(२) कर्म्मग्रन्थः—	(३) दिगम्बर आम्नाय के ग्रन्थः—
(१) स्याद्वाद मञ्जरी	(१) गोमट्टसारजी
(२) कल्पसूत्र	(२) पद्मपुराणजी
(३) महानिशीथ।	(३) अष्ट वक्रय

(४) वैष्णव धर्म के ग्रन्थः—(५) संस्कृत के अन्य ग्रन्थः-

(१) यजुर्वेद
(२) श्रीमद्भगवद्गीता
(३) अर्जुन गीता
(४) शिवपुराण
(५) वाराह पुराण
(६) योग वशिष्ट पुराण
(७) पतञ्जली योग
(८) महाभारत

(१) सारस्वत
(२) लघुकौमुदी
(३) अमरकोप
(४) तर्क संग्रह

(६) इस्लाम धर्म के ग्रन्थ

(१) कुरान शरीफ़
(२) हदीस शरीफ़
(३) गुलिस्तां
(४) बोस्तां

एक बात और। आपने गुरुजनों से जो कुछ सुना या पढ़ा उस पर मनन पूर्वक पूर्णतया विचार किया अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से उसकी खूब समालोचना की। आप की दृष्टि में सत्यासत्य का निर्णय करना केवल मानसिक आनन्द अथवा ज्ञान पिपासा ही नहीं है बल्कि यह मनुष्य के सुख दुःख पर असीम प्रभाव डालने वाला अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय है। और परम्परागत अन्ध विश्वासों से अपने को छुड़ा कर आपने स्वतंत्रता निष्पक्षता और शान्ति से सब

बातों पर मनन किया है। इससे भी दूसरों के साथ शास्त्रार्थ ने में आपको बड़ी सहायता मिल सकती है।

आपको मनुष्यों की भूलों और भ्रान्तियों से इतनी सहानुभूति हैं और मानवी निर्बलताओं पर इतनी दया है कि विवादी चाहे जैसा हो, चाहे जैसी ऊट पटांग बातें करे, आप आपे से बाहर होकर उस पर कभी रुष्ट नहीं होते बल्कि उसकी मूर्खता और दुराग्रह को देख कर उस पर और अधिक करुणा करने लगते हैं। अपने सिद्धान्तों की सत्यता में आपको पूर्ण विश्वास है। आप यह भी जानते हैं कि सद्—सिद्धान्त कितनी कठिनता और कितने परिश्रम के पश्चात् प्राप्त होते हैं। अतः आप यह आशा कभी नहीं करते कि मनुष्य सुनते ही मेरे सिद्धान्तों पर विश्वास करने लगेगा।

आप एक सच्चे उपदेशक की भांति तर्क और प्रमाण तथा शान्ति और सहानुभूति द्वारा विरोधियों के विचार पलटने का उद्योग करते हैं। आप जानते हैं कि दुराग्रह पूर्वक विचार परिवर्तन करने का उद्योग करना व्यर्थ है। ऐसा करने से सत्य का निर्णय नहीं होता किंतु विरोधी लोग उलटे ज़िद्दी हो जाते हैं।

सत्यान्वेषण-शक्ति।

बहुत से दयालु हृदय महापुरुष समाज के दुख से दुखी होकर अपनी हार्दिक सहानुभूति प्रगट करके ही मनः सन्तुष्टि कर लिया करते हैं। अनेक अपने अवकाश के समय में स्थिति

को ठीक २ समझने का कुछ प्रयत्न करते हैं और यदि अपने को कोई कष्ट या विशेष असुविधा न हो तो कुछ परोपकार भी करते हैं। चरित्रनायक जी उन थोड़ी सी उच्च आत्माओं में से एक हैं जो मनुष्यों के दुःखों की दशा तक अथवा उसकी तह तक पहुंचने की कोशिश करते हैं। सारे रहस्य को पूरी तरह समझ कर शान्त, निष्पक्ष और गम्भीर भाव से उसके दुख निवारण का उपाय निकालते हैं। और तब अपने सारे जीवन पर अनवरत परिश्रम और अथक उद्योग से उन उपायों को कार्य परिणत करते हैं। चिकित्सा करने के पहिले रोग का निदान जानना चाहिये। अनाड़ी और अशिक्षित वैद्य रोग को और बढ़ा देता है और कभी रोगी का प्राणान्त तक कर देता शरीर एक बड़ा ही पेचीदा यन्त्र है। उसके अंगों को सुधारने के लिये विशेष ज्ञान और अनुभव की आवश्यकत- है। समाज यन्त्र, शरीर यन्त्र की अपेक्षा असंख्य गुणा पेचीदा है। सुख—दुःख, सृष्टि—प्रलय, ईश्वर आत्मा, मृत्यु-जन्म, बन्धन और मोक्ष इत्यादि के प्रश्न और भी गूढ़ और लोगों को हैरान करने वाले हैं। इस से स्पष्ट है कि मनुष्य के दुःख दूर करने वाले को—मनुष्य जाति के सच्चे मार्ग—प्रदर्शक को सत्यान्वेषण की बड़ी भारी ज़रूरत है।

सत्यान्वेषण और सत्य प्रचार की भावना ने ही मुनि महा- राज को संसार से विरक्त किया। दीक्षा लेकर पहिले आपने वह ज्ञान प्राप्त किया जो आपके धर्माचार्यों ने उस समय तका सञ्चित किया था। जो मनुष्य जाति के संचित ज्ञान की सीमा बढ़ाना चाहता हो उसे पहिले पूर्व संचित ज्ञान पर पूर्ण अधि- कार कर लेना चाहिये। जब मुनि महाराज को प्रचलित तत्त्व

ज्ञान से सन्तोप नहीं हुआ तो आप ने स्वयम् गम्भीरता और एकाग्रता से विचार करना आरम्भ किया।

सब से पहिले आपने अपने हृदय में सत्य की महत्वाकांक्षा को जाग्रत किया। जिस के फल—स्वरूप आप के हृदय में सत्य की महिमा का प्रकाश हुआ। सत्योपलब्धि के प्रतिबन्धक कारणों से आपने अपने आपको धीरे २ मुक्त किया। आपको विदित हुआ कि सत्यान्वेषण में प्राचीनता, रूढ़ि जात्याभिमान, अहम्मन्यता हठ—धर्म, लोक—भय, पक्षपातप्रिय अपरिवर्तन शीलता, तथा अन्धविश्वास और अन्धश्रद्धा के बड़े विकट शत्रु हैं। बस फिर क्या था। आपने आत्म-परीक्षा और शुद्ध—तर्क राग-द्वेष विहीनता और स्वतन्त्रता द्वारा इन मानव-निर्बलताओं को परास्त किया और क्रमशः उस महान् सत्य को पा लिया जिस की आप को आकांक्षा थी।

त्याग....शक्ति
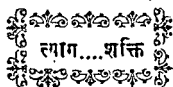
चरित्रनायक जी उन महा पुरुषों में से एक हैं जिन्होंने मनुष्य स्वभाव की नीच प्रवृत्तियों का पूर्णतः नाश कर दिया है। स्वार्थमय प्रवृत्तियों का पूणतः दमन किया है और स्वार्थ रहित श्रेष्ठ प्रवृत्तियों का पूरे तौर पर विकास किया है। सभ्य समाज के प्रत्येक व्यक्ति में जन्म से ही सामाजिक-सहानुभूति का अङ्कुर उत्पन्न हो जाता है। सभ्य मनुष्य समाज के मुख्य आधारों में इस सहानुभूति या प्रेम की भी गणना है। अपने छोटे से बच्चे को प्यार करते समय माता अपने आपको भूल जाती है। आपे की सङ्कुचित सीमा प्रेम—प्रवाह के वेग

से लोप हो जाती है। और वह दूसरे व्यक्ति के व्यक्तित्व को मानों मिला देती है। दूसरे के ऊपर वह आत्मसमर्पण कर देती है। वह परार्थ का—स्वार्थरहित प्रेम का सुख अनुभव करती है और बच्चे को भी प्रकृत प्रेम का पाठ पढ़ाती है।

पिता, भाई, बहिन और सगे सम्बन्धी आदि भी बहुत कुछ इसी प्रकार का व्यवहार करते हैं। इस तरह प्रत्येक व्यक्ति के स्वभाव में कुछ अन्य व्यक्तियों को अपना समझने की, उन के सुख को सुख और दुःख को दुःख मानने की, उन के हानि लाभ को अपना हानि लाभ समझने की प्रवृत्ति जागृत और पुष्ट होती है। जिस प्रकार शरीर की इन्द्रियां शिक्षा और प्रयोग के बल से प्रबल होती और अप्रयोग तथा कुशिक्षा से शिथिल हो जाती हैं, जिस प्रकार मस्तिष्क की शक्तियोँ को बुद्धि, स्मरण, विचार इत्यादि की शिक्षा और प्रयोग पर निर्भर है उसी प्रकार प्रेम या सहानुभूति का यह वाक्य भी सुशिक्षा और सु प्रयोग से उन्नत और विस्तृत होता है। जिस का मन दूसरों की अवस्था की चिन्ता में मग्न रहता है, जो अपनी कल्पना--शक्ति के द्वारा अपने को दूसरों को अवस्था में रख सकता है, जो सहानुभूति के वश होकर दूसरों के दुःख से से दुखित और सुख से आनन्दित—आल्हादित हो जाता है, जिस के सारे भाव और विचार दूसरों की सेवा में मानों स्वभावतः ही लग जाते हैं उस की आत्मा में यह प्रेम पराकाष्ठा को पहुंच जाता है। प्रज्वलित अग्नि घास और कूड़े को जला देती है, स्वयम् सोने को शुद्ध और उज्वल कर अन्य मलिन पदार्थों को भस्म कर देती है। सामाजिक सहानुभूति और प्रेम की प्रचण्ड अग्नि भी मनुष्य—स्वभाव की सात्विक प्रवृत्तियों को नीच प्रवृत्तियों से अलग कर देती है, अर्थात

सात्विक अङ्गों को अधिक शुद्ध और उज्वल कर देती है और तामसिक तथा राजसिक प्रवृत्तियों का नाश कर देती है। यहीं स्वार्थ त्याग है, यही स्वार्थावलम्बन है, और यही सच्चा आत्म-बलिदान है।

चरित्रनायक जी ऐसे ही त्याग और आत्म-बलिदान के ज्वलन्त उदाहरण हैं। आप का जन्म जैसे मध्यम कुटुम्ब में हुआ था उस के अनुसार संसार में रह कर अपने जीवन को आनन्द पूर्वक बिताने के लिये आप के पास सांसारिक-सुख सम्पदा की कोई कमी न थी। स्वार्थमय भोग विलासी प्रकृति का कोई भी मनुष्य आप का सा वैभव पाकर अपने भाग्य को सहस्र वार सराहता और उस के उपयोग को जीवन का प्रथम लक्ष्य बनाता पर जब आपने मनुष्यों को अज्ञान और कष्टों से विहल देखा तथा विरक्ति में ही अपने जीवन की सार्थकता समझी तो आप ने सत्यान्वेषण, सत्य प्रचार और लोक सेवा के लिये अपने जीवन को दीक्षित करने का दृढ़ निश्चय कर लिया।

बस फिर क्या था? सेवा भाव के प्रवाह ने धनसम्पत्ति को ही नहीं, बल्कि जीवन के प्यारे से प्यारे सम्बन्धों को भी छिन्न—भिन्न कर दिया। इस प्रकार स्वाभाविक प्रेम के वेग को आप ने सत्य—सङ्कल्प के आगे विफल मनोरथ होना पड़ा आपने अपनी प्राणों से प्यारी पत्नी को लोक—सेवा की वेदी पर चढ़ा कर उस के प्रति अपने आन्तरिक—अनुराग की आहुति दे डाली। पाठक! देखी आपने चरित्र नायक जी की त्याग—शक्ति?

इस प्रकार आपने अपनी अद्भुत त्याग-शक्ति के द्वारा स्थूल सांसारिक प्रलोभनों से अपनी रक्षा की ही किन्तु, सूक्ष्म प्रलोभनों से भी अपने को बड़ी अच्छी तरह बचाया। अहङ्कार, यश की इच्छा, पैर पुजवाने की इच्छा, अपना नाम अमर करने की इच्छा-यह प्रलोभन, स्वार्थपरता के सूक्ष्म रूप हैं। और बड़े २ सेनापतियों और राज पुरुषों की क्या धर्माचार्यों को भी वश कर लेते हैं। मुनिमहाराज इन सब से परे रहे हैं। आप अपने समय के श्रेष्ठ पुरुष कहे जा सकते हैं। आधुनिक काल में कम से कम जैन श्वेताम्बर-सम्प्रदाय के सर्वोत्तम उपदेशक और सुप्रसिद्ध वक्ता हैं। अहङ्कार तो आप को छू तक न सका। यश की आपको बिलकुल परवा नहीं। आप जिस ढंग से-जिस प्रेम और अनुराग से राजा-महाराजा और सेठ साहूकारों से मिलते हैं, ठीक उसी प्रकार निर्धन गंवारों से। आपको किसी अन्य मतावलम्बी का भोजन निमन्त्रण स्वीकार करने में कभी कोई आना कानी नहीं होती। बनावटी और दिखावटी मान-मर्य्यादा तथा आत्म-गौरव का विचार आप में लेश मात्र भी नहीं है। नैतिक जीवन के जिस क्षेत्र और जल वायु में आप रहते हैं उस में आत्म महिमा का अंकुर जम ही नहीं सकता। जो आपकी निन्दा करते हैं उन पर आप कभी रोष प्रगट नहीं करते-और न उनकी आलोचना ही करते हैं। वल्कि, उनकी अविद्या और नासमझी पर उलटी दया आजाती है। ठीक भी है। जहां आपे का विचार ही मिट गया वहां अपना वैरी कोई हो ही नहीं सकता। लोग आपके व्यक्तित्व पर-आपके आचरण पर, आपके उपदेश पर, आपकी वक्तृता पर और आपके धार्मिक सिद्धान्तों पर रीझ कर भले ही स्तुति करने लगें पर स्वयम्

चरित्रनायक जी ने कभो यह इच्छा नहीं की कि मेरी स्तुति करें।

जनता पर आपके त्याग का बड़ा प्रभाव पड़ा इस प्रश्न का उत्तर भविष्य और जैन-श्वेताम्बर स्थानकवासियों का इतिहास देगा। हमें यहां केवल इतना ही कहना है कि आपका उदाहरण हमारे लिये मार्ग-दर्शक है। जो निःस्वार्थ भाव से समाज की सेवा करता है उसे तुरन्त ही या देर में किन्तु, क़भी न कभी अवश्य ही समाज आदर प्रेम और कृतज्ञता की दृष्टि से देखता है। वह उसका ध्यान करता है, उसके उपदेशों के अनुसार चलने का प्रयत्न करता है और इस प्रकार अपने जीवन को सफल बनाता है। ऋषभदेव, भगवान् महावीर, पार्श्वनाथ आदि महामना के ध्यान मात्र ने लाखों प्राणियों को आकाश में ऊंचा उठाया है। आज भी हम चरित्रनायक जी जैसे श्रेष्ठ महापुरुष के गुण और विशेषतः आत्म-त्याग के चिन्तवन द्वारा अपने को उच्च और पवित्र कर सकते हैं।

ब्रह्मचर्य
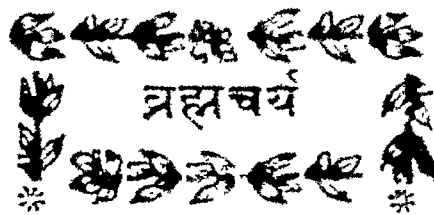
युवा पुरुषों की बात जाने दीजिये। आजकल के वृद्ध पुरुषों तक को जब मृत्यु शय्या पर लेटे हुए भी विवाह की लालसा बनी रहती है। जब रोग, दीनता और अशक्तता के कारण वे अपने जीवन को बड़ी कठिनाई से घसीट २ कर पार लगाते रहते हैं उस दशा में भी उनकी इच्छा बनी रहती है कि विवाह करें। ऐसी दशा में हमारे चरित्रनायक जी का भर जवानी में—यौवन के विकास-काल में अपनी नव-वधू के सौन्दर्य्य और तुच्छ प्रेम में न फंस कर उसको त्याग देना कैसा आश्चर्य जनक है। विवाह के उपरान्त चरित्रनायक जी ने एक बार भी अपनी पत्नी से सहवास नहीं किया, उधर दीक्षा से पहिले और उसके बाद भी आप अखण्ड ब्रह्मचर्य्य और संयम से रहे, ऐसी अवस्था में यदि आपको बाल-ब्रह्मचारी कहें तो भी अनुचित न होगा। आपके ब्रह्मचारी होने का स्पष्ट-प्रमाण आपका शरीर, मुख की कान्ति और प्रबल परिश्रम शीलता है। इस समय वृद्धावस्था के निकट पहुंच जाने पर भी आजकल के नौ जवानों से हज़ार दर्जे बहतर हैं। हम लोगों से आजकल जब घंटे भर के लिये भी भूखे नहीं रहा जाता और एक दिन का उपवास कर लेने पर तो मानों निर्जीव हो जाते हैं। चरित्रनायकजी उपवास, आयम्बिल आदि कठिन व्रत करके निरन्तर समान वेग और परिश्रम पूर्वक

उपदेश व्याख्यानादि देते रहते हैं जब कि श्रोतागणों को कमर और गर्दन केवल श्रवण मात्र को बैठे रह कर भर पेट अवस्था म भी झुक जाती है ।

वर्तमान अवस्था के अतिरिक्त आपके बाल्य काल की भी कितनी ही घटनाएं उल्लेख योग्य हैं। स्थानाभाव के कारण उन सब का वर्णन नहीं किया जा रहा है। चरित्रनायक जी के जीवन पर एक दृष्टि में ही नहीं, इस चरित्र में ही केवल आपके स्वभाव, व्यवहार, कार्य्य और धार्मिक रुचि तथा सिद्धान्तों के साथ आपके जीवन की प्रधान २ घटनाओं का उल्लेख किया गया है। आपके जीवन को लक्ष्य में रख कर विद्वान् ग्रन्थ कार चाहें तो बहुत बड़े ग्रन्थ की रचना कर सकते हैं। यद्यपि इस समय आप वृद्ध हैं तथापि उत्साह वैसा ही बना हुआ है जैसा कि युवावस्था में होता है यह भी आपके बाल-ब्रह्मचारी होने का प्रमाण है। आपका जीवन विद्योपार्जन और धार्म्मिक ज्ञान चर्चा में व्यतीत हुआ और हो रहा है। आज जब नवयुवकों को विवाह होते ही यह उमंग रहती है कि नव वधू आयगी और उसके द्वारा आमोद-प्रमोद होकर हमारा जीवन संसार के अनिर्वचनीय सुख से पूर्ण बन जायगा चरित्रनायक जी ने केवल १७—१८ वर्ष की आयु में संसार से विरक्तता धारण करली और संसारिक भोग-विलास की कल्पना तक न की। आपका पाणि-ग्रहण हुआ यह गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने का आपके लिये निमित्त मात्र है।

हमें इस बात का अभिमान है कि आप जैसे विलक्षण प्रतिभाशाली विद्वान् ने हमारे प्रान्त में जन्म लेकर

सामाजिक और धार्मिक जीवन को उन्नत बनाया है। परमात्मा करें आप सहस्त्रायु होकर हमारी जाति और समाज का इसी प्रकार मुखोज्ज्वल करते रहें।

ग्रन्थ-रचना

आपने अपनी अद्भुत वक्तृत्व शक्ति से तो लोक-सेवा की ही है किन्तु, लेखनी द्वारा भी बहुत कुछ किया है। अभी तक आपने छोटी मोटी अनेक रचनाएं की हैं जिन में से अधिकांश पद्य-बद्ध हैं। अब तक आपकी रचनाएं कुल मिलाकर लगभग ६०००० के छप चुकी हैं। उन में से खास २ की नामावलि नीचे दी जाती है। आपकी कविता बड़ी रोचक, सरल और मधुर तथा सर्व-साधारण के समझने योग्य होती है। उस में किसी सम्प्रदाय विशेष का खण्डन नहीं होता। हिन्दू मुसल-मान सब लोग उसे बड़े चाव से पढ़ते हैं। आपकी बहुत सी रचना अभी अप्रकाशित हैं। होसकता है कि काव्य की दृष्टि से आपकी हिन्दी कविता सदोष हो। किन्तु उसमें से अधि-कांश छन्दोबद्ध न होकर ग़ज़ल आदि के ढंग की होती हैं। उस में भाषा भी प्रचलित होती है जिस में अधिकतर तुक-बन्दी का ही विचार रखा जाता है। सो उसे आप ठीक कर ही लेते हैं। कविता में आप बड़ी ख़ूबी से धार्मिक भावों और समाज सुधार की बातों का समावेश कर देते हैं। साथ ही वह भक्ति और वैराग्य से भी सराबोर होती है। उनको पढ़ने और सुनने से भक्ति ज्ञान और वैराग्य विषयक आपके अगाध पाण्डित्य और अनुभव का स्पष्ट परिचय मिलता है। अपनी रचनाओं में स्थान २ पर आपने मनुष्य जीवन के उद्देश और कर्तव्य पर भी अच्छा प्रकाश डाला है।

एक बुंद पानीकी तसवीर

सिद्ध पदार्थविज्ञान नामकी किताब जो अलहाबाद गवरमेंट प्रेसमें छपी है,
जीसमें केप्टन स्कोर्सबि साहेबने खुर्दबीनसे ३६४५० त्रसजीव. (हिलते फिरते) देखे
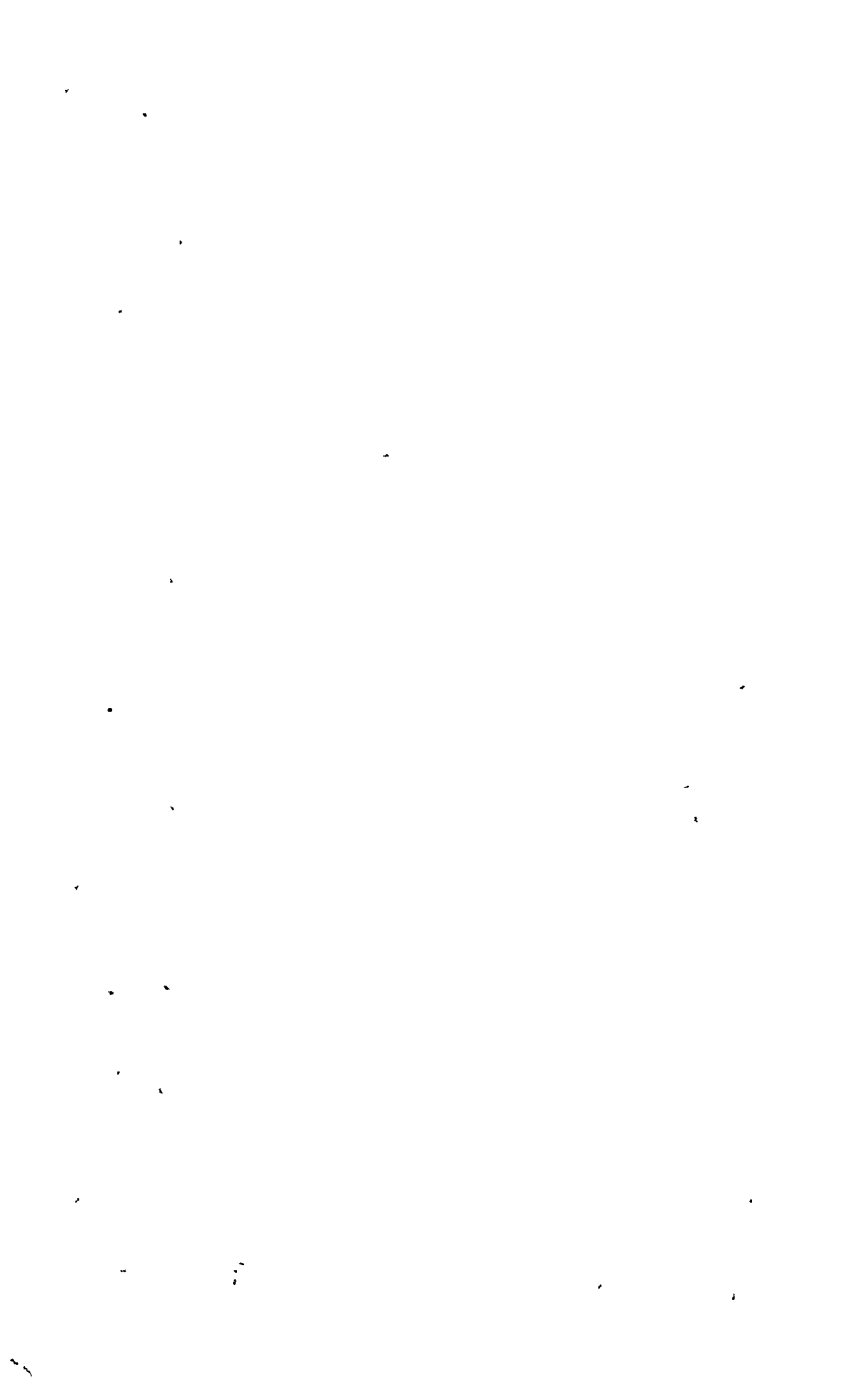
नाम पुस्तक	कितने संस्करण हो चुके	कुल कितनी प्रतियाँ निकल चुकीं
जैन ग़ज़ल बहार	३	३०००
जैन सुख चैन बहार भाग १	४	५०००
" " " २	५	६०००
" " " ३	२	३०००
" " " ४	१	३०००
" " " ५	१	२०००
सीता वनवास	२	३०००
स्त्री शिक्षा भजन संग्रह	३	५०००
संशय सोधन	१	१०००
लावणी संग्रह भाग १	१	२०००
ज्ञान गीत संग्रह	२	२०००
राम मुद्रिका	१	२०००
सीता वनवास अर्थ सहित	१	१०००
जैन ग़ज़ल गुल चमन बहार	४	१४०००

इन में से जैन सुख चैन बहार का तीसरा भाग उज्जैन निवासी राज मान्य ख़ान साहिब सेठ लुक़मान भाई नजरअली जी अपनी तरफ से प्रकाशित कर जनता के अमूल्य भेंट कर चुके हैं। आप इस्लाम धर्म के अनुयायी हैं पर चरित्रनायकजी के उपदेश व कविता पर आपका बड़ा प्रेम है। चरित्रनायक जी का उपदेश सुनकर आप अपने को सौभाग्यशाली समझते हैं। सीतावनवास दिग्दर्शिका (सीतावनवास मूल पर मुनि श्री प्यारचन्द जी महाराज ने प्रिय सुबोधिनी टीका लिखी है।) जिसको सनातन धर्मानुयायी इन्दौरनिवासी कंवरजी रणछोड़ दास नीमाने अपनी तरफ़से प्रकाशितकर जनताके लिये अमूल्य

भेंट की है। आपने चरित्रनायक जी के बहुत उपदेश सुने आप की चरित्रनायकजी पर श्रद्धा है। इन्दौर चतुर्मास की विनती में आपने भी विशेष भाग लिया था तथा वहां जो बकरे मरतेथे उन्हें चरित्रनायकजी के उपदेशसे अधिक व्यय कर बचा लिये।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त आपने अभी तक अनेक काव्य ग्रन्थ लिखे हैं जो नीचे दिये जाते हैं:—

(१) चम्पकसेन काव्य
(२) श्रीपाल काव्य
(३) सीता वनवास काव्य
(४) धन्ना काव्य
(५) अनन्तमति काव्य
(६) वसन्त महाराज
(७) श्रीकृष्ण काव्य
(८) नेमिनाथ काव्य
(९) विक्रम काव्य
(१०) भग्गू काव्य

इनमें से सीता वनवास काव्य मूल तथा अर्थ सहित और श्रीपाल काव्य धनकाव्य चम्पकसैन काव्य व हरिवंल काव्य प्रकाशित हो चुके हैं शेष अप्रकाशित हैं।

दिन चर्य्या

सूर्योदय पर आप प्रति लेखणादि करके शौच कर्म से निवृत्त होते हैं। फिर २—२॥ घन्टे के क़रीब व्याख्यान देकर भोजनादि कर मध्यान्हमें शास्त्रावलोकन और काव्यादि रचना करते हैं। थोड़ी देरके पश्चात् इसे पूराकर आगन्तुक सज्जनोंसे धार्मिक वार्तालाप और अन्य आवश्यक चर्चा शङ्का समाधानादि करते हैं फिर चतुर्थ प्रहरमें प्रति लेखणादि कर शौचादि से निवृत्त हो सूर्यास्त से पहिले २ भोजन कर प्रति क्रमणादि कर पहर भर रात्रि से पहिले २ श्रावकोंको तात्विक ज्ञान ध्यान सिखाना तथा और किसी धार्मिक विषयसे परिचित कराना

आदि के पश्चात् दोपहर रात्रि हो जानेपर शयन कर जाते हैं। चौथे पहरमें निद्रा त्याग कर स्वाध्यायादि कर परमात्म चिंतवन तथा प्रतिक्रमणादि करने को बैठ जाते हैं।

उपसंहार

धर्म, नदी के स्रोत की भांति प्रारम्भमें स्वच्छ और पवित्र होता हुआ भी कालान्तर में अनेक अन्य गुणवाले सहकारी स्रोतों के संगम से या यों कहिए कि अनेक प्रकार के स्वभाव और गुणवाली जातियों को स्वीकार करने के कारण गदला और मैला हो जाता है उसकी आदि निर्मलता नष्ट हो जाती है अतः उस समय उसकी कुछ महान आत्माएं उस धर्म को सुधारने का उद्योग करती हैं।

एक बात और। आदर्श होनेके लिए यह आवश्यक नहीं है कि उसका कुटुम्ब किसी धनाढ्य कुल हो। प्रायः जितनेसाधू महात्मा, योगी-सन्यासी,समाज सुधारक और देशोद्धारक हुए हैं उन्होंने साधारण घरानेमें ही जन्म लिया था। जिस प्रकार वे अपने पुरुषार्थ से धीरे २ आगे बढ़े थे, उसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य कर्तव्य पालन द्वारा अपने जीवन को उच्च और पवित्र बना सकता है और समय पाकर वही महात्मा और परमात्मा बन सकता है।

देखा गया है कि जोलोग धनी होते हैं बहुधा उनके बच्चे आलसी और अकर्मण्य हुआ करते हैं। जिन लोगों को अपने निर्वाह के लिये अन्न जल ढूढ़ना पड़ता है वे प्रायः इतने पर से ही सीख लेते हैं कि किस प्रकार वे अपने जीवनके उच्च आदर्श

को प्राप्त कर सकते हैं। पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर की ओर ध्यान दीजिए तो पता चलेगा, कि उनका किस कष्ट के साथ बाल्यकाल में जीवन निर्वाह होता रहा परन्तु, उसी कष्ट ने उन्हें अपने भावी जीवनके योग्य बना दिया। विद्यासागर ने जितनी समाज सेवा तथा देशसेवा की है वह बड़ी महत्वपूर्ण थी। महात्मा गोखले, वयोवृद्ध दादाभाई नौरोजी आदि जो २ देश के पूजनीय नेता हुए हैं वे प्रायः सब ही निर्धनी थे। तब आश्चर्य्य की बात ही क्या यदि हमारे चरित्रनायकजी ने एक साधारण स्थिति में जीवन ग्रहण कर अपने जीवन को एक उच्च आदर्श तक पहुंचाने में कृतकार्य्यता दिखाई। वास्तव में बात यह है कि निर्धनता द्वारा ही मनुष्य जीवन के असली लक्ष्य को शीघ्रता और सुविधा सहित पासकता है।
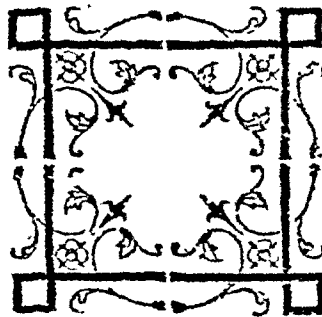
प्रकरण ३६ वां
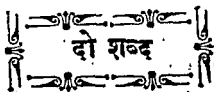
शैल २ माणिक नहीं, मोती गज २ नांहि ।
वन २ में चन्दन नहीं, साधु न सब थल मांहि ॥

मेरे मित्र हों या शत्रु, वे सब सुखी हों, गुणी बनें, दिन प्रतिदिन उनका अभ्युदय और उन्नति हो, सद्बुद्धि की प्रेरणा से वे सन्मार्ग में प्रवृत्त हों । उनके दुख दूर हों सर्वत्र सुख और गुणों का प्रचार देखने में आवे । किं बहुना । जगत में सुख और शान्ति का पूर्ण साम्राज्य स्थापित हो ।

जिन्होंने अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य्य और अपरिग्रह इन पांच महाव्रतों को धारण कर रखा है । जो रात दिन प्रभु अथवा आत्मा का ध्यान करते हुए मन को एकाग्र बना कर समाधि में लीन रहते हैं, संसार के प्रपंची व्यवहारों को जिन्हों ने तिलाञ्जलि देरखी है, स्वयम् संसार को तैर जाते हैं और दूसरों को तिराते हैं । स्वयम शान्ति-सुधा का पान करते और दूसरों को कराते हैं-ऐसे सन्त पुरुष और मुनियों को धन्य है ।

जिन की धर्म पर अटल श्रद्धा है । जिन्हों ने श्रावकों के बारह व्रत अंगीकार किये हैं । कुटुम्ब पालन के लिये व्यवसाय करते हुए भी जो अन्याय और अनीति द्वारा एक पैसा प्राप्त करने के इच्छुक नहीं है ऐसे श्रावकों को धन्य है ।

जो न्याय से उत्पन्न की हुई सम्पत्ति को जमीं में न गाड़ कर-भण्डार में न रख कर उसका सदुपयोग करते हैं- सन्मार्ग में व्यय करते हैं। लोगों को दिखाने के लिये नहीं वल्कि कोई न जान सके इस प्रकार गुप्त-रीति से दानादि कर पुण्य का सञ्चय करते हैं। दीन दुखी और अपंग मनुष्यों को यथेष्ट सहायता देकर उनका दुख मोचन करते हैं ऐसे उदार मनो-दातार भी इस संसार में धन्यवाद के पात्र हैं।

जो सब के साथ भ्रातृभाव रखते हैं-सत्पुरुषों के नीति मार्ग का कभी उल्लंघन नहीं करते अपने कुल के रीति रिवाज और धर्म्म का यथा विधि पालन करते हैं, पग २ पर अधर्म और अनीति का भय रखते हैं। ऐसे सन्मार्ग गामी पुरुषों को जो धार्मिक ग्रन्थों में वर्णित मार्गानुसारी के २१ गुणों से युक्त हैं उन्हें धन्य है।

मनुष्य जन्म वार २ नहीं प्राप्त होता। बड़े पुण्य के उदय से ही यह चिन्तामणि प्राप्त हुआ है। इसका ठीक २ उपयोग करना बुद्धिमानों का कर्तव्य है। जैसे अनादि काल से सूर्य का उदय और अस्त हुआ करता है। वैसे ही यह जीव आत्मा भी इस संसार-चक्र में अनादि काल से जन्म और मृत्यु को प्राप्त हुआ करता है। किन्तु, एक वार मृत्यु ऐसी होनी चाहिये जिस से फिर कभी मृत्यु होने का समय न आवे, और यह वात तो निर्विवाद है कि जीव अकेला आया है और अकेला ही जाने वाला है। माता, पिता, पुत्र स्त्री तथा सारा कुटुम्ब पक्षी के मेले की भांति इकट्ठे हुए हैं। जब अपना २ समय पूरा होगा तव एक के पीछे एक चले जायंगे। इन में किस पर मोह करना और किस पर नहीं। आयुष्य जल के

प्रवाह की भांति बड़ी शीघ्रता से चली जारही है। मनुष्य जानता है कि मैं बड़ा होता हूं, परन्तु यह नहीं जानता है कि आयुष्य कम होरही है। '"शरीरम् व्याधि मन्दिरम्" शरीर रोगों का घर है, ऐसी प्रत्यक्ष दिखाती हुई काया की माया में मोह रखना मनुष्य अज्ञान दशा से ऐसा समझता है-मानता है कि यह मेरा घर, यह मेरी स्त्री, यह मेरा पुत्र और यह मेरी माता, यदि वह तात्त्विक दृष्टि से विचार करे तो उस को विदित होजाय कि यह घर नहीं है, बल्कि क़ैदखाना है। आत्मा का सच्चा घर, सच्ची स्त्री, सच्चा पुत्र और सच्चे माता पिता तो और ही हैं। इन सांसारिक-मनुष्यों के साथ जो सम्बन्ध है वह केवल दुख का देने वाला है। जैसा कि कहा है:—"स्नेह मूलानि दुःखानि", अतः जैसे बने वैसे इस संसार को 'असार' और कुटुम्ब को संसार की जड़ समझ कर संसार से मुक्त होकर पंच महा व्रतों का पालन करना चाहिये और यथा शक्ति ज्ञान-ध्यान, तपस्यादि धर्म्म क्रियाओं में समय व्यतीत करना चाहिये। इस शरीर का कुछ भरोसा नहीं कि कब तक चलेगा? अतः शुभ कार्यों के करने में, जितनी शीघ्रता की जाय अच्छा है।

प्रकरण ३० वां ।
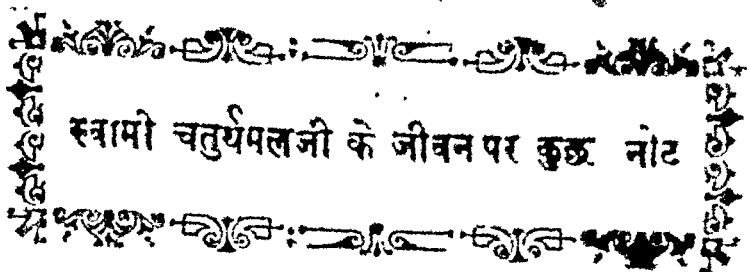
स्वामी चतुर्थमलजी के जीवन पर कुछ नोट

(ले० श्रीयुत् अध्यापक श्रीनाथ मोदी सादड़ी मारवाड़)

आपके व्याख्यान की भाषा बड़ी सरस, रसीली और हृदयग्राही होती है। जिसके भाव बड़े सरल और जोशीले होते हैं। स्वामी जी की अनुपम विचार-शक्ति, प्रखर बुद्धि और चमत्कारी प्रतिभा से सब श्रोताओं का मन चकित और स्तम्भित हो जाता है। इसका अनुभव वही कर सके हैं जिन्हें स्वामी जी के उपदेशामृत पान करने का अवसर मिला है। आपकी वाक् पटुता का प्रभाव लोगों पर क्यों न हो जब आप एक आदर्श जननी के सुपुत्र हैं। माता पर ही सन्तान के भले बुरे आचरण निर्भर हुआ करते हैं। आपकी माता ने आपके बड़े भाई की मृत्यु पर अतुलनीय धैर्य्य का परिचय दिया था। अबला का ऐसा धैर्य्य अत्यन्त आश्चर्य-दायक होता है। क्योंकि भारतवर्ष में अत्यन्त स्नेह की मात्रा बढ़ी हुई है।

चौथमल जी की साधु होने की बड़ी लालसा थी। हत-भाग्य भारतवर्ष में जिस युवावस्था के समय हमारे देश के नव युवकों को भोग विलास के अतिरिक्त और कुछ नहीं सूझता

वहां हमारे चरित्रनायक जी को तरुणावस्था में भी सांसारिक-सुख का कुछ विचार न हुआ। आपने शीघ्र ही सांसारिक-माया से मोह हटा लिया। और आपकी साधु बन जाने की चेष्टा दृढ़ होगई फिर क्या था आपने सब सुख चैन को लात मार कर साधु बनने की प्रतिज्ञा की।

स्वसुर आदि किसी आत्मीय के विरोध से आप विचलित न हुए। अन्त में दृढ़ निश्चय ने ही विजय पाई पहिली वक्तृता से ही आपकी ख्याति हो चली। सब पर सिक्का जम गया। अलौकिक वक्तृत्व-शक्ति, उत्तम विचार शैली और सुमधुर वार्तालाप के द्वारा आपने सब के मन को अपनी ओर आकर्षित कर लिया। आपके व्याख्यान में प्रत्येक स्थान पर लोगों की बेहद भीड़ होती है और बड़ा प्रभाव पड़ता है। इस समय प्रान्त भर में जिधर देखिये उधर ही आपकी वक्तृता की धूम मची हुई है। आप एक सुयोग्य मुनि और महान् वक्ता हैं। जहां जाते हैं वहीं दूर २ की जनता और अनेक सभा-संस्था स्वामी जी को व्याख्यान देने के लिये बुलाती हैं। सच है, राजा का मान केवल अपने ही राज्य में होता है पर विद्वान् का सर्वत्र। आपको स्थान २ पर अभिनन्दन पत्रों से सम्मानित किया जाता है। किन्तु, ये ऐसे अलौकिक गुण नहीं जो अन्य व्यक्तियों में न हों। भगवन् कृपा से भारतवर्ष में स्वामी जी के समान और भी अच्छे २ पुरुष विद्यमान हैं। वक्ता और कवियों का अभाव नहीं है। पर विशेष प्रभाव होने का कारण केवल आपका हृदय है। आपके हृदय में सभी के प्रति प्रेम भरा हुआ है और सब से आप हार्दिक सहानुभूति रखते हैं। गुरु भक्ति

का स्रोत आपके हृदय में कितना बह रहा है इसका पता उन तमाम काव्यों की पिछली दो पंक्तियों से ज्ञात होता है जोकि स्वामी जी ने रचे हैं। दया और प्रेम के अतिरिक्त स्वामी जी में और भी भारी गुण हैं अर्थात् त्याग और वैराग्य की आप सजीव एवम् ज्वलन्त मूर्ति हैं।

कान्फ्रैन्स प्रकाश अंक ६ सन १९१७ के पृष्ठ ८ पर श्रीमान् जवैर चंद जादव जी सम्पादक प्रकाश अपने हर्ष और धर्म लाभ शीर्षक लेख में निम्न प्रशंसात्मक शब्द चरित्रनायक जी के विषय में लिखते हैं।

हर्ष और धर्मलाभ

मैंने अजमेर श्री० मुनि महाराज श्री चौथमल जी के दर्शन किये, आपके दर्शन से मुझे बड़ा भारी लाभ हुआ. आप की शांत मुद्रा के दर्शन से मुझे जो लाभ हुआ मेरे हृदय में जो शुद्ध भावों का प्रचार हुआ उसका वही सज्जन अनुमान कर सकते हैं जो कि गुण ग्राहकता रखते हुए, कल्याण चाहते हुए संसार ध्यान नाशक ज्ञान प्रकाशक हितोपदेशक राग रहित महानुभाव के धारक श्री मुनि महाराज के दर्शन करते हैं तथा उनसे उपदेशामृत पान करते हैं श्री महाराज ने मुझे जो उपदेशामृत पिलाया है तथा उसमें मुझे जो लाभ हुआ है उसे मैं कभी नहीं भूलूंगा तथा उन्होंने जो मुझे मेरे कर्म विषय पर जो धार्मिकोचित शिक्षा दी इसलिए उनका विशेष आभारी हूं और आशा रखता हूँ कि श्री महाराज के उपदेशामृत यथासमय पान करता रहूँगा और सच्चे हृदय से चाहता हूं कि श्री महाराज के दर्शन और उपदेश श्रवण का सौभाग्य श्री महाराज की कृपा से वारम्वार मिलता रहे

—सम्पादक

महाराज श्री की सेवा में एक युरोपियन एफ० जी० टेलर साहिब जो एक प्रसिद्ध विद्वान धर्मप्रेमी सज्जन हैं जो कई वर्षों तक चित्तोड़ में अफीम के महकमे पर आफिसर रह चुके हैं उनकी तरफ से कई पत्र आये थे उनमें से सिर्फ एक हिंदी पत्र व अंग्रेज़ी पत्र अक्षरशः नमूनार्थ नीचे उद्धृत किया जाता है।

महाराज को यह मेरी तरफ से कह देना के अभी तक मुजको कुछ नज़र नहीं पड़ा है। सारा सन्सार अन्धकार ही है महाराज को कुछ चीन रोशनी दीख रही है—

उसके इशारे से उनका दिल को खबर पड़ गया मुझको अन्देरे से टाटोलना आय कुछ फैदा नहीं:-आगे करम का होवनहार मुझको अभी तक बहोत रनज होता है के महाराज के दर्शन चीटोर छोड़ने के वक्त नहीं हुआ × शायद मेरा नसीब फीर खुले तो मैं इनके कदम मुबारीप को छुवो-आपका दरम दोसत +; आपको और सब जैन भाईओं को मेरा सलाम और महाराज को मेरे दस्तबन्दे सलाम। एफ. जी. टेलर

7th Aug. Durgah House, AJMER,

Dear Shiri Maharaj Chothmullji Swami. It is a long time scince we had any news of your & yours desciples. We heard from Bhilwara your moonsoon is being I spent at Beawar this year & write to Convey our remembrance the distance is not for and we hope to renew our old friendship-if an opportunity occurs. We hope the desciples you took with your fold at Bhilwara are doing good work. I am here on pension no work has turned up for me-such are the "fates" !!

Meer Sahib Joins me in respectful salaams to you and all the Swamijis. Yours Sincerly, F. G. TAYLOR

प्रकरण ३८ वां

शिष्य गण परिचय
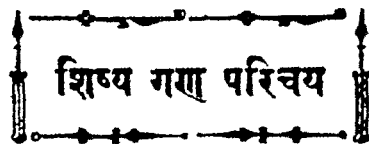
पृथ्वीराज जी महाराज—की दीक्षा सम्वत् १९५८ के आषाढ़ में कुकड़ेश्वर हुई। निवास स्थान कुकड़ेश्वर। ८ वर्ष ५ मास की आयु में दीक्षा हुई। आप जैन सिद्धान्त के ज्ञाता हैं और व्याख्यान शैली आपकी बड़ी मनोहर है। आपको कविता करने का भी शौक़ और अभ्यास है। संस्कृत में-सारस्वत और लघु-कौमुदी के ज्ञाता हैं। आप चरित्र-नायक जी के जेष्ठ शिष्य हैं। आपने हिन्दी भाषा में भी कुछ रचना की है। एक "मनोहर पुष्पमाला" नामक पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है, और "अष्टादश नाते का दिग्दर्शन" अप्रकाशित है।

हुक्मीचन्द जी महाराज—की दीक्षा सम्वत् १९५९ के अगहन सुदि १ को नीमच में हुई। आपका नीवास स्थान नीमचही है। १५ वर्ष की आयु में आपकी दीक्षा हुई। आप

को जैन सूत्रों के रहस्य तथा द्रव्यानुयोग का अच्छा बोध है। आप ओस वंश के हैं। व्याख्यान भी आपका अच्छा होता है।

ठाकुरलाल जी महाराज—जाति के राजपूत हैं। आप को १५ वर्षकी आयु में डूंगरे में सम्वत्१९६१ की वैशाख सुदि ८ को दीक्षा हुई थी। आप का निवास स्थान घरियाचद मुंगाणा है। जैन सिद्धान्त के अतिरिक्त आप को कुछ जैनेतर सिद्धान्त का भी परिचय है। व्याख्यान शैली आप की मनोहर है। संस्कृत में सारस्वत चन्द्रिका, लघुकौमुदी, सिद्धान्त कौमुदी, वाग्भट्टालङ्कार, नेमिनिर्वाण तथा अन्य काव्यादि का भी आपको बोध है आपके लेख काव्यादि संस्कृत और हिन्दी के साम्प्रदायिक पत्रों में निकला करते हैं। अपनी विद्वत्ता के कारण आप "पण्डित" की उपाधि से अलंकृत हो चुके हैं। हिन्दी में आपने कई ग्रन्थों की रचना की है एक पद्यात्मक "मुख वस्त्रिका निर्णय" प्रकाशित हो चुकी है और दूसरी गद्यात्मक "मुख वस्त्रिका निर्णय" जो अप्रका-

शित है। यह लगभग ५०० पृष्ठ का स्थूल ग्रन्थ है।

कजोड़ीमलजी महाराज—जाति के ओसवाल वहुतरे, आप को २८ वर्ष की अवस्था में मन्दसौर नगर में सम्वत् १९६४ के मार्गशीर्ष में दीक्षा हुई। आप का निवास स्थान मणांसा (इन्दोर स्टेट) है। जैन सिद्धान्त तथा द्रव्यानुयोग के ज्ञाता थे।

किशनलालजी महाराज—जाति के ब्राह्मण थे। आप का निवास स्थान उदयपुर था। सम्वत् १९६९ की भाद्रपद शुक्ला ५ को २५ वर्ष की अवस्था में आप की वड़ी सादड़ी में दीक्षा हुई थी। आप विद्या जिज्ञासु थे।

छगनलालजी महाराज—जाति के बीसे पोरवाड़ हैं। आप का निवास स्थान मन्दसौर है। १४ वर्ष की अवस्था में सम्वत् १९६७ के अघहन सुदि १० को आप को करजू में दीक्षा हुई। आप को जैन-सिद्धान्त का अच्छा परिचय है। इस के अतिरिक्त आप जैनेत्तर सिद्धान्त के भी ज्ञाता हैं। संस्कृत

में लघु कौमुदी, सिद्धान्तकौमुदी, तर्क न्यायदीपिका, वाग्भटालङ्कार, नेमिनिर्वाण तथा मेघदूत काव्यादि के ज्ञाता हैं, व्याख्यान मनोहर देते हैं। आप की उच्चारण शैली बड़ी शुद्ध व स्पष्ट है। संस्कृत हिन्दी के साम्प्रदायिक पत्रों में आप के लेखादि भी छपते रहते हैं।

चांदमलजी महाराज—जाति के ओसवाल। आप का निवास स्थान भिलवाड़ा है। वहां पर १४ वर्ष की अवस्था में सम्वत् १९६७ के ज्येष्ट में आप को दीक्षा हुई। आप विद्या जिज्ञासु और जैन सिद्धान्त का भी आप को कुछ परिचय था।

चम्पालालजी महाराज—जाति के ओसवाल हैं। आप का निवास स्थान ताल है। १८ वर्षकी अवस्था में सम्वत् १९६९ की मार्गशीर्ष वदि ४ को रतलाम में आप को दीक्षा हुई। आप को जैनसिद्धान्त से कुछ परिचय है, और कविता करने का भी शौक़ है। समय २ पर धार्मिक पत्रों में आप की कविता प्रकाशित होती रहती है

आप विद्या जिज्ञासु और व्याख्याता हैं। श्री पृथ्वीराज जी महाराज (चरित्रनायक जी के शिष्य) ने जो "अष्टादश नाता दिग्दर्शन" नामक ग्रन्थ की रचना की है, उसमें आप ने भी कुछ सहायता दी है।

प्यारचन्द जी महाराज – जाति के वहुतरे ओसवाल हैं आप का निवास स्थान रतलाम है। १७ वर्ष की अवस्था में फाल्गुण शुक्ला ५ संवत् १९६९ में आपको चित्तौड़ गढ़ में दीक्षा हुई। आप को जैन-सिद्धान्त, द्रव्यानुयोग और साथ ही अजैन सिद्धांतों का भी परिचय है। संस्कृत में आपने लघुकौमुदी सिद्धान्त कौमुदी तथा कोष ग्रन्थों में अमरकोष तथा हेमिनाम माला का, तर्कशास्त्र में तर्कसंग्रह और न्याय दीपिका का, तथा काव्य ग्रन्थों में नेमि निर्वाण और मेघदूत का, पिंगल ग्रन्थों में श्रुत बोध आदि का, अलङ्कार में वाग्भटालङ्कार आदि का अध्ययन किया है। संस्कृत और हिन्दी भाषा में आप के श्लोक और लेखादि भी प्रकाशित होते रहते हैं। प्राकृत

भाषा का भी आप को व्याकरण सहित अच्छा ज्ञान है। ग्रन्थरचना का भी शाक़ है। हिन्दी साहित्य में भी आपकी गति है। आपने जो पुस्तकें रचीं उनके नाम ये हैं:-

गुरु गुण महिमा (हिन्दी) इस पुस्तिका के अब तक ८ संस्करण हुए हैं । १० हजार प्रतियां निकल चुकी हैं।

महावीर स्तोत्र (हिन्दी) इस स्तोत्र का आपने प्राकृत से संस्कृत में अनुवाद और शब्दार्थ, भावार्थ तथा अन्वय अर्थ किया है। इसकी २००० प्रतियां निकल चुकी हैं।

सीता वनवास और राममुदिका (हिन्दी) इन दोनों पुस्तकों की आप ने बड़ी प्रिय सुबोधनी व्याख्या की है । और भी नीचे लिखे ग्रन्थों का आपने प्राकृत में संशोधन किया है, इन सब की १-२ हजार प्रतियां निकली हैं:—

(१) दशवैकालिक सूत्र

(२) सुख विपाक

(३) नमीराय जी

(४) पुच्छी सुणा

चरित्रनायक महोदय की स्तवन रचना का अधिकांश संशोधन कार्य आपने ही किया है। आपको जब से दीक्षा हुई है, गुरु महाराज प्रायः अपने साथ ही रखते हैं और समय २ पर प्रत्येक कार्य्य के लिये अनुमति लिया करते हैं। आपकी व्याख्यान शैली भी अच्छी है। जिस विषय को लेंगे उसको बड़ा खूबी से समाप्त करेंगे। आपकी गुरु भक्ति, मिलनसारी, सज्जनता और मृदुभाषिता सराहनीय है।

भैरवलाल जी महाराज—जाति के ओसवाल सूरिया हैं। आप को २५ वर्ष की अवस्था में रतलाम नगर में सम्वत् १९७५ के ज्येष्ठ में दीक्षा हुई। आपका निवास स्थान कोसीथल (मेवाड़) है। आपको जैन सिद्धान्तों का कुछ परिचय है, और आप विद्या जिज्ञासु हैं।

वृद्धिचन्द जी महाराज—जाति के ओसवाल हैं। आपका निवास स्थान बड़ी सादड़ी (मेवाड़) है। आपको २३ वर्ष की अवस्था में सम्वत् १९७७ की अगहन वदि ८ के दिन जोधपुर में दीक्षा हुई। आपको द्रव्यानुयोग का परिचय है। और गान विद्या के भी ज्ञाता हैं। विद्या जिज्ञासु हैं।

नाथूलाल जी महाराज—जाति के चौसे ओसवाल हैं। आपका निवास स्थान जोधपुर है।

आपको १६ वर्ष की आयु में पेट-लावद में मगसर सुदि १५ सम्वत

१६७८ को दीक्षा हुई आप विद्या-जिज्ञासु हैं ।

रामलाल जी महाराज—जाति के बीसे ओसवाल-आपका निवास स्थान जोधपुर महा मन्दिर का है । आपको १४ वर्ष की आयु में सम्वत् १६७६ की चैत्र सुदि १ को दीक्षा हुई । आप विद्या जिज्ञासु और गान विद्या की कला से परिचित हैं ।

सन्तोषचन्दजी महाराज—जाति के बीसे ओसवाल । आपका निवास स्थान रतलाम है । ३३ वर्ष की अवस्था में आपको सम्वत् १६७६ की कार्तिक वदि ७ को उज्जैनमें दीक्षा हुई । आप विद्याजिज्ञासुऔर व्यावच्चो (फ़रमांवरदार)

नन्दलाल जी महाराज—जाति के भटेवरा हैं । निवास स्थान इन्दौर । २४ वर्ष की आयुमें वहाँपर सं०१६८०की कार्तिकशुक्ला ७ को दीक्षा हुई । विद्याजिज्ञासु

रतनलाल जी महाराज—जाति के बीसे पोरवाड़ निवास स्थान मन्दसौर । सम्वत् १६८१ की चैत्र शुक्ला १३ को भीलवाड़े में आप का दीक्षा हुई । उस समय आपकी अवस्था ४५ वर्ष की थी । विद्या-जिज्ञासु ।

केवलचन्द जी महाराज—आप का निवास स्थान कोसिथल (मेवाड़) का है ११ वर्ष की आयु में संवत् १९८२ फागुन शुक्ला ३ को व्यावर में दीक्षा हुई।

बक्तावरमल जी महाराज—आपका निवास स्थान कोसिथल (मेवाड़) का है। ९॥ वर्ष की आयु में सम्वत् १९८२ फागुन शुक्ला ३ को व्यावर में दीक्षा हुई।

(नोट) उपयुक्त शिष्य गणों में—छगनलाल जी मगनलाल जी दोनों भ्राता हैं तथा प्यारचन्द जी व चांदमल जी भी सगे भ्राता हैं। और नाथूलाल जी रामलाल जी भी सगेभ्राता हैं। और केवलचन्द जी महाराज बक्तावरमल जी महाराज सगे भ्राता हैं।

पौत्र शिष्य।

चांदमल जी महाराज—जाति के ओसवाल बहुतरे आपका निवास स्थान रतलाम है। १८ वर्ष की आयु में वहीं पर आपको कार्तिक शुक्ल ७ सम्वत् १९७८ को दीक्षा हुई। विद्या जिज्ञासु तथा व्यावच्ची (फ़रमांबरदार)

मगनमल जी महाराज—जाति के पोरवाड़ हैं । आपका निवास स्थान इन्दौर है। १४ वर्ष की आयु में सम्वत् १६७६ की कार्तिक वदि ७ " दिन आपको उज्जैन में दीक्षा हुई ।

राजमल जी महाराज—जाति के वीसे ओसवाल हैं। आपका निवास स्थान जूनियां—(अजमेर) है। सम्वत् १६८१ में चैत्र शुक्ला १३ को भीलवाड़े में ३२ वर्ष की अवस्था में दीक्षा हुई। आप बड़े विद्या जिज्ञासु हैं।

परिशिष्ट ।

प्रकरण १ ला

प्रशस्ति के श्लोक और कवितादि

॥ शिखरिणीवृत्त ॥

शुभे वर्षे सिन्धु-त्रि-निधि-कु-मिते विक्रमरवे-
स्त्रयोदश्यामूर्जेऽधृत सितदले जन्म किल यः।
चतुर्थाभिख्योऽयं मुनिरिह चतुर्थे सतियुगे,
चतुर्थस्य द्वारं विघटयतु वर्गस्य भविनाम् ॥१॥

जिन्हों ने विक्रमार्क के १९३४ वे वर्ष में कार्तिक शुक्ला १३ को जन्म लिया, वे चतुर्थ नामक मुनि इस शुभ चतुर्थ (कलि) युग में संसारियों के लिये चौथे वर्ग (मोक्ष) के लिये द्वार खोलें ॥ १ ॥

गिरं हिन्दीं बाल्ये वयसि यवनानीमपि लिपिम्
पठित्वेंग्लिश्चुं चु समजनि च पारस्यकचणः ।
अनेकाभिर्भाषाभिरिति हि तदा य परिचितोऽ-
प्यारांजीदेकोक्तिः प्रणमत चतुर्थं मुनिममुम् ॥२

जिन्हों ने बचपन में हिन्दी, उर्दू पढ़कर इंगलिश और फारसी में जानकारी प्राप्त की। इस प्रकार इस समय अनेक भाषाओं से परिचित होकर भी एक ही जबान के कहने वाले शोभित हैं ऐसे इन चतुर्थ मुनि को प्रणाम करें ॥ २ ॥

कृतोत्कर्षे वर्षे निजजननतः षोडश इतेऽ-
ग्रहदुन्यां कन्यां सलिलनिधिकन्यामिव पराम्
उपेतायामष्टादशशरदि तुर्ये युग इह;
जयंस्तुर्यौमल्लः स्मरमपि यथार्थाख्यमकरोत्॥३

अपने जन्म से उत्कर्ष जनक १६ वे वर्ष के पाने पर इन्हों ने दूसरी लक्ष्मी के समान एक धन्य कन्या को ब्याहा १८ वें वर्ष के पाने पर तो इस चौथे युग में कामदेव को जीतते हुए इन्हों ने स्मर को यथार्थ नाम बनादिया अर्थात् (स्मरतीति स्मरः) याद रखने वाला बनादिया ॥ ३ ॥

यथा मेनावत्या व्रत-नियमवत्याऽधिगमितो
मतिं गोपीचन्द्रो मृदुवयसि चन्द्रोपमयशाः।
तथा बोधं मात्राऽध्यगमि पलमात्राद्रहसि य-
श्चतुर्थोऽयंमल्लो जयति मुनिमल्लोऽत्र भुवने ॥४

जिस प्रकार व्रत-नियम वाली मेनावति से चन्द्र के समान, यशवाला गोपीचन्द्र बोध को प्राप्त किया गया उसी प्रकार

एकान्त में जो (मुनिराज) पल भर में माता से बोध को प्राप्त किये गये । ये चतुर्थ मुनि इस लोक में बढ़े चढ़े हैं ॥ ४ ॥

अथाब्दे दृग्-बाण-ग्रह-कुघटिते विक्रमरवे,
स्वयं स्त्रीदृग्-बाण-ग्रह-कुघटितस्तुर्यमुनिराट् ।
तपस्ये संशुद्धे सुविशद-तपस्योन्मुखमति-
स्तृतीयायां दीक्षामधरत तृतीयाश्रमिकवत् ॥ ५

तदनन्तर विक्रमार्क के १९५२ वे वर्ष में स्त्रियों के कटाक्ष रूप बाण के विंधन से बच कर इन चतुर्थ मुनिने उज्ज्वल तपस्या करने की इच्छा से वानप्रस्थ के समान फाल्गुन शुक्ला ३ को दीक्षा लेली ॥ ५ ॥

गुरून्हीरालालान् यम-नियमपालान् परिचर-
न्नरन्ध्यानं ज्ञानं समलभत मानं च मुनिषु ।
यथा मेघो धीरं स्थलमुभति नीरं च सदृशम्
तथाऽसौ व्याख्यानं घटयति समानं सतिजडे ॥ ६

यम और नियमों का पालन करने वाले अपने गुरु मुनिश्री हीरालालजी महाराज की सेवा करते हुए इन्हों ने ज्ञान ध्यान प्राप्त किया और इसी से मुनियों में मान प्राप्त किया । जिस प्रकार मेघ जल-प्रदेश और स्थल प्रदेश में समान बर-

सता है। इसी प्रकार ये मुनि भी बुद्धिमान् और मूर्ख पर समान अपने व्याख्यान का प्रभाव डालते हैं ॥ ६ ॥

यदास्याऽब्ज-स्यन्नं मधुरिम-प्रपन्नं प्रकटितं,
प्रभावं व्याख्यानं सुमरस-समान रसयितुम्
समुद्भूतासङ्गा नर-नृपति-भृंगा अभिमतान्,
सुरान् संयाचन्ते प्रथमतरमन्ते च तृषिताः ॥७॥

इनके मुख कमल से उत्पन्न हुए प्रभाव जनक मधुर व्याख्यान का पान करने के लिये मनुष्य और राजा रूप भौंरे (जो कि समुद्भूता संगा पहले मजा लूट चुके) व्याख्यान के पहले और अन्त में भी प्यासे के प्यासे अपने इष्ट देवों की प्रार्थना करते हैं कि फिर भी हमें यह सौभाग्य प्राप्त हो ॥ ७ ॥

प्रभाविव्याख्यानामृतरसनिधानाय दशन-
द्युतिज्योत्स्ना भाजे विबुध-भ-समाजेद्धरुचये
यदस्यैणाङ्कायाऽतुलसुख-निकायाय नितरां
सभा चक्षुश्चौरः क्षितिपति चकोरः स्पृहयति ॥८

प्रभावशाली व्याख्यान रूप अमृत रसका निधान, दांतों की कांति रूप चन्द्रिका वाले, विद्वान् रूप नक्षत्रों के समाज में चमकने वाले, अद्भुत सुख के स्थान जिनके मुख रूप चन्द्रमा

को ससा कि आंखें चुराने वाले राजा रूप चकोर पसन्द करते हैं ॥ ८ ॥

गतामर्षो मर्षेण च जनित हर्षेण सहितः-
समायो निमायो विदधदसमा योगरचनाः ।
स्वमुक्त्यै यस्तृष्णा दधदपि च तृष्णां परिजहः
च्चतुर्थः सन्मानो मुनिरयममानो विजयते ॥ ९

क्रोध रहित और हर्ष जनक क्षमा से सहित माया रहित कठिन योग को दिखा रहे हैं । तथा तृष्णा छोडने पर भी मुक्ति के लिये तृष्णा रखते हैं । और मान (आदर) युक्त होने पर भी मान (अभिमान) रहित हैं । ऐसे मुनि चतुर्थमल्ल जी महाराज की सदा जय हो ॥ ९ ॥

भवदीय

आशुकवि पण्डित नित्यानन्द शास्त्री

योद्धपुर (मारवाड)

शार्दूलविक्रीडितम्

धन्येयं वसतिर्नवीननगराख्याति: पवित्रीकृ-
तामोहोऽस्तोकतमोऽपसारणकरैस्तीर्थीकृता
साधुभिमन्नालालसुपूज्यविष्टरसभाप्रद्योतकाः

साधवो राजन्ते किल यत्र संप्रति मुनिश्री
चौथमल्लाभिधाः ॥ १ ॥

मोह रूप घने अन्धकार को मिटाने वाले साधुओं से पवित्र कीगई तीर्थी बनाई गई नयेशहर की वसती तुम्हें धन्य है जिस जगह अभी पूज्यश्री मुन्नालाल जी महाराज की आसन (गादी) को दिपाने वाले मुनि श्री चौथमल जी महाराज विराजमान हैं ॥ १ ॥

धन्याभारत भूरसौ त्रिभुवने देवालय स्पर्धिनी
यस्यां जंगमपारिजातकतरुस्तुर्यापदेशान्नु,
यस्यानातपसेविनां विचरतः सौख्यं भवत्यक्षत
सोऽयं नस्तनुतादभीष्टनिचयं श्रेयः पथं दर्शयम्.

तीनों जगत में यह भारत भूमी धन्य है जिस में मुनि श्री चौथमल जी महाराज के मिष से जंगम कल्पवृक्ष शोभायमान है, चलते फिरते जिस कल्पवृक्ष की छाया में रहने वालों को अक्षीण सुख मिलता है, वे ये मुनि श्री चौथमल जी महाराज कल्याण का मार्ग बतलाते हुए हमारे मनोरथों को सफल . ते रहते हैं ॥ २ ॥

॥ शिखरिणी ॥

अशक्यं स्तोतुं ते निखिलगुणवृन्दं मुनिवरैः-
कथंकारं स्तुत्योजलधिगहनः स्वल्प मतिना ।

त्रिलोकीवन्द्यानां तदपि कृपया पादरजसा,
चतुर्धासंघानां सदसि नुतिलेशं नु विदधे ॥३

हे मुनिवर ! आपका सारा गुणगण मुनिवरों से भी सराहा नहीं जा सकता तो मुझ अल्प बुद्धि से समुद्र समान गम्भीर आपकी स्तुति कैसे बन पड़े। तथापि त्रिजगत के वन्दनीय प्रभुवरों के चरणरज की कृपा से चतुर्विध संघ की सभा में कुछ स्तुति लेश करता हूं ॥ ३ ॥

उपजाति ।

सतीं समृद्धि परिहाय धीमान्,
सालं क्रियां चित्तविरक्ति भावात् ।
रत्नत्रयालंकृति भूषितांग,
प्राप्तो किं तामविनाशिनी च ॥४॥

जो बुद्धिमान चितकी विरक्ति के कारण भूषणों सहित अच्छी समृद्धि को त्याग करके तीनों ज्ञान दर्शन चारित्र रूप भूषणों से भूषित होकर क्या उस अविनाशिनी समृद्धि को नहीं प्राप्त हुए अर्थात् अवश्य ॥ ४ ॥

तपः प्रतोदेन जितैन्द्रियाश्वः,
चतुष्कषायेन्धन दाह दावः ।

पञ्चाननः कर्म करीन्द्रयूथे,

जीव्याच्चिरं श्रीमुनिचौथमल्लः ॥५॥

जो तप रूप चाबुक से इन्द्रिय रूप घोड़ोंको काबू किया। और कषायों रूप ईंधन के जलाने में दावाग्नि का काम कर रहे हैं। और कर्म रूप हाथियों के समूह में सिंहरूप है, ये मुनि श्री चौथमल जी महाराज समाजोन्नति सदैव करते रहें ॥ ५ ॥

तोटकवृत्तम् ।

मुनिराज ! विराजित शांतितनो,

समसङ्घ सरोज विकासरवे ! ।

वचनामृत हर्षितसभ्यजन ?,

जय जैन दिवाकर ? तुर्यमल्ल ! ॥ ६ ॥

जिनके मुंह पर शान्ति झलक रही हैं, जो चतुर्विध संघ रूप कमल के विकासन में सूर्य हैं, जिन्हों ने वचन रूप अमृत से सभ्यजनों को प्रसन्न कर रखे हैं, जो जैनों में सूर्य रूप हैं, ऐसे मुनि श्रीचौथमलजी महाराज की सदा जय हो ॥६॥

जिन शासनदक्ष विशुद्धमते,

भवदीय पदाम्बुजकोपदले ।

रचना तनुबोध विहारि कृता,
निहिता भ्रमरोऽस्त्रियमाव हतात् ॥ ७ ॥

जैन शासन में जिन्हों ने अपनी शुद्ध बुद्धि लगा रखी है, ऐसे हे मुनि श्री चौथमलजी महाराज ! आपके चरण कमल में समर्पण की हुई अलपबुद्धि विहारीलाल की कृति भौंरी की शोभा को प्राप्त हो ॥ ७ ॥

भवदीय
शुभकांक्षी दयास्पद
विहारीलाल शर्म्मा
ब्यावर

भाषा-शिखरिणी

महामाया मोह-स्मरतिमिरराशी भव-निशा,
मिटा के फैलाई सुमति किरणों भी चहुं दिशा ।
तभी हैं ये साक्षात् रवि शमिदमी चौथमलजी,
जिन्हों के आगे दुर्मति-कुमुदिनी ने छवी तजी ॥ १ ॥

मत्तगयन्द छन्द

दुर्लभ या नर-देहधरी पुनि ताबिच ही गुण शोध लियो है,
झूठ गिन्यो जगको मुनिभूषण काम करोध को दूर कियो है ।

आतम रूप को जानि लियो उरमें गुरुज्ञान को आनि लियो है,
संत शिरोमणि चौथमुनीश्वर चौथयुगीन को एक दियो है ॥२॥

सवैया

चौसठ अर्थ जिनेश्वर भाषित सूतर जा गलबीच सुहावे,
थम्भ इवे जिनशासन के "कविलाल" कहे विरले दगआवे।
मन्मथजीत महामुनि ये निशिवासर ज्ञान घटा गहरावे
लच्छनवन्त विचच्छण के गुण गावत को गुनवन्त अघावे

भवदीय
बालाराम जोधपुर
(मारवाड़)

प्रकरण २ रा

सनदें और हुक्मनामे
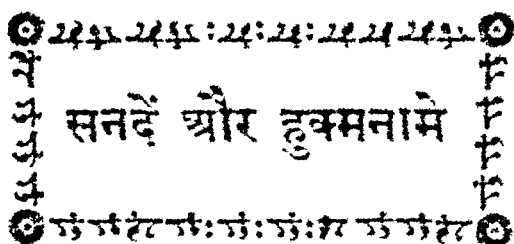
कई जागीर दारों से पट्टे परवाने चरित्रनायक जी को प्राप्त हुए वे अक्षरशः निम्नोक्त प्रकार से हैं।

नंबर १५२१

मानर्नाय महाराज चौथमलजी
जैन श्वेताम्बर थानकवासी-की सेवा में

राजे श्रीठाकरां जोरावर सिंहजी-साहरंगी ली० प्रणाम पहुंचे अपरंच आप विहार करते हुवे हमारे गांव साहरंगी में पधारे और धार्मीक व अहिंसा विशयक आपके व्याख्यान सुनने का मुझको भी शोभाग्य हुवा इस लीये मेने इलाक़े में चरन्दे व परन्दे जानवरांन की जो शीकार आम लोग किया करते थे उन की रोक के वास्ते और मछलीयों की शीकार धार्मीक तीथीयों में न होने की दोसरकुलर नंबर १५१६-१५२० जारी करके मनाई करदी है नकलें उनकी इस पत्र के ज़रिये आपकी सेवा में भेजता हूँ कारण के येह आपके व्याख्यान का सूफल हे फ़ सा० २३।१२।२१ ई

ठाकरांसहारंगी

॥ श्री ॥

सरकुलर ठिकानां साहारंगी-व इजलास राजे श्री ठाकरां जोरावर सिंहजी साहब-तारीख २३।१२।२१ ई०

मोहर छाप
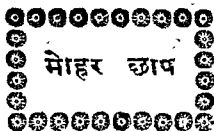
नकल मुताबीक असल के

जो के धार्मीक तीथी एकादशी पुनम अमावस्या जन्माष्टमी और रामनौमी और जैन धर्मावलंबीयों के पजूसनों में प्रगणे हाजा में शीकार मछलियों की कोई शख्स नहि करे इसका इन्तजाम होना जुरूर ही।

नंबर १५१६

हुक्म हुवा के

मारफत पुलिस प्रगणें हाजा में उन तमाम लोगों को जो अक्सर शीकार मछली किया करते हैं मुमांनियत करदी जावे के खीलाफ वर्जी करने वाले पर सजा की जावेगी फ. बाद कारर्वाई असल हाजा सामिल फाईल हो।

तारीख मजकुर
सही हिन्दी में ठाकरां
सही हीन्दी बहादुर सिंह
साहरंगी
कामदार-साहरंगी

॥ श्री ॥

सरकुलर ठिकानां साहरंगी बाइजलास राजे श्री ठाकरां जोरावर सिंहजी साहब तारीख २३।१२।२१
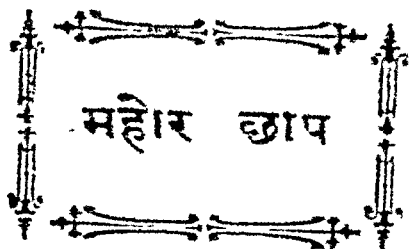
नकल मुताबीक असलके

ओके ठिकाने हाजा की हद में ऐसा कोई इन्तजाम नहीं है जिस की वजह से हर शक्ष सीकार वे रोक टोक किया करते हैं येह बेजा हे इसलीये येह तरिक़ा आयंदा जारी रहेनां नां मुनांसीब हे लीहाजा।

नंबर १५२० हुक्म हुवा के

आज तारीख से प्रगणें हाजा में बिला मंजूरी ठिकानां शीकार खेलने की मुमांनियत की जाती हे इत्तला इसकी मारफत पुलिस तमांम मवाजे आत के मवइयांत या इषाल दारांन के जर्ये आम लोगों को करादी जावे के कोइ शक्ष इसकी खीलाफ वर्जी करेगा वोह मुस्तोजीब सजाके होगा-के बाद कार रवाई असल हाजा सामील फाइल हों।

सही हीन्दी बहादुर-सिंह कामदार साहरंगी

सही हिन्दी में ठाकरां साहरंगी

॥ श्रीनर्तगोपाल जी ॥

BANERA
MEWAR

राजा रंजयति प्रजाः

जैन मजहब के मुनी महाराज श्री देवीलालजो व श्रीचौथमल जी महाराज बनेड़ा में वैशाख वदी ११ को पधारे और श्री ऋषभदेव जी महाराज के मन्दिर में इनके व्याख्यान सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ आपने नजरबाग व महलों में भी व्याख्यान दिये आपके व्याख्यानों से बड़ा ही आनन्द प्राप्त हुआ जिससे मुनासिब समझकर प्रतिज्ञा की जाती है कि:—

१ पजुषणों में हम शिकार नहीं खेलेंगे

२ मादीन जानवरों की सीकार ईरादतन कभी नहीं करेंगे

३ चैत सुदी १३ श्रीमहावीर स्वामो जी का जन्म दिन होने से उस दिन तातील रहेगी ताकि सब लोग मन्दिर* में सामिल होकर व्याख्यान आदि सुनकर ज्ञान प्राप्त करे व नीज उस रोज शिकार भी नहीं खेली जावेगी।

(मेवाड़)

---

*बनेड़े मेवाड़ में जो भी श्वेताम्बर स्थानकवासी साधु जाते हैं वे सब ऋषभदेव जी के मन्दिर ही में ठहरते हैं। और चतुर्मास का निवास भी उसी मन्दिर में करते हैं। अतः व्याख्यान भी उसी मन्दिर में होता है और सब श्रावक गण सामायिक, प्रतिक्रमणादि दया पौषध वहीं करते हैं। अतएव "राजा साहिब" ने श्रीमहावीर स्वामी के जन्म दिन तातिल रखने की चरित्रनायक जी से प्रतिज्ञा कर सब जैन लोगों को इत्तला दी कि मन्दिर जी में इकट्ठे होकर उस दिन व्याख्यान सुन कर लाभ प्राप्त करें।

४ खास बनेड़े व मवाजियात के तालावों में मछी आड़ वगैरा की सीकार वीला इजाजत कोई नहीं करने पावेगा । लीहाजा

नम्बर
६७४५

जुमले सहेनिशान को मारफत महकमे माल हिदायत दी जावे कि वह आसामियान को आगाह कर देवे कि तालावों में मछी आड़ वगैरा का शिकार कोई शख्स विला इजाजत न करने पावे । खिलाफ इसके अमल करे, उस की बाजाबता रीपोर्ट करे तातील बावत हर एक महकमे जात में इत्तला दी जावे नीज इसके जरिये नकल हाजा मुनि महाराज को भी सुचीत किया जावे फकत १९८० वैशाख सुदी २ ता० ६ मई सन १९२४ ई० ।

द० राजासाहब के

॥ श्रीराम-जी ॥

श्री हींगलाजी नकल

हुकमनामा अज़ ठिकाना कोसीथल वाके वैशाख सुदी १५ का ज्ञानसिंह १९८० ।

नम्बर
५४
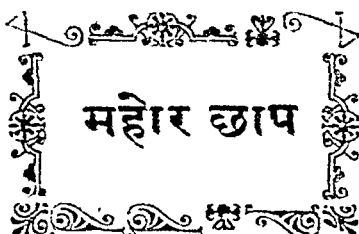
महोर छाप

जो कि अकसर लोग जानवरों की अपना पेट भरने के लिये सीकार खेलकर जीवहिंसा के प्राश्चित को प्राप्त होते हैं इसलिये हस्ब उपदेश साध जी महाराज श्री चौथमल जी

स्वामी के आज की तारीख से महे हुकमनामा खास कोसीथल व पटा कोसीथल के लिये जारी कर सब को हिदायत की जाती है कि शिकार खेलकर जीवहिंसा करने से पूरा परहेज करें। अगर कोई खास वजह पेश आवे तो मन्जूरी हासिल करे। अगर इसके खिलाफ कोई करेगा और उसकी शिकायत पेश आवेगा तो उसके लिये मुनासिब हुकम दिया जावेगा। इसलिये सब को लाजिम है कि निगरानी करते रहें। और किसी के लिये विला मन्जूरी शिकार खेलना जाहिर में आवे, तो फौरन् इत्तला करें। फकत

प्रकरण ३

हिज हाईनेस महाराजा सर मल्हारराव

बाबा साहिब पंवार के. सी. एस. आई. देवास "२"

का

संक्षिप्त परिचय

आपका जन्म प्रसिद्ध मरहठा क्षत्रियकुल विक्रमीय सम्वत् १६३४ श्रावण शुक्ला २ को शुभ योग में हुआ था आपने बाल्यावस्था में ही धार्मिक व राजनैतिक शिक्षा की अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली थी तथा अपनी कार्य-कुशलता व कर्तव्य-परायणता का अल्पवय में ही प्रजा के सन्मुख अनुकरणीय परिचय दे दिया था।

श्रीमान् का राज्याभिषेक विक्रम सम्वत् १६४६ के ज्येष्ठ कृष्णा १२ को बड़े समारोह के साथ हुआ। श्रीमान में दयालुता, उदारता, परोपकारिता, धैर्य्य तथा गाम्भीर्य आदि अनेक उच्च गुणों का प्रादुर्भाव बचपन से ही दृष्टिगोचर होता था। कहा है "होनहार विरवान के होत चीकने पात" वे उच्च गुण दिन प्रतिदिन बढ़ते ही गये। अस्तु, इसके आदर्श उदाहरण अनेक विद्यमान हैं। यथाः—

१ आप मांस भक्षण नहीं करते।

२ शिकार नहीं खेलते।

३ तथा हाल ही में श्रीमान् ने अपने राजस्थ विन्ध्या देवी के मन्दिर जी में लगभग १५००० जीवों का वार्षिक वध हुआ करता था उसे सर्वथा बन्द कर-के जीवदया का अनुपम उदाहरण दिया है।

श्रीमान के उपरोक्त आदर्श गुण अनुकरणीय हैं। वर्तमान नवयुग में विशेष कर शिकार का शौक नरेशों व सामान्य व्यक्तियों में भी विशेष रूप से पाया जाता है। यह इतनी भयंकर प्रथा है कि जिसका उल्लेख करना लेखनी की शक्ति से बाहर है। धन्य है, ऐसे आदर्श नरेश को जिन्होंने मूकप्राणियों एवम् भोले पशुओं पर दया करके इस दुष्ट कर्तव्यहीन प्रथा का समूल त्याग कर दिया। हम प्रत्येक स्वनाम धन्य नरेशों से सादर निवेदन करते हैं कि वे भी इस भयङ्कर प्रथा का त्याग कर अपनी वास्तविक वीरता और दयालुता का आदर्श दिखावे।

आपके राज्य का विस्तार ४१६ वर्गमील है जनसंख्या ६६११८ है। आपको गवर्नमेन्ट की ओर से सन्मानार्थ १५ तोपों की सलामी दी जाती है। आपके सद्गुणों व सद्व्यवहार से प्रजा बहुत प्रसन्न है। विद्याप्रचार की ओर आपका विशेष अनुराग है अतएव आपकी ओर से राज्य में शिक्षाप्रचार के लिये अनेक पाठशालाओं का सञ्चालन किया जाता है।

आप सरल स्वभाव, मिष्टभाषी व हंसमुख हैं, कटुता तो आपको छू तक नहीं गई है। तथा बहुत शांत प्रकृति सादा मिजाज व अहिंसा धर्म के अनुरागी हैं। हमारे चरित्रनायक जी के आप परम भक्त हैं जब २ चरित्रनायक जी देवास पधा-

रते हैं आप यथासम्भव सर्वदा व्याख्यान लाभ लेने के अलावा दिन व रात्रि के समय स्थानीय सेवा भी करते रहते हैं और जैनधर्म के तात्विक विषयों से परिचित होने के लिये अनेक रूप से प्रश्नोत्तर करते रहते हैं। तथा प्रतिवर्ष कम से कम एक वार देवास पधारने की आग्रह पूर्वक विनती करते रहते हैं, सारांश यह है कि श्रीमान् सरकार की धार्मिक रुचि प्रशंसनीय है जो उपरोक्त उदाहरणों से प्रकट है।

हमारी हार्दिक भावना है कि आपके आदर्श कार्यों का प्रत्येक नरेश अनुकरण करें और अपना कर्तव्य पालन कर अन्य व्यक्तियों के लिये उदाहरण उपस्थित करें।

बहुरत्ना वसुंधरा

श्रीमान् राजा साहिब अमरसिंहजी साहिब बनेड़ा

का

संक्षिप्त परिचय।
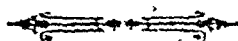
श्रीमान् का जन्म ई० सन् १८८६ में हुआ था, और सन् १६०६ में आप सिंहासनारूढ़ हुए। सन् १६१० में आपके राज्याभिषेक के समय महाराना साहिब उदयपुर की ओर से "तलवार बंधाई" के दस्तूर में एक खास तलवार, एक हाथी और एक घोड़ा आभूषणों सहित सन्मानार्थ प्राप्त हुए थे। फिर जब आप उदयपुर पधारे तब वहां पर आपका स्वागत प्रथानुसार शहर के दरवाजों के बाहर से ही महाराणा साहब की ओर से किया गया।

आपके पिता श्री राजासाहिब अक्षयसिंह जी के मृत्यु के स्मारक में आपने अक्षय मेमोरियल स्कूल प्रजा के बच्चों को शिक्षा प्राप्त कराने के लिये स्थापित किया जिसके साथ में एक बोर्डिङ्ग हाऊस भी है और श्रीमती रानी साहिबा ने भी स्कूल के लिए एक अच्छी इमारत प्रदान की है। शिक्षा प्रचार की ओर आपका सदैव विशेष लक्ष्य रहता है।

आपने संस्कृत साहित्य की वृद्धि के लिए एक मुनि कुल ब्रह्मचर्य्याश्रम भी स्थापित किया है कि जिसके निर्वाह के लिये मासिक व्यय भी आपकी ओर से प्रदान किया जाता है तथा कुछ जमीन भी उसके लिये निकाल दी गई है। आप प्रजा के कष्टों को निवारण करने के लिये अनेक प्रकार के प्रयत्न करते रहते हैं यहां तक कि किसान लोगों के लिये (५०००) रुपये लगाकर एक (Agricultural Bank) कृषिक बैङ्क भी खोला है।

श्रीमान् अत्यन्त दयालु धर्मप्रेमी, उदारचित और प्रजा भक्त नरेश हैं। आपके विचार गम्भीर, सरल व परोपकारी हैं। श्रीमान् हमारे चरित्रनायक जी के व्याख्यान अवसर मिलने पर बड़ी उत्कण्ठा व भक्ति के साथ श्रवण करते हैं।

श्रीमान् धर्मप्रेमी दानवीर रायसाहिब सेठ कुन्दनमलजी कोठारी [जेसलमेरी] आनरेरी मजिस्ट्रेट ब्यावर का

संक्षिप्त परिचय।

आप का जन्म, ओसवाल घराने के प्रसिद्ध कोठारी (जैस-

लमेरी) गोल में विक्रमीय सम्वत् १६२७ के कार्तिक शुक्ला पूर्णमासी को अर्धरात्रि के समय शुभ लगन में हुआ था। आपके पिता श्री का शुभनाम हंसराज जी था। समयानुसार आप सकुटुम्ब खुशहाल में रहते थे। बालकपन से ही आप में उदारता, दयालुता, धैर्य्य एवं गाम्भीर्य आदि सद्गुणों का प्रादुर्भाव हो गया था। और यह सब गुण उत्तरोत्तर क्रमशः बढ़ते ही गये। जिस के कई आदर्श उदाहरण आज हमारे सामने विद्यमान हैं।

आपको राजभक्ति आदि सद्गुणों से प्रसन्न होकर गवर्नमेन्ट ने आप के सन्मानार्थ ता० ५ जून सन् १६२० ई० को आप को रायसाहिब की उपाधि से विभूषित किया। इस के उपरान्त शीघ्र ही आप की योग्यता और न्यायपरायणता पर मुग्ध हो कर स्थानीय गवर्नमेन्ट ने आप को आनरेरी मजिस्ट्रेट के पद से अलंकृत किया।

परोपकार के लिये आप सदैव तन, मन, धन से तत्पर रहते हैं। सम्वत् १६७२ में दुष्काल के कारण मारवाड़ प्रान्त के अनेक कृषक अपने पशुओं सहित हजारों की संख्या में ब्यावर होते हुए मालवे जाते थे। तब आप ने गौ आदि पशुओं को करीब ८०००) रुपये का घास डलवा कर उन की क्षुधा निवारण कर असीम पुण्य प्राप्त किया। पाठक गण! श्रीमान की आदर्श उदारता का एक और प्रशंसनीय उदाहरण सुनिये कि एक दिन उचित से अधिक मूल्य देने पर भी जब घास न मिला तो दया से प्रेरित होकर आप ने लगभग २०००) रु० के कपासिये ही डलवा कर उन मूक पशुओं की

रक्षा की। तथा उनके मालिकों को भी भुने हुए चने व कपड़े आदि दिये। इस प्रकार पशुओं को घास तथा कपासियों से और मनुष्यों को अन्न तथा वस्त्र से सन्तुष्ट किया।

धार्मिक और व्यवहारिक विद्याप्रचार के लिये भी अनेक पाठशालाओं को आप हजारों रुपये दान करते रहते हैं।

आप ने निजी व्यय से एक औषधालय भी अरसे से खोल रखा है कि जिस का वार्षिक व्यय लगभग ढाई हजार रुपया है।

अनाथालयों, अस्पतालों तथा घरेलु औषधालयों आदि अनेक संस्थाओं को आपसे आर्थिक सहायता प्राप्त होती रहती है। जीवदया तथा अन्य शुभकामों में अधिक रकम आप की तरफ से ही दी जाती है। जिस धार्मिक या सामाजिक क्षेत्र की तरफ आप बढ़ जाते हैं उस से फिर पीछे कदम नहीं हटाते हैं वरन अग्रसर ही रहते हैं।

आपके अनेक और प्रशंसनीय कामों में से एक का उल्लेख और किया जाता है अर्थात् मेरवाड़े के लोग ग्रामों में होली के दूसरे दिन "अहेड़ा" खेलते हैं। तमाम गांव के आदमी होली के दूसरे दिन अस्त्र शस्त्रादि से सुसज्जित होकर जङ्गल में जाते हैं और वहाँ चहुंओर हा हू आदि शब्द करते हुए तेजी से दौड़ते हैं। उस समय उनके सामने छोटा बड़ा जो भी पशु आजाता है उसे जीता नहीं छोड़ते। आपने सन् १९०६ में कई ग्रामों के लोगों को प्रीतिभोज इत्यादि देकर यह 'अहेड़ा' का खेल बन्द करा दिया। यह है एक धर्मभीरू तथा धर्मवीर की दयालुता का एक सच्चा उदाहरण।

आप दी महालक्ष्मी मिलन कम्पनी लिमिटेड ब्यावर के मैनेजिंग डाईरेक्टर हैं।

अस्तु यह लिखना अनावश्यक न होगा कि आप बड़े योग्य और प्रभावशाली व्यक्ति हैं। सच तो यह है कि आप इन सद्‌गुणों की खान होने में वास्तव में कुन्दन के समान ही शुद्ध हृदय और स्वनामधन्य हैं। आप प्रेममूर्ति, सौम्यस्वभाव, प्रसन्न-वदन, और सादा मिजाज हैं। अभिमान आपके पास तक नहीं फटका है। धार्मिक कामों में आप का विशेष अनुराग है। आप के सेवकों आदि के साथ भी आप का वर्ताव भ्रातृवत है आदि २ अनेक गुणों से विभूषित होने के कारण यह कहना अत्युक्ति न होगा कि आप एक आदर्श पुरुष हैं। आप के जीवन के महत्वशाली कार्यों का विस्तृत उल्लेख किया जाय तो एक स्वतन्त्र पुस्तक बन सकती है। अतएव अलं इति विस्तरेण।

आपके सुपुत्र श्री० कुंवर लालचन्दजी साहिब भी अपने पिता श्री के सदृश ही हंसरलस्वभाव, समुख और उदारचित्त हैं।

श्रीमान् मिश्रीमलजी मूणोत ब्यावर

का

संक्षिप्त परिचय

आप का शुभ जन्म वि० सं० १६३६ मार्गशीर्ष शुक्ला ३ को शुभ योग में पाली (मारवाड़) में हुआ था। आप के पिता जी का नाम श्री कुन्दनमल जी था और काका साहिब श्री यशवन्तराजजी थे। श्री यशवन्तराज जी के कोई पुत्र न था, अतएव आपने इनको ही दत्तकपुत्र स्वीकार किया। कुछ

समय के पश्चात् आप पाली छोड़ कर ब्यावर आगये आसानी से व्यौपारिक कार्य कर सकने योग्य शिक्षा आप को बाल्यावस्था में ही मिल चुकी थी। यहां आकर आपने व्यौपार में अच्छा लाभ उठाया। उदारता, सहन-शीलता सरलता इत्यादि अनेक गुण आप में बाल्यावस्था से ही विद्यमान थे। धार्मिक स्नेह भी आप ने बाल्यावस्था में ही प्राप्त किया था और वह समयानुसार दिन प्रति दिन बढ़ाते ही रहे हैं। आप धार्मिक कार्यों में आर्थिक सहायता भी विशेष-रूप से सदैव देते रहते हैं। सामाजिक कार्यों में भी आप सहायता प्रदान करते रहते हैं सारांश यह है कि आप का चित्त उदार व धार्मिक कार्य में विशेषरूप से लालायित रहता है। श्रीमान् वादीमान मर्दन स्थेवर पंडित मुनि श्री नन्दलाल जी महाराज के सं० १६८० के चतुर्मास में श्रीमान् उग्र तपस्वी श्री छोटेलाल जी महाराज ने ३६ की तपस्या की थी और पांच दिवस का अभिग्रह भी धारण किया था वह अभिग्रह भी श्रीमान् मिश्रीमल जी के यहां पर ही सैकड़ों मनुष्यों के सामने फलीभूत हुआ था पाली में प्लेग के दिनों में सेवा समिति के खर्चे आदि का प्रबन्ध सब आप ही ने किया था, व अभी पाली में महाराज श्री के सदुपदेश से जो न्याती झगड़े का संप हुआ था उसमें भी आपने बहुत उद्योग किया था।

यह आप के धार्मिक जीवन तथा सच्चरित्रता का एक अत्यन्त उज्वल उदाहरण है। आप के दे। सुपुत्र और एक पुत्री है।

नोट—इच्छित वस्तु का किसी अवधि में प्राप्त होने को अभिग्रह अर्थात् प्रतिज्ञा कहते हैं।

प्रकरण ४ था ।
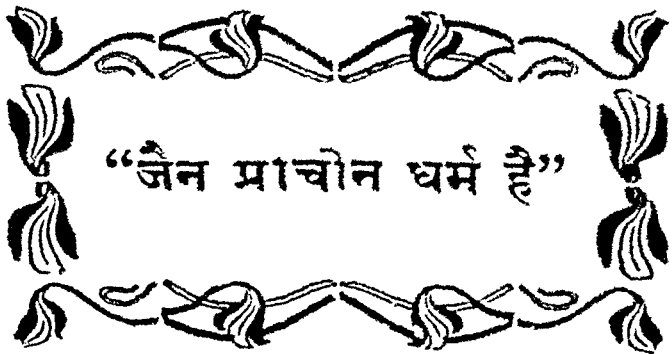
(लेखक श्रीमान् वैद्य तनसुखजी व्यास-भूतपूर्व सम्पादक वैद्यकल्पतरु)

श्रीमान् पूज्य व्याख्यान वाचस्पति श्री १००८ श्री चौथमल जी महाराज लगभग २५ दिन से जोधपुर में विराजमान हैं, आप के व्याख्यान यहां रोज होते हैं, श्रोताओं की भीड़ खासी लगी रहती है, कभी २ श्रोताओं की संख्या दो हजारसे भी अधिक वढ़ जाती है । आपके सुललित उपदेशप्रद धार्मिक व्याख्यानों का यहां भी बहुत अच्छा असर पड़ा है, और लोगों की बड़ी इच्छा है कि आगामी वर्ष श्रीमान् का चतुर्मास यहीं हो और इसके लिये एक जैनसंघ ही नहीं किंतु जोधपुर की सम्पूर्ण हिंदू जनता ने भी प्रार्थना द्वारा अपनी आकांक्षा श्रीमान् से प्रगट की है । आशा है अवश्य ही पूर्ण की जावेगी । श्रीमान् माघ वदि १३ के दिन यहां से महा मन्दिर विहार कर गये हैं और अभी कुछ दिन वहां आप का विराजना होगा ऐसा मालूम पड़ता है वहां से बिहार करते हुए शायद आप ब्यावर पधारेंगे । जोधपुर से बिहार करने के दिन आप

का व्याख्यान बड़ा ही प्रभावशाली हुआ, उपस्थिति बहुत अधिक थी। आपने प्रारम्भ में राग और द्वेष की हृदय ग्राही व्याख्या ऐसी सरल रीति से की थी कि साधारण जन भी उसे सहज में समझ सकता था। आपने यह अच्छी तरह से उदाहरण और प्रमाण से समझाया था कि इन्हीं के द्वारा मनुष्य अधर्म में फंस कर अपने जीवन का अकल्याण अपने हाथों करता है अपने पतिव्रत धर्म पर भी श्री सीता के उच्च आदर्श भावों की व्याख्या करके उपस्थित स्त्रीसमाज को जो हितकर उपदेश दिया वह सदा मनन करने और उसका अनुसरण करने योग्य था। केवल स्त्रीसमाज ही को नहीं किंतु पुरुष समाज को भी उससे आवश्यक शिक्षा मिलती है। प्रसंगवश आप ने यह भी समझाया कि श्री सीता का पतिव्रत उपदेश और आदर्श और उच्च भाव आज विद्वानों ने अवस्थानुसार नये अपनी प्राचीनता सिद्ध करने के लिये तैयार नहीं कर लिये हैं किंतु जैनग्रन्थों में—जिन्हें बने हज़ारों वर्ष हो गये हैं—पहिले से मौजूद हैं, आश्चर्य है कि समझाते हुए भी कुछ लोग यह झूठा आक्षेप करते हैं कि जैनधर्म ही अभी २ ही निकला है पर विना प्रमाण उनकी वार्तो को कैसे कोई स्वीकार करने के लिये तैयार हो सकता है, केवल कह देने मात्र ही से जैन धर्म आज का निकला धर्म नहीं हो सकता पाली के परमानन्द जी कहते हैं कि जैनियों ने अपनी प्राचीनता दिखलाने के लिए रामचन्द्र जी को जैन धर्मानुयायी लिख दिया पर इसका उनके पास प्रमाण क्या है? क्या ऐसा नहीं हो सकता कि अन्य धर्मियों ने अपनी प्राचीनता सिद्ध करने के लिये इन्हें अपना लिया? मुझे किसी धर्म से द्वेष नहीं है केवल जैनधर्म पर झूठा आक्षेप लगाने वालों के प्रति कहना

है कि वे विना प्रमाण ऐसी बातें न करें जिससे वे दोष के भागी हों जैन धर्म प्राचीन समय से प्रचलित है पर यदि कोई रामचन्द्र जी तथा हनुमान जी का हुआ भी नहीं माने पर उनके नहीं मानने से ही वे नहीं हुये साबित नहीं हो सकते।

जैनधर्म अति प्राचीन धर्म है, श्री ऋषभदेव भगवान से यह धर्म चला आरहा है संसार में जब वर्णाश्रम की व्यवस्था भी नहीं हुई थी उससे पहिले भी यह धर्म विद्यमान था। इसे कई करोड़ों वर्ष होचुके हैं आप ने अनेक पुष्ट ऐतिहासिक प्रमाण देकर यह सिद्ध कर दिया था कि जैनधर्म अति प्राचीन है। अपनी२ समझ अनुसार लोग मन चाहा लिख देते हैं पाली के परमानन्द जी ने भी जैनधर्म पीछे से निकला है इनकी ऐतिहासिक गणना में गोटाला है इन्होंने ऋषभ आदि को जैन धर्मानुयायी लिखकर अपनी प्राचीनता सिद्ध करनी चाही है इनकी ऐतिहासिक बातें असत्य सिद्ध हो चुकी हैं आदि जो चाहा श्रीमाली अभ्युदय नामक पत्र में लिख दिया हैं पर उन के पास इनके प्रमाण क्या हैं। जैनधर्म के उन्होंने शास्त्र ही क्या देखे हैं कि वे ऐसा कहनेका साहस करें, जैनधर्मकी लिखी पुस्तकें भी इतनी प्राचीन हस्तलिखी मिलती हैं कि सुनते दंग हो जाना पड़ता है। १५०० के संवत् में लिखी पुस्तक मेरे पास भी मोजूद है अनेक प्राचीन शिला लेख आदि भी मिले हैं, जैनधर्म बौद्धधर्म से भी पहिले का है और स्वतन्त्र है। यह पाश्चात्य विद्वानों ने भी कई अच्छे प्रमाणों द्वारा स्वीकार किया है, उनके खोज को कई पुस्तकें भी प्रगट हो गई हैं. महाभारत ग्रन्थ में भी जैन साधुओं का जिक्र आया है, युद्ध के समय एक निर्ग्रन्थ साधु का शकुन हुआ था और

अर्जुन के पूछने पर श्री कृष्ण ने कहा था कि ये शकुन जीत देने वाला है और भी कई उदाहरण दिये जो स्थान की कमी से यहां नहीं लिखे जासके हैं। समय कम होने पर भी आपने बहुत से प्रमाणों द्वारा जनता को सन्तुष्ट कर दिया कि वास्तव में जैनधर्म अति प्राचीन है। ....

....

....

....

....और आदेश किया कि हमें किसी से द्वेष नहीं है जैन साधु केवल सत्य और निर्लोभ ही का उपदेश करते हैं जो लोग जैनधर्म में घोटाला बतलाते हैं उनको सतमार्ग बतलाने और सुबोध देने के लिये ही इतनी चर्चा की गई है। महाराज साहिब ने १ घंटे तक जैनधर्म की प्राचीनता अनेक अकाट्य प्रमाणों द्वारा प्रतिपादन करके उपस्थित जनता में जैनधर्म के प्रति बड़ी श्रद्धा उत्पन्न की थी। और जो इसे अर्वाचीन बतलाते हैं वे भ्रम में हैं।

महामन्दिर विहार कर देने पर भी वहां की जनता आपके अमृत भरे उपदेशों को सुनने की अभी तक लालायित बनी हुई है और सुदि १ को जोधपुर में गिरदीकोट में आपके सार्वजनिक व्याख्यान की ओर व्यवस्था की गई। आपने महामन्दिर से कृपा कर पधार के एक बड़ा ही प्रभावशाली व्याख्यान दिया था, उपस्थिति ४ हजार के करीब थी। सभी धर्म के जन एकत्र हुए थे, मुसलमानों की संख्या भी बहुत थी, बड़े २ मुसद्दी तथा ठाकुर आदि भी पधारे थे, आपने अहिंसा के महत्व पर ऐसा सरल और उपदेशप्रद व्याख्यान दिया

था कि सारी जनता धर्म के गूढ़ तत्व की बात सुन कर प्रसन्न हुई। आपने अछूतों के सम्बन्ध में भी धार्मिक उपदेश दिया था, अछूत एक धार्मिक पाप है। आपका व्याख्यान ३॥ घन्टे तक जनता शान्त चित्त से ध्यानपूर्वक सुनती रही और भी सुनने की इच्छुक बनी रही। वहां चौमासे की भी प्रार्थना की गई। सुना है कि एक और सार्वजनिक व्याख्यान आपका सोजतिये दरवाजे बाहर होने वाला है।

"वेदादि ग्रन्थों से जैनधर्म की प्राचीनता"

प्रिय पाठक—यद्यपि ग्रन्थारम्भ में ही जैनधर्म की प्राचीनता के विषय में अनेक विद्वानों की सम्मतियों व शिलालेखों के अकाट्य प्रमाणों द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका है कि जैन अति प्राचीन व सर्वोच्च धर्म है, ताहम भी हमें कई सज्जनों से यह सूचना मिली कि इस विषय में वेद पुराण आदि अन्य धर्म के शास्त्रों व ग्रन्थों के प्रमाण भी अवश्य दिये जावें इस लिये उन सज्जनों के आग्रह को मान देकर इस विषय के प्रमाणों के श्लोक भावार्थ सहित नीचे दिये जाते हैं।

भगवान् श्री ऋषभनाथजी जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर हुए हैं उनके पिता का नाम नाभिराजा माता का नाम मरुदेवी और उनके एक सौ पुत्र में से बड़े पुत्र का नाम भरत था, उनके विषय में पुराणों तथा वेदों में इस प्रकार उल्लेख है:—

शिवपुराण में

> कैलासे पर्वते रम्ये वृषभोऽयं जिनेश्वरः ।
> चकार स्वावतारं च सर्वज्ञः सर्वगः शिवः ॥५६॥

अर्थात्—केवलज्ञान द्वारा सर्वव्यापी, कल्याण स्वरूप सर्वज्ञाता यह ऋषभनाथ जिनेश्वर मनोहर कैलास पर्वत पर उतरते हुए ।

ऋषभजी ने कैलास पर्वत से ही मुक्ति पाई है । जिननाथ अर्हन्त ये शब्द जैन तीर्थङ्करों के लिए ही रूढ हैं:—

ब्रह्माण्ड पुराण में देखिये—

> नाभिस्त्वजनयत्पुत्रं मरुदेव्यां मनोहरम् ।
> ऋषभं क्षत्रियज्येष्ठं सर्वक्षत्रस्य पूर्वजम् ॥
> ऋषभाद्भरतो जज्ञे वीरः पुत्रशताग्रजो ।
> भिषिच्य भरतं राज्ये महाप्राव्राज्यमास्थितः ॥

इह हि इक्ष्वाकुलवंशोद्भवेन नाभिसुतेन मरुदेव्यानन्दनेन महादेवेन । ऋषभेण दशप्रकारो धर्मःस्वयमेवाचीर्ण केवलज्ञान-लाभाच्च प्रवर्तितः ।

यानि—नाभिराजा ने मरुदेवी महारानी से मनोहर क्षत्रियों में प्रधान और समस्त क्षत्रियवंश का पूर्वज ऐसा ऋषभ नामक पुत्र उत्पन्न किया, ऋषभनाथ से शूरवीर सौ भाइयों में सब से बड़ा ऐसा भरत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ । ऋषभनाथ उस भरत का राज्याभिषेक करके स्वयं जैनदीक्षा लेकर मुनि हो

गये। इसी आर्य्यभूमि में इक्ष्वाकु क्षत्रियवंश में उत्पन्न नाभिराजा के तथा मरूदेवी के पुत्र ऋषभनाथ ने क्षमा, मार्दव आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिञ्चिन्य और ब्रह्मचर्य्य यह दस प्रकार का धर्म स्वयं धारण किया और केवल ज्ञान पाकर उन धर्मों का प्रचार किया।

प्रभास पुराण में ऐसा उल्लेख है:—

युगे युगे महापुण्या दृश्यते द्वारिकापुरी।
अवतीर्णो हरिर्यत्र प्रभासे शशिभूषणः॥
रेवताद्रौ जिनो नेमियुगादिर्विमलाचले।
ऋषीणामाश्रया देव मुक्तिमार्गस्य कारणम्॥

अर्थात्—प्रत्येक युग में द्वारिकापुरी बहुत पुन्यवती दृष्टिगोचर होती है जहां पर कि चन्द्रसमान मनोहर नारायण जन्म लेते हैं पवित्र रेवताचल (गिरनार पर्वत) पर नेमीनाथ जिनेश्वर हुए जोकि ऋषियों के आश्रय और मोक्ष के कारण थे।

भगवान् श्री नेमीनाथ जी कृष्ण जी के पिता (वसुदेवजी) के बड़े भाई महाराज समुद्रविजय के पुत्र द्वारिका निवासी थे, उन्होंने गिरनारि पर्वत (रेवताचल) पर तपस्या करके मोक्ष प्राप्त की है, वे बाईसवें तीर्थङ्कर भगवान् श्री नेमिनाथ कृष्ण के चचेरे भाई थे।

नागपुराण में कहा है कि—

अष्टषष्ठिषु तीर्थेषु यात्रायां यत्फलं भवेत्।
आदिनाथस्य देवस्य स्मरणेनापि तद्भवेत्॥

अर्थ—६८ तीर्थों की यात्रा करने में जो फल होता है वह फल आदिनाथ भगवान् के स्मरण करने से होता है।

ऋषभनाथजी का दूसरा नाम आदिनाथ है क्योंकि वे प्रथम तीर्थङ्कर थे।

नागपुराण में ऐसा लिखा है—

> अकारादि हकारान्तं मुर्द्धाधोरेफसंयुतम्।
> नादविन्दुकलाक्रान्तं चन्द्रमंडलसन्निभम्॥
> एतद्देवि परं तत्वं यो विजानाति तत्त्वतः।
> संसारबन्धनं छित्वा स गच्छेत्परमां गतिम्॥
> दशभिर्भोजितैर्विप्रः यत्फलं जायते कृते।
> मुनेरर्हत्सु भक्तस्य तत्फलं जायते कलौ॥

अभिप्राय—जिसका प्रथम अक्षर 'अ' और अन्तिम अक्षर 'ह' है और जिसके उपर आधा 'रेफ' तथा 'चन्द्रविन्दु' विराजमान है ऐसे "अर्हं" को जो कोई सच्चे रूप से जान लेता है वह संसार बन्धन को काटकर परमगति (मुक्ति) को चला जाता है। कृतयुग में दस ब्राह्मणों को भोजन कराने से जो फल होता है वह अर्हन्त के भक्त एक मुनि को यानी जैन साधु को भोजन कराने से होता है।

वाराह पुराण पर निगाह डालिये—

> तस्य भरतस्य पिता ऋषभः हेमाद्रेर्दक्षिणं वर्षं महद्भारतं नाम शशास।

तात्पर्य—उस भरत राजा के पिता ऋषभनाथ हिमालय पर्वत से दक्षिणदिशावर्ती भारतवर्ष का शासन करते थे।

अग्निपुराण पर दृष्टिपात कीजिये—

ऋषभो मरुदेव्या च ऋषभाद्भरतोऽभवत् ।
भरताद्भारतं वर्षं भरतात्सुमतिस्तवभूत् ॥

भावार्थ—मरुदेवी के उदर से ऋषभनाथ हुए, ऋषभनाथ से भरत राजा का जन्म हुआ। भरत राजा द्वारा शासित होने से इस खण्ड (देश) का नाम भारतवर्ष हुआ है भरत से सुमति हुआ।

इस प्रकार जैन ग्रन्थों में जो भगवान् ऋषभनाथ के पुत्र भरतचक्रवर्ती के नाम से इस देश का नाम "भारतवर्ष" रक्खा गया है, लिखा है। इस बात की साक्षी यह अग्नि पुराण भी देता है।

शिव पुराण की अनुमति है:—

अर्हन्निति तन्नाम ध्येयं पापप्रणाशनम् ।
भवद्भिश्चैव कर्तव्यं कार्यं लोकसुखावहम् ॥ ३१ ॥

भावार्थ—अर्हन् यह शुभ नाम पाप नाशक है जगत् सुख-दायक इस शुभ नाम का उच्चारण आप को भी करना चाहिये।

मनुस्मृति में भी ऐसा बतलाया है:—

कुलादिबीजं सर्वेषां प्रथमो विमलवाहनः ।
चक्षुष्मान् यशस्वी वाभिचन्द्रोऽथप्रसेनजित् ॥

मरूदेवी च नाभिश्च भरते कुलसत्तमाः ।
अष्टमो मरूदेव्यान्तु नाभेर्जात उरूक्रमः ॥
दर्शयन् वर्त्म वीराणां सुरासुर नमस्कृतः ।
नीतित्रितयकर्त्ता यो युगादौ प्रथमो जिनः ॥

अर्थात्—कुल आचरण आदि के कारणभूत कुलधर सब से पहिले विमलवाहन, फिर क्रम से चक्षुष्मान्, यशस्वी, अभिचन्द्र, प्रसेनजित, नाभिराय, नामक कुलकर इस भरतक्षेत्र में उत्पन्न हुए। तदनन्तर मरूदेवी के उदर से नाभिराय के पुत्र मोक्षमार्ग को दिखलाने वाले सुर-असुर द्वारा पूजित तीन नीतियों के विधाता प्रथम जिनेश्वर यानि-ऋषभनाथ सतयुग के प्रारम्भ में हुए।

"ऋषभ" शब्द का अर्थ "आदि जिनेश्वर" ही है इस में किसी प्रकार की शंका करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि "ऋषभ" शब्द का अर्थ वाचस्पति कोष में "जिनदेव" और शब्दार्थ चिन्तामणि में 'भगवदवतारभेदे, आदि जिने' यानी भगवान् का एक अवतार और प्रथम जिनेश्वर यानी तीर्थङ्कर किया है।

इसके सिवा जैनधर्म के प्रथम तीर्थङ्कर भगवान् ऋषभनाथ जी को आठवां अवतार बतलाकर भागवत के पांचवें स्कन्ध के चौथे पांचवें और छठवें अध्याय में बहुत विस्तार के साथ वर्णन किया गया है। हम उस प्रकरण से यहां उद्धृत करके इस लेख का बढ़ाना उचित नहीं समझते हैं। अतः उसे छोड़ कर आगे बढ़ते हैं।

पाठक महाशय—भागवत के पांचवें स्कन्ध को अवश्य देखने का कष्ट उठावें उपरलिखित प्रमाणों से इतना तो सुगमता से सिद्ध हो ही जाता है कि सृष्टि के प्रारम्भ समय भगवान् ऋषभनाथ हुए और वे पहिले (१) जिन (तीर्थङ्कर) थे, तदनुसार जैनधर्म की स्थापना उस समय हुई थी यह बात स्वयमेव तथा ऋषभनाथजी के साथ "जिन" विशेषण रहने से सिद्ध होती है इस कारण जैनधर्म के उदयकाल का ठिकाना भगवान् ऋषभनाथ का जमाना है जो कि १०-२० हजार के इतिहास से बहुत ही पहिले विद्यमान था।

रामचन्द्रजी के कुल पुरोहित वशिष्ठ जी के बनाये हुए योगवशिष्ठ नामक ग्रन्थ में ऐसा उल्लेख है:—

नाहं रामो न मे वाञ्छा भावेषुच न मे मनः।
शांतिमास्थातुमिच्छामि स्वात्मन्येव जिनो यथा॥

अर्थात्—रामचन्द्र जी कहते हैं कि मैं राम नहीं हूं मेरे किसी पदार्थ की इच्छा भी नहीं है मैं जिनदेव के समान अपनी आत्मा में ही शान्ति स्थापना करना चाहता हूं।

इस से साफ जाहिर होता है कि रामचन्द्र जी के समय में जैनधर्म का तथा उसके उद्धारक जिनदेवों (तीर्थङ्करों) का अस्तित्व था।

इन सब के सिवाय अब हम वेदों की ओर बढ़ते हैं। देखे वहां भी कुछ हमारे हाथ आ सकता है या नहीं क्योंकि आधुनिक ग्रन्थों में वेद विशेष प्राचीन माने जाते हैं ऋग्वेद, यजुर्वेद

सामवेद, अथर्ववेद के अनेक मंत्रों में जैन तीर्थङ्करों का नाम उल्लेख करके उनको नमस्कार किया गया है। अवलोकन कीजिये—

ऋग्वेद पर ही प्रथम दृष्टिपात कीजिये—

आदित्या त्वगसि आदित्य सद आसीद् अस्तभ्नाद्द्यां "वृषभो" तरिक्षं जमिमीते वरिमाणं। पृथिव्याः आसीत विश्वा भुवनानि सम्राडिवश्वेतानि त्ररूणास्य व्रतानि॥ ३० अ० ३।

अर्थ—तू अखण्ड पृथ्वीमंडल का सार त्वचास्वरूप है, पृथ्वी तल का भूषण है, दिव्यज्ञान द्वारा आकाश को नापता है, ऐसे हे "वृषभनाथ" सम्राट्! इस संसार में जगरक्षक व्रतों का प्रचार करो।

अर्हन्बिभर्षि सायकानि धन्वार्हन्निष्कं यजतं विश्वरूपम्।
अ० १ अ० ६ व० १६

अर्हन्निदयसे विश्वं भवभुवं न वा ओजीयो रुद्रत्वदस्ति।
अ० २ अ० ७ व० १७

अर्थ—भो अर्हन्देव! तुम धर्मरूपी बाणों को, सदुपदेशरूप धनुषको अनन्तज्ञानादिरूप आभूषणों को धारण किये हो। भो अर्हन्! आप जगत् प्रकाशक केवल ज्ञान में प्राप्त किये हुये हो संसार के जीवों के रक्षक हो, काम क्रोधादि शत्रु समूह के लिये भयङ्कर हो तथा आप के समान कोई अन्य बलवान् नहीं है।

दीर्घायुस्त्वायुबलायुर्वा शुभ जातायु। ॐ रक्ष रक्ष अरिष्टनेमि स्वाहा। वामदेव शान्त्यर्थमनुविधीयते सोऽस्माकं अरिष्ट-

नेमि स्वाहा। ॐ त्रैलोक्य प्रतिष्ठितान् चतुर्विंशति तीर्थङ्करान् ऋषभाद्यावर्द्धमानान्तान् सिद्धान् शरणं प्रपद्ये।

ज्ञातारमिन्द्रं ऋषभं वदन्ति अतिचारमिन्द्रं तमरिष्टनेमि भवे भवे सुभवं सुपार्श्वमिन्द्रं हवे तु शक्रं अजितं जिनेन्द्र तद्वर्द्धमानं पुरुहुतमिन्द्र स्वाहा।

ऋषभ एव भगवान् ब्रह्मा भगवता ब्रह्मणा स्वयमेवाचीर्णानि ब्रह्माणि तपसा च प्राप्तः परं पदम् (आरण्यके)।

इत्यादि और भी अनेक मन्त्र ऋग्वेद में विद्यमान हैं, जिन में जैनधर्म के उद्धारकर्ता तीर्थङ्करों का नाम उल्लेख करके उनको नमस्कार है। ऋषभनाथ, अजितनाथ, सुपार्श्वनाथ, नेमिनाथ (अपर नाम अरिष्टनेमि) वीरनाथ (अपरनाम महावीर) आदि जैन अर्हतों (तीर्थङ्करों) के नाम हैं।

यजुर्वेद में देखिये—

ॐ नमो अर्हन्तो ऋषभो ॐ ज्ञातारमिन्द्रं वृषभं वदन्ति अमृतारमिन्द्रं हेव सुगतं सुपार्श्वमिन्द्रमाहुरिति स्वाहा।

वाजस्यनु प्रसव आवभूवेमा च विश्वभुवनानि सर्वतः। नेमिराजा परियाति विद्वान् प्रजां पुष्टिं वर्धयमानो अस्मै स्वाहा

अ० ६ मं० २५।

अर्थः—भावयज्ञ (आत्म स्वरूप) को प्रकट करने वाले इस संसार के सब जीवों को सब प्रकार से यथार्थ रूप से कह कर जो सर्वज्ञ नेमिनाथ स्वामी प्रकट करेंगे हैं, जिन के

उपदेश से जीवों की आत्मा पुष्ट होती है, उन नेमिनाथ तीर्थङ्कर के लिये आहुति समर्पण है।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति न पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥
अ० २५ मं० १९।

इत्यादि और भी बहुत सी श्रुतियां यजुर्वेद में ऐसी विद्यमान हैं, जो कि बहुत आदर भाव के साथ जैन तीर्थङ्करों को नमस्कार करने लिये प्रेरित कर रही हैं।

अब कुछ नमूना सामवेद में भी अवलोकन कीजिये यथाः—
अप्पा यदि मेषयमान रोदसी इमा च विश्वा भुवनानि मन्मना यूथेन निष्टा वृषभो विराजसि। ३ अ० १ मं० ११।

न ये दिवः पृथिव्या अन्तमापुर्न मायाभिर्नधदा पर्यभुवन् युजं वज्र वृषभश्चक्र इन्द्रो निर्ज्योतिषा तमसोगा अदुक्षत्।
१० प० १०३।

इम स्तोम अर्हते जातवेदसे रथं इव समहेयम मनीषया भद्रा हि न प्रमन्ति अस्य संसदि अग्ने सख्ये मारिषामवयं तवः।
१० अ० प० ८५।

तरणि रित्सपासति वीजं पुरं ध्याः युजा आव इन्द्र पुरुहूतं नमोगिरा नेमिं तष्टेव शुद्रम् ॥ २० अ० ५ म० ३ च० १७ ॥

इत्यादि और भी बहुत से मन्त्र सामवेद व अथर्ववेद में जैन तीर्थङ्करों के लिये पूज्यभाव प्रकट करने वाले विद्यमान हैं जिन का उल्लेख यहां स्थानाभाव के कारण नहीं किया गया। इसके लिये पाठक उदार हृदय से क्षमा प्रदान करें।

इन उपरोक्त प्रमाणों से ही अच्छी तरह सिद्ध हो चुका है कि वेदों की उत्पत्ति के पहिले जैनधर्म इस पृथ्वीतल पर बड़े प्रभाव के साथ फैला हुआ था इसी कारण पुराण निर्माता के समान वेदों के रचयिता ऋषियों ने भी अपने मन्त्रों में जैन तीर्थङ्करों को नमस्कार किया है। अतः कोई भी वेदों को मानने वाला निष्पक्ष विद्वान् वेदों की साक्षी देकर जैन-धर्म को वैदिकधर्म से पीछे उत्पन्न हुआ नहीं कह सकता। यदि महाभारत के समय देखा जाय तो उस समय "श्री नेमि-नाथ" बाईसवें तीर्थङ्कर विद्यमान थे, जैसा कि उस समय के बने हुये ग्रन्थों से भी प्रकट होता है, अतः उस समय जैनधर्म का सद्भाव स्वयम् सिद्ध है। यदि रामचन्द्र जी लक्ष्मण जी के समय का विचार किया जाय, तो उस समय भी जैनधर्म की सत्ता पाई जाती है, क्योंकि एक तो उस समय जैनों के २० वें तीर्थङ्कर श्री मुनि सुव्रतनाथ जी ने जैनधर्म का प्रचार किया था जिसका प्रभाव उस समय के बने हुये वशिष्ठकृत "योग वशिष्ठ" के पूर्व लिखित श्लोक से प्रकट होता है, अब विचार लीजिये उस समय से पहिले १६ तीर्थङ्कर और हो चुके थे। जिन्होंने जैन धर्म का प्रचार किया था तब जैनधर्म इस संसार में कितने समय से प्रचलित हुआ था। भगवान् ऋषभनाथजी जी सब से पहिले जैनधर्म को प्रचार में लाये थे। अतः उन का सद्भाव काल मालूम हो जाने पर जैनधर्म का प्रारम्भ काल ज्ञात हो सकता है, इस बात के लिये हमारे अनुभव से इतिहास तो हार मानता है क्योंकि वह बेचारा तो ४—५ हज़ार वर्ष से पहिले जमाने का हाल प्रकट करने में असमर्थ है, तब यह स्वयम् सिद्ध है कि श्री ऋषभदेव भगवान के

समय को प्रकट करना उसकी शक्ति के बाहर है। अतएव अब इस विषय को अधिक न बढ़ा कर "बुद्धिमान को इशारा ही काफी है" इस युक्ति के अनुसार यहीं स्थगित करते हैं। आशा है, निष्पक्ष विचारशील पाठक सच्ची बात ग्रहण करने में न हिचकिचावेंगे।

"जैनधर्म की अहिंसा सांसारिक कार्य में बाधक नहीं है"।

अहिंसा जैनधर्म का मुख्य उपदेश और मुद्रा लेख है। अहिंसा हिंसा से बचने का नाम है। कषाय के वश होकर अपने तथा दूसरे का प्राणों के घात करना हिंसा है। क्रोध, मान माया, लोभ ये कषाय हैं, ज्ञान आत्मा का स्वभाव है और इन कषायों से ज्ञान नष्ट होता है। जैनधर्म की अहिंसा यह नहीं कहती कि यदि कोई शत्रु देश पर चढ़ाई करे तो उस समय अपने देश और अपनी प्रजा की रक्षा के लिये उससे युद्ध न करे, हां यदि विना किसी कारण के केवल लोभ का दास होकर राजा दूसरों का देश छीनने के लिये युद्ध करता है, सहस्त्रों मनुष्यों का खून करता है तो अवश्य हिंसा है।

जैनधर्म की अहिंसा का सिद्धान्त गृहस्थ को अपने कार्य्य व्यवहार करने का निषेध नहीं करती, जैनधर्म में हिंसा के दो भेद किये गये हैं (१) संकल्पी (२) आरंभी। हिंसा कषायों के वशीभूत होकर केवल स्वार्थ और लाभ के लिये दूसरे को हानि पहुंचाने अथवा मारने के अभिप्राय से जो दूसरों का वध किया जाता है वह सङ्कल्पी हिंसा है, इससे गृहस्थ को भी बचना चाहिये। परन्तु कषाय के वश न होकर सांसारिक कार्यों के करने में, परोपकार करने में अपनी तथा दूसरों की अन्याय से रक्षा करने में जो हिंसा होती है वह आरंभी हिंसा कहलाती

हैं ऐसी हिंसा के लिये गृहस्थ को सर्वथा मनाई नहीं है। ऐसी हिंसा में हिंसा करने वाले के दिल में दूसरे के साथ कोई द्वेष या शत्रुता का भाव नहीं होता है। दूसरे को वध करने की इच्छा नहीं होती है, उसके भाव तो कार्य व्यवहार करने या दूसरों की रक्षा करने या परोपकार करने के ही होते हैं।

जैनधर्म की अहिंसा यह कदापि नहीं कहती कि अपने शरीर को पुष्ट मत करो, ताकत मत दो, व्यायाम मत करो और उसे सुखादो। हां यह जरूर कहती है कि जिस प्रकार डाका मार कर, दूसरों की सम्पत्ति छीनकर अपना धन बढ़ाना अच्छा नहीं, उसी प्रकार दूसरे जीवों को मारकर उनके शरीर से अपने शरीर को हृष्ट पुष्ट करना अच्छा नहीं है। अपने शरीर को सात्विक भोजन दो, तामसी भोजन मत दो।

जाति में कायरता और नपुन्सकता का कारण अहिंसा कदापि नहीं है। इसका मुख्य कारण ब्रह्मचर्य का पालन न करना, वीर्य का नाश कर देना, बाल्यकाल में विवाह कर देना, मादक पदार्थ का अधिक प्रचार होना, जिसके कारण से लोगों की प्रकृति ऐसी हो गई है कि कषायें अधिक प्रबल होकर विषय वासना की ओर उनका चित्त झुक जाता है और वे ब्रह्मचर्य स्थिर नहीं रख सकते।

यह विचार कि जैनमत की अहिंसा ने लोगों के दिलों को कोमल बना कर उनको कायर, निर्बल और नपुंसक बना दिया, सर्वथा निर्मूल है अहिंसाधर्म का पालन कायर, निर्बल और नपुन्सकों से कदापि नहीं हो सकता है। अहिंसा का पालन वही कर सकता है, जिसने अपनी कषायों का शमन

कर लिया हो, और इन्द्रियों का दमन कर लिया हो। अहिंसा धर्म पर वही आरूढ़ हो सकता है जो शरीर के दासत्व और स्वार्थपरता को एक ओर रख कर, सब जीवों का हृदय से शुभचिन्तक हो, और सब से निःस्वार्थ भ्रातृभाव रखता हो। क्या कायर और निर्बल इन्द्रियों को दमन कर सकते हैं? क्या नपुन्सक शरीर की गुलामी और स्वार्थपरता को छोड़ सकते हैं? कभी नहीं। जैनधर्म की अहिंसा क्षत्रिय से यह नहीं कहती है कि तुम न्याय का युद्ध मत करो, दया और प्रजा की रक्षा मत करो, अन्यायी को दण्ड मत दो, वैश्य को व्यापारादि करने से मना नहीं करती, शूद्र का शिल्प तथा सेवा आदि करने से मना नहीं करती। जैनधर्म की अहिंसा यह अवश्य सब से कहती है कि अपनी जिह्वा के क्षणिक स्वाद के लिये अथवा अपना शरीर को मोटा ताजा करने के लिये दूसरे जीवों का वध करके उनके शरीर को मत खाओ। अपने शौक के लिये दूसरे जानवरों का शिकार मत करो, धर्म की आड़ में देवी देवताओं के आगे वेचारे निरपराध, मूक प्राणियों का रक्त मत बहाओ, जैनधर्म के तीर्थङ्कर सब चक्रवर्ती क्षत्रिय हुये हैं, उन्होंने राज्य किये हैं। बड़े २ युद्ध किये हैं और उन में विजय पाई हैं, देश और प्रजा की रक्षा की है। ज्ञान. विज्ञान, कला कौशल को उन्नति दी है। हां, यह अवश्य है कि उन्होंने विचारे मूक प्राणियों का शिकार नहीं किया, उन को मार कर उनके शरीर से पेट नहीं भरा है। धर्म के नाम से खून बहाने को आज्ञा नहीं दी है।

जाति में शारीरिक बल और लौकिक उन्नति के लिये बालकों को कम से कम २१ वर्ष अवस्था तक ब्रह्मचारी रखना

चाहिये। वचपन की शादी को छोड़िये, वच्चों को बुरी संगत और संसार की चमक दमक से वचाइये, मादक पदार्थ जो किड़ों रोगों की खान है, छुड़ाइये। सादा, जल्दी पचनेवाला ए भोजन, घी, दूध, मेवे आदि खिलाइये। फिर देखिये जाति शारीरिक वल, दीर्घायु और हर प्रकार की उन्नति होती ायगी।
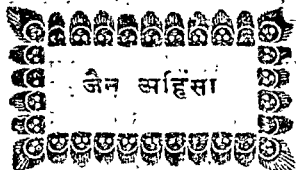
(माडर्न रिव्यू में श्रीयुत लीलाधर वत्सल के प्रकाशित लेख का कुछ अश)

(१) जैनधर्म का आसन अहिंसाधर्म के मानने वाले मतों में सब से प्रथम और उत्कृष्ट है।

(२) जैनधर्म की यह आज्ञा कभी नहीं है, कि जब सबल निर्बल को सतावे या कष्ट पहुंचावे तो उदासीन हो बैठ जाना चाहिये। गृहस्थों को यह कभी भी बरदाश्त नहीं हो सकता और न होना चाहिये। वे पदलोलुपियों, आततायी लोगों, बदमाशों, विषय लम्पटियों, स्त्रियों के सतीत्व बिगाड़ने वाले, अधर्मियों, लुटेरे और डाकुओं के अन्यायों और अत्याचारों को चुपचाप सहन नहीं कर सकते।

(३) अहिंसा का वास्तव में यह तात्पर्य है कि गृहस्थों को केवल अपनी मनमोज तथा एक साधारण आवश्यकता के लिये हिंसा नहीं करनी चाहिये और न अपनी दुरषणाओं का पूर्ति ही के लिये प्रेरणा करनी चाहिये।

(४) जैनियों की अहिंसा व्यक्तिगत स्वाभिमान और सम्मान में बाधा नहीं डालती और न इससे साहस, वीरता, देशोभाव, देश प्रेम, कुटुम्ब स्नेह तथा जातीय गौरव की हानि होती है।

(५) वास्तव में जैन अहिंसा का यह आदेश नहीं है कि कोई मनुष्य आत्मरक्षा तथा आत्माभिमान को कायम रखने के लिये न्यायमोदित शक्ति का उपयोग न करे।

(६) जैन अहिंसा अपनी स्त्री, बेटी, बहिन तथा माता की लाज की रक्षा न करने को कभी बाध्य नहीं करती।

(७) जैन अहिंसा केवल निषेधात्मक उपदेश ही नहीं है, अर्थात् किसी को न सताओ, किन्तु उस में भारी तत्व भरा हुआ है। इस से हम वास्तविक नैतिक शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। दूसरों की सेवा करने के विषय में यह पक्की हांमी भरती हैं। हम अपनी जिन्दगी काटें, हम को दूसरों से कुछ सरोकार नहीं, इत्यादि, स्वार्थमय शिक्षा जैन अहिंसा नहीं देती है। प्रत्युतः मानव जाति के जीवन में परस्पर हिले मिले रहने तथा सहायक बने रहने के लिये हम को उत्तेजित करती है।

(८) जैनधर्म भी जाति किसी विशेष की सर्वोच्चता तथा सर्वोत्कृष्टता को मान्य नहीं समझता है और न जैनधर्म को यह

भी मान्य है कि कोई मनुष्य उचित काम करते हुए भी देवताओं के प्रकोप का शिकार बन जाता है।

(६) मान लिया कि भारतवर्ष से बहुत से सद्गुण उठ गये हैं किन्तु गुणों के उठ जाने में अहिंसा को जैनों या अजैनों को कारण बताना निर्मूल है, क्योंकि हम देखते हैं कि भारतवर्ष में अहिंसा धर्म को न मानने वाली कितनी जातियां में उन गुणों को बिलकुल ही सद्भाव नहीं है।

श्रीमान् महामान्य कर्मवीर महात्मा गांधी जी ने अहिंसा धर्म के विषय में लाला लाजपतिराय जी को उत्तर देते हुए "माडन रिव्यू" VOL-20-October, 1916 में अच्छा प्रकाश डाला है उस लेख का कुछ भाग पाठकों के अवलोकनार्थ हिन्दी भावार्थ सहित नीचे दिया जाता है:—

Our shastras seem to teach that a man who really practises Ahinsa its fullness has the world at his feet he so affects his surroundings that even the snakes and other venomous reptiles do him no harm. This is said to have been the experience of it, Francis of Assisi.

In its negative from it means not injuring any living being whether by body or mind. I may not therefore hurt the person of any wrong doer, or bear any ill-will to him and so cause him mental suffering this statement does not cover suffering caused to the wrong doer by natural acts of mine which do not proceed from ill-will. It therefore does not prevent me from with drawing from his presence a child whom he we shall imagine is about to strike. Indeed the proper practice of Ahinsa requires me to withdraw the intended victim from the wrong doer if I am in any way whatsoever the guardian of such a child.

In its prositive form Ahinsa means the largest love, the greatest charity. If I am a follower of Ahinsa I must love my enemy I must apply the same rules to the wrong doer who is my enemy or stranger to me as I would to my wrong doing Father or son. This active Ahinsa necessarily includes truth and fearlessness. A man cannot deceive the loved one he does not fear or frighten him or her अभयदान (Gift of life) is the greatest of all gifts A man who gives it in reality disarms all hostility. He has paved the way for an honourable understanding and none who is himself subject to fear can best-ow that gift. He must therefore he-himself fear less A man cannot then practice Ahinsa and be a coward at the same time The practice of Ahinsa calls forth the greatest courage. It is the most soldierly of soldier's virtues.

He is the true soldier who knows how to die and stand his ground in the midst of a hail of bullets such a one was Ambarish who stood his ground, without lifting a finger though, Durvasa did his worst.

Ahinsa truly understood, is in my humble openion a panacea for all evils mundane and, extra

mundane. We can never over do it just at present we are not doing it at all Ahinsa does not displace the practice of other virtues but renders their practice imperatively necessary before it can be prctised even in its rudiments Lalaji need not fear the Ahinsa of his Father's faith. Mahavir and Buddha were soldiers and so was Folstoy. Only they saw deeper and truer into their profession and found the secred of a true happy, honourable and godly life. Let us be joint sharers with these teachers and his land of ours wil once more be the abode of Gods.

हमारे शास्त्र हमको यह शिक्षा देते हैं कि जो मनुष्य अहिंसा का भली भांति पालन करता है उसके चरणों में सारी दुनियां नमस्कार करती है, उसका प्रभाव इतना भारी होता है कि उसको सर्प अथवा कोई भी विषैले जानवर हानि नहीं पहुंचा सकते हैं। यह सेंट फ्रांसिस असीसी का अनुभव है।

इसका एक अर्थ यह है कि किसी प्राणी को शरीर अथवा मन से कष्ट नहीं पहुंचाना चाहिये। इस लिये मुझे किसी भी बुरा (अनीति) करने वाले को कष्ट नहीं पहुंचाना चाहिये अथवा ऐसा बुरा नहीं कहना चाहिये जिससे उसको मानसिक कष्ट पहुँचे। इस में वह कष्ट नहीं आया है कि जो मेरे स्वाभाविक कार्यों से विना किसी बुरे विचार के किसी बुरा (अनीति) करने को पहुंचे। अस्तु मैं किसी बच्चे को जिस को वह

पीटना चाहता हो उसके सामने से हटाऊं तो यह अहिंसा है यथार्थ में यदि मुझे अहिंसा का सच्चा अभ्यास है तो मैं उस बच्चे का वास्तव में रक्षक हो हूं और मेरा धर्म है कि अनर्थकारी के सामने से उसके शिकार को हटा दूं।

दूसरा अर्थ अहिंसा का भारी दान है। यदि मैं अहिंसा का पालन करने वाला हूं तो मुझे मेरे शत्रुओं से प्रेम करना चाहिये। मुझे वही नियम किसी भी बुरा करने वाले के साथ प्रयोग करना चाहिये चाहे वह मेरा शत्रु हो अथवा अनजान हो जो कि मैं ऐसा करने पर अपने पिता अथवा पुत्र के साथ करता हूं। ऐसी अहिंसा में सत्यता और निर्भयता है। मनुष्य अपने प्रेमी को धोखा नहीं देसकता है नतो वह उसको भय दिखा सकता है और न स्वय उससे डरता है। अभयदान सब दानों में से श्रेष्ठ जो सचमुच अभयदान देता है वह अपने शत्रुओं को शस्त्रहीन कर देता है अर्थात उनसे उस को कोई भय नहीं रहता है। उसने अपने मार्ग को प्रतिष्ठित बातों से सुसज्जित बना दिया है। वह मनुष्य जो भयभीत है अभयदान नहीं देसकता है। इस लिये मनुष्य को स्वयं निर्भय होजाना चाहिये। कोई मनुष्य अहिंसा अनुयायी होकर डरपोक नहीं होसकता है। अहिंसा का पालन बहुत बड़े साहस का कार्य है। यह सिपाही के गुणों में एक बहुत बड़ा गुण है।

वही सच्चा सिपाही है जो मरना जानता है और रणभूमि में गोलियों की वर्षा के बीच खड़ा रहता है। ऐसा एक अम्बरीष ही था जो कि बिना उंगली उठाये ही रणभूमि में खड़ा रहा यद्यपि दुर्वासा ने उसके लिये बहुत बुरा किया।

यथार्थ में अहिंसा मेरी राय में सब बुरी बातों के लिये सर्वौषधि है हम उसकी पूरी प्रशंसा नहीं कर सकते हैं वास्तव में हम इस काल में कुछ भी नहीं कर रहे हैं। अहिंसा दूसरे गुणों को दूर नहीं करती है किन्तु प्रारम्भ में ही वह दूसरे गुणों को अपने साथ मिलाती है। लालाजी को अहिंसा से डरना न चाहिये जो कि उनके पिता का धर्म है। महावीर और बुद्ध सिपाही थे, और ऐसा ही टॉलस्टॉय था। उन्होंने अपने कार्य को बड़ी बारीकी और सत्यता से देखा है और उन्होंने उसमें सत्यता का भेद, आनन्द, प्रतिष्ठा और ईश्वरीय जीवन को पाया है। हमें भी उन महान अध्यापकों के साथ भाग लेना चाहिये और ऐसा करने से यह भूमि एक समय पुनः देवताओं के रहने योग्य स्थान हो जावेगी।

उपरोक्त लेखों के अवलोकन से पाठकों को यह तो अच्छी तौर पर ज्ञात हो ही गया होगा। कि अहिंसा कायर धर्म नहीं है, बल्कि वीरत्व प्रधान धर्म है। इसको बड़े से बड़े राजा महाराजा से लेकर ग़रीब से ग़रीब मनुष्य तक ग्रहण कर सकते हैं। इसके सिद्धांत सर्वव्यापी होने के कारण किसी को बाधक नहीं हो सकते। हां, इस अहिंसाधर्म के ग्रहण करने वाले को आत्म भोग अवश्य देना पड़ता है उन की आत्मा में उच्च शक्तियों का विकास हो जाता है यहां तक कि वे महान आत्माएं सर्वज्ञ होकर मोक्ष के अक्षय सुख को प्राप्त कर लेती हैं। यह विशेषता इसी धर्म में पाई जाती है। जिस में यह सिद्धान्त परिपूर्ण रूप से विद्यमान है।

यथार्थ में विचार करेंगे तो अहिंसाधर्म के स्वरूप को पूर्णतया न समझ सकने के कारण से ही देश का अधःपतन हुआ है। वर्तमान समय में जितने भी अवनति के कारण दृष्टिगोचर हो रहे हैं। वह सब अहिंसाधर्म के अभाव का ही कारण है, अगर यह सर्वोच्च अहिंसाधर्म वास्तविक तौर पर अंगीकार कर लिया जाय, तो देश थोड़े ही काल में उन्नति के उच्च शिखर पर पहुंच सकता है, हम यह दावे के साथ कह सकते हैं।

हम प्रत्येक बन्धु से आग्रह-पूर्वक निवेदन करते हैं कि वे हठाग्रह व हृदय की संकीर्णता को छोड़कर अपनी आत्मोन्नति के सच्चे मार्ग को ग्रहण करेंगे।
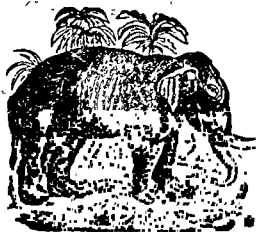
॥ श्री ॥

श्रीमान् चरित्रनायक जी रचित गज़ल-स्तवन इत्यादि अनेक भावपूर्ण वैराग्योत्पादक शिक्षापूर्ण राग रागनियों में अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं कि जिनका परिचय पाठकों को पहिले कराया जा चुका है, उन कविताओं में से कुछ शिक्षापूर्ण स्तवनों का संक्षिप्त नमूना पाठकों के अवलोकनार्थ नीचे दिया जाता है आशा है पाठक इन्हें पढ़कर शिक्षा ग्रहण करेंगे।

तर्ज—या हसीना वस मदीना, करबला में तूं न जा।

॥ गजल (चौवीस तीर्थंकरों) की स्तुति ॥

दिल चमन तेरा रहे, जिनराज का स्मरण किया। संसार से तिर जायगा, जिनराज का स्मरण किया ॥ टेर ॥ अव्वल ऋषभ, अजित, सम्भव, अभिनन्दन हैं जबर। नाम लेते पाक हो, जिनराज का स्मरण किया ॥ १ ॥ सुमति, पद्म, सुपार्श्व, चन्दाप्रभु, की सेवा करो। आवागमन मिट जायगा, जिनराज का स्मरण किया ॥ २ ॥ सुविधि, शीतल श्रेयांस, वासुपूज्य जग में भानु सम। मिथ्यात्व अंधेरा मिटे, जिनराज का स्मरण किया ॥ ३ ॥ विमल, अनन्त, धर्म, शांतिनाथ नित्य शांति करे। आनन्द ही आनन्द रहे, जिनराज का स्मरण किया ॥ ४ ॥ कुंथु, अरं, मल्लि, मुनि सुव्रत सदा हृदय वसे। आशा पूर्ण हो तेरी, जिनराज का स्मरण किया ॥ ५ ॥ नेमि, अरिष्ट नेमी, प्रभु पार्श्व महावीर सार है। सुरनर नमे कर जोड़ के, जिनराज का स्मरण किया ॥ ६ ॥ इन्होंने अवतार ले सत्य धर्म को प्रकट किया। चौथमल होवे सुखी, जिनराज का स्मरण किया ॥ ७ ॥

॥ गजल सत्संग की ॥

लाखों पापी तिर गए, सत्संग के प्रताप से। छिन में बेड़ा पार है, सत्सङ्ग के परताप से ॥ टेर ॥ सत्सङ्ग का दरिया भरा, कोई न्हाले इस में आन के। कट जांय तन के पाप सब सत्सङ्ग के परताप से ॥ १ ॥ लोह का सुवर्ण बने, पारस के परसंग से। लट की भंवरी होती है, सत्सङ्ग के परताप से ॥ २ ॥ राजा परदेशी हुवा, कर खून में रहते भरे। उपदेश सुन ज्ञानी हुवा, सत्सङ्ग के परताप से ॥ ३ ॥ संयती, राजा शिकारी, हिरन के मारा था तीर। राज्य तज साधू हुवा, सत्सङ्ग के परताप से ॥ ४ ॥ अर्जुन माला कारने, मनुष्य की हत्या करी। छः मास में मुक्ति गया, सत्संग के परताप से। ॥ ५ ॥ एलायची एक चोर था, श्रेणिक नामा भूपति। कार्य सिद्ध उनका हुवा, सत्सङ्ग के प्रताप से ॥ ६ ॥ सत्सङ्ग की महिमा बड़ी, है दोन दुनियां बीच में। चौथमल कहे हो भला सत्सङ्ग के परताप से ॥ ७ ॥

गजल नवयुवकों की।

उठो ब्रादर कस कमर, तुम धर्म की रक्षा करो। श्रीवीर के तुम पुत्र होकर, गीदड़ों से क्यों डरो ॥ टेर ॥ दुर्गति पड़ते जो प्राणी, को धर्म का आधार है। यह स्वर्ग मुक्ति में रखे, तुम धर्म की रक्षा करो ॥ १ ॥ धर्मी पुरुष को देख पापी, गज श्वान वत् निंदा करे। हो सिंह मुआफिक जवाब दो, तुम धर्म की रक्षा करो ॥ २ ॥ धन को देकर तन रखो, तन देके रखो लाज को। धन, लाज, तन अर्पण करो, तुम धर्म की रक्षा करो ॥ ३ ॥ माता पिता भाई, जंवाई, दोस्त फिरे तो डर नहीं। प्रचार धर्म से मत हटो, तुम धर्म की रक्षा करो ॥ ४ ॥

धैर्य का धारो धनुष्य, और तीर मारो तर्क का। कुयुक्ति ब खंडन करो तुम धर्म की रक्षा करो ॥ ५ ॥ धर्मसिंह मुं लवजी ऋषि, लोकाशाह सङ्कट सहा। धर्म को फैला दिय तुम धर्म की रक्षा करो ॥ ६ ॥ गुरू के परसाद से, कहे चौथ मल उत्साहियों। मत हटो पीछे कभी, तुम धर्म की रक्ष करो ॥ ७ ॥

गजल नौजवानों के जागने को।

अय जवानों चेतो जल्दी, करके कुछ दिखलाइयो। उं अब बांधो कमर तुम, करके कुछ दिखलाइयो ॥ टेर किस नींद में सोते पड़े, क्या दिल में रखा सोच के। बेक वक्त मत गमावो, करके कुछ दिखलाइयो ॥ १ ॥ यश का डंक बजा, इस भूमि को रोशन करो। ऐश में भूलो मती, तु करके कुछ दिखलाइयो ॥ २ ॥ हिम्मत विना दौलत नह दौलत विना ताकत कहां। फिर मर्द की हुर्मत कहां, कर तो कुछ दिखलाइयो ॥ ३ ॥ हिकारत की नज़र से, सब देख तुम को सही। मरना तुम्हें इस से बहत्तर, करके कुछ दिख लाइयो ॥ ४ ॥ जापान यूरोप देश ने, कीनी तरक्की कि कदर। वे भी तो इन्सान हैं, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ ५ उठा के गफलत का पड़दा, सुधारलो हालत सभी। इन्सा को मुश्किल नहीं, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ ६ ॥ जे इरादा तुम करो तो, बीच में छोड़ो मती। मजबूत रहो नि कौल पर, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ ७ ॥ नीति, रीति शांति क्षमा, कर्त्तव्य में मशगूल रहो। खुद और का चां भला, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ ८ ॥ काम अपना

बजाना, लोकों से डरना नहीं। उत्साह से बढ़ते चलो, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ ९ ॥ सन्तान का चाहो भला, रंडी नचाना छोड़दो। वृद्ध, बाल विवाह बन्द करो, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ १० ॥ फिजूल खर्ची दो मिटा, मुंह फूट का काला करो। धर्म जाति की उन्नति, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥ ११ ॥ दुनिया अव्वल सुधर जा तो, दीन कोई मुश्किल नहीं, । चौथमल कहे इस लिये, करके तो कुछ दिखलाइयो ॥१२॥

गज़ल नेक नसीहत की।

दिल सताना नहीं रवा, यह खुदा का फरमान है। खास इबादत के लिये, पैदा हुवा इन्सान है ॥ टेर ॥ दिल बड़ी है, चीज जहां में, खोल के देखो चशम। दिल गया तो क्या रहा मुर्दा तो वह स्मशान है ॥ १ ॥ जुल्म जो करता उसे, हाकिम भी यहां पर दे सजा। मुआफ हरगिज होता नहीं, कानून के दरम्यान है ॥ २ ॥ जैसे अपनी जान का, आराम तो प्यारा लगे। ऐसे गैरों को समझ तू, क्यों बना नादान है ॥ ३ ॥ नेकी का बदल-नेक है, यह कुरान में लिखा सफा। मत बदी पर कस कमर, तू क्यों हुवा बे इमाम है ॥ ४ ॥ वे गुफ्तगू दोजख में, गिरफ्तार तो होगा सही। गिन्ती वहां होती नहीं, चाहे राजा या दीवान है ॥ ५ ॥ बैठकर तू तख्त पर, गरीबों की तेने नहीं सुनी। फरीश्ते वहां पीटते होता बड़ा हैरान है ॥ ६ ॥ गले कातिल के वहां, फेरायगा लेके छुरा। इन्सान होके न गिने यह भी तो कोई जान है ॥ ७ ॥ रहम को लाके जरा तू, सख्त दिल को छोड़ दे। चौथमल कहे हो भला, जो इस तरफ कुछ ध्यान है ॥ ८ ॥

गजल क्रोध (गुस्सा निषेध पर)

आदत तेरी गई बिगड़, इस क्रोध के परताप से अजीजों को बुरा लगे, इस क्रोध के परताप से ॥ टेर दुश्मन से बढ़ कर है यही, मोहब्बत तुड़ावै मिनिट में । स मुआफिक डरे तुझ से, क्रोध के परताप से ॥ १ ॥ सलव पड़े मुंह पर तुर्त, कम्बे मानिन्द जिन्द के । चश्म भी कै बने, इस क्रोध के परताप से ॥ २ ॥ जहर या फांसी को ख पानी में पड़ कई मरगये । वतन कर गये तर्क कई, इसक्रो के परताप से ॥ ३ ॥ बाल बच्चों को भी माता, क्रोध के व फैंकदे । कुछ सूझता उस मे नहीं; इस क्रोध के परताप ॥ ४ ॥ चंडरुद्र आचार्य की, मिसाल पर करिये निगाह । ज चंडकोसा हुवा, इस क्रोध के परताप से ॥ ५ ॥ दिल भी का न रहे, नुकसान कर तोता वही । धर्म कर्म भी न गिने, इ क्रोध के परताप से ॥ ६ ॥ खुद जले पर को जलावे, विवे की हानि करे । सूख जावे खून उसका, क्रोध के परताप ॥ ७ ॥ जिन के लिये हंसना बुरा, विराग को जैसे हवा । उ इन्सान के हक में समझ, इस क्रोधके परताप से ॥ ८ ॥ शैता का फरजन्द यह और जाहिलों का दोस्त है । बदकार ब चाचा लगे, इस क्रोध के परताप से ॥ ९ ॥ इबादत फाक कसी, सब खाक में देवे मिला । दोजख का मुंह देखेगा, इस क्रोधके परताप से ॥१०॥ चाण्डाल से बदतर यही, गुस्सा बड़ हराम है। कहे चौथमल कब हो भला, इस क्रोधके परतापसे॥११

गजल गरूर (मान) निषेध पर ।

सदा यहां रहना नहीं तूं, मान करना छोड़दे । शहनशा भी न रहे, तूं मान करना छोड़दे ॥ टेर ॥ जैसे खिले हैं फूल

गुलशन में, अज्ञीजाँ देखलो। आखिर तो वह कुम्हलायगा, तूं मान करना छोड़दे ॥ १ ॥ नूर से वे पूर थे, लाखों उठाते हुक्म को। सो खाक में वे मिल गये, तूं मान करना छोड़दे ॥ २ ॥ परशु ने क्षत्री हने, शम्भूम ने मारा उसे। शम्भूम भी यहां न रहा, तू मान करना छोड़दे ॥ ३ ॥ कंस जरासिंध को, श्री कृष्ण ने मारा सही। फिर जद ने उन को हना, तूं मान करना छोड़दे ॥ ४ ॥ रावण से इन्दर दवा, लक्ष्मण ने रावण को हना। न वह रहा न यह रहा, तूं मान करना छोड़दे ॥ ५ ॥ रब्ब का हुक्म माना नहीं, अज्ञाजिल काफिर बन गया। शैतान सब उसको कहे, तूं मान करना छोड़दे ॥ ६ ॥ गुरु के परसाद से कहे, चौथमल प्यारे सुनो। अजिजी सब में बडी, तूं मान करना छोड़दे ॥ ७ ॥

गजल दगाबाजी (कपट) निषेध पर।

जीना तुझे यहां चार दिन, तूं दगा करना छोड़दे। पाक रख दिल को सदा, तू दगा करना छोड़दे ॥ टेक ॥ दगा कहो या कपट जाल, फरेब या निरघर कहो। चीता चोर कमानवत, तू दगा करना छोड़दे ॥ १ ॥ चलते उठते देखते, बोलते हसते दगा। तोलने और नापने में, दगा करना छोड़दे ॥ २ ॥ माता कहीं बहने कहीं, पर नार को छलता फिरे। फर्यो जाल कर जाहिल बने, तू दगा करना छोड़दे ॥ ३ ॥ मर्द की औरत बने, औरत का भी पुरुष हो। लख चौरासी योनि भुगते, दगा करना छोड़दे ॥ ४ ॥ दगा से आ पोतना ने, कृष्ण को लिया गोद में। नतीजा उसको मिला, तूं दगा करना छोड़दे ॥ ५ ॥ कौरवों ने, पांडवों से, दगा कर जूवा रमी। हार कौरवों की

हुई, तू दगा करना छोडदे ॥ ६ ॥ कुरान पुरान में है मना, कानून में लिखा सजा। महावीर का फरमान है, तूं दगा करना छोडदे ॥ ७ ॥ शिकारी करके दगा, जीवों की हिंसा वह करे। मंजार और बुग की तरह, तूं दगा करना छोडदे ॥ ८ ॥ इज्जत में आता फरक, भरोसा कोई न गिने। मित्रता भी टूट जाती, दगा करना छोडदे ॥ ९ ॥ क्या लाया लेजायगा, तूं गौर कर इस पर जरा। चौथमल कहे सरल हो, तूं दगा करना छोडदे ॥ १० ॥

गजल सबर (संतोष) की।

सबर नर को आती नहीं, इस लोभ के परताप से। लाखों मनुष्य मारे गये, इस लोभ के परताप से ॥ टेर ॥ पाप का वालिद बड़ा और जुल्म का सरताज है। वकील दोजख का बने, इस लोभ के परताप से ॥ १ ॥ अगर शहनशाह बने, सर्व मुल्क ताबे में रहे। तो भी ख्वाहिश न मिटे, इस लोभ के परताप से ॥ २ ॥ जाल में पक्षी पड़े और मच्छी कांटे से मरे। चोर जावे जेल में, इस लोभ के परताप से ॥ ३ ॥ ख्वाब में देखा न उसको, रोगी क्यों न नीच हो। गुलामी उसकी करे, इस लोभ के परताप से ॥ ४ ॥ काका भतीजा भाई भाई, वालिद या बेटा सज्जन। बीच कोर्ट के लड़े, इस लोभ के परताप से ॥ ५ ॥ शम्भूम चक्रवर्ती राजा, सेठ सागर की सुनो। दरियाव दोनों मरे इस लोभ के परताप से ॥ ६ ॥ जहां के कुल माल का मालिक बने तो कुछ नहीं। प्यारी तज परदेश जा, इस लोभ के परताप से ॥ ७ ॥ बाल बच्चे बेच दे, दुख दुर्गुणों की खान है। सम्यक्त्व भी रहता नहीं, इस लोभ के

परताप से ॥ ८ ॥ कहे चौथमल सतगुरु वचन, संतोष इसकी है दवा । और नसीहत नहीं लगे, इस लोभ के परताप से ॥६॥

ग़ज़ल कुव्यसन निषेध पर

लाखों व्यसनी मर गये, कुव्यसन के परसंग से । अय अज़ीज़ो बाज़ आओ, कुव्यसन के परसंग से ॥ टेर ॥ प्रथम जूवा है बुरा, इज़्ज़त धन रहता कहां । महाराज नल वनवास गए, कुव्यसन के परसंग से ॥ १ ॥ मांस भक्षण जो करे, उसके दया रहती नहीं । मनुस्मृति में है लिखा, कुव्यसन के परसंग से ॥ २ ॥ शराब यह ख़राब है, इन्सान को पागल करे । यादवों का क्या हुवा कुव्यसन के परसंग से ॥ ३॥ रण्डीबाज़ी है मना तुम से सुता उन के हुए । दामाद की गिनती करे, कुव्यसन के परसंग से ॥ ४ ४ ॥ जीव सताना नहीं रवा, क्यों क़त्ल कर क़ातिल बने । दोज़ख़ का मिजमान हो, कुव्यसन के परसंग से ॥ ५ ॥ माल जो पर का चुरावे, यहां भी हाकिम दे सज़ा । आराम वह पाता नहीं, कुव्यसन के परसङ्ग से ॥ ६ ॥ इश्क़ बुरा पर नार का, दिल में ज़रा तो गौर कर । कुछ नफ़ा मिलता नहीं, कुव्यसन के परसङ्ग से ॥ ७ ॥ गांजा, चण्डू, अफ़ीम, और भङ्ग तमाखू छोड़ दो । चौथमल कहे नहीं भला, कुव्यसन के परसङ्ग से ॥ ८ ॥

ग़ज़ल द्यूत (जूवा) निषेध पर ।

क़दर जो चाहे दिला तू, जूवाबाज़ी छोड़ दे । सर्व व्यसन (बदकार) का सरदार है, तू जूवाबाज़ी छोड़ दे ॥ टेर ॥

इश्क़ इस का है बुरा, नापाक दिल रहता सदा। रंजो ग़म की खान है तू, जूवावाज़ी छोड़ दे ॥ १ ॥ द्रौपदी के चीर छीने पाण्डवों के देखते। राज्य भी गया हाथ से, तू जूवावाज़ी छोड़ दे ॥ २ ॥ महाराजा नल जैसे वनवास में फिरते फिरे। और तो क्या चीज़ है तू, जूवावाज़ी छोड़ दे ॥ ३ ॥ अक्ल तेरी गुम करे, सत्य धर्म से करती जुदा। धनवान को निर्धन करे, तू जूवावाज़ी छोड़ दे ॥ ४ ॥ इल्म हुनर लिहाज़ जावे, झूठ चोरी दे सिखा। हुरमत भी इस में न रहे; तू जूवावाज़ी छोड़ दे ॥ ५ ॥ मकान और दुकान ज़ेवर, रखे गिरवे जायके। मा बाप जोरू नहीं कहे, तू जूवावाज़ी छोड़ दे ॥ ६ ॥ कई चावे वन गये, कई कम उमर में मर गये। फ़ायदा कुछ भी नहीं, तू जूवावाज़ी छोड़दे ॥ ७ ॥ दुनियां का रहे नहीं दीन का, गुरु का रहे नहीं पीर का। नर जन्म भी जावे निफल, तू जूवावाज़ी छोड़दे ॥ ८ ॥ गुरु के परसाद से, कहे चौथमल सुन तो ज़रा मान ले आराम होगा, तू जूवावाज़ी छोड़ दे ॥ ९ ॥

ग़ज़ल गोश्त (मांस) निषेध पर ।

सख़्त दिल हो जायगा तू, गोश्त खाना छोड़ दे। रहम फिर रहता नहीं तू, गोश्त खाना छोड़ दे ॥ टेर ॥ जो रहम दिल में न रहे, तो रहेमान फिर रहता है कब। वह बशर फिर कुछ नहीं, तू गोश्त खाना छोड़ दे ॥ १ ॥ जिस चीज़ से नफ़रत करे, वही गोश्त की पैदाश है। वह पाक फिर कैसे हुआ तू गोश्त खाना छोड़ दे ॥ २ ॥ गौ, बकरे, बैल, भैंसे, लाखों ही कई कट गए। दूध, दही, मंहगा हुआ, तू गोश्त खाना छोड़

दे ॥ ३ ॥ दूध में ताक़त बड़ी, वह गोश्त में है भी नहीं । पूछले कोई डाक्टरों से, गोश्त खाना छोड़दे ॥ ४ ॥ गोश्तखोर हैवान का चिन्ह, मिलता नहीं इन्सान में । नेक स्वादी मत बने, तू गोश्त खाना छोड़ दे ॥ ५ ॥ कुरान के अन्दर लिखा, खुराक आदम के लिये, पैदा किया गेहूं मेवा तू गोश्त खाना छोड़दे॥६॥ क़त्ल हैवानात के बिना, गोश्त कहो कैसे मिले । क़ातिल निजात पाता नहीं; तू गोश्त खाना छोड़दे ॥७॥ जैन सूत्रों बीच में, महावीर का फ़रमान है । मांस आहारी नर्क जावे तू गोश्त खाना छोड़ दे ॥ ८ ॥ जिस का मांस खाता यहां, वह उस को वहां पर खायगा । मनु ऋषि भी कह गये, तू गोश्त खाना छोड़ दे ॥ ६ ॥ नफ़स हरगिज़ नहीं मरे, फिर इबादत होती कहां । चौथमलकी मान नसीहत, तू गोश्त खाना छोड़ दे॥१०॥

ग़ज़ल शराब निषेध पर ।

अक़ल भ्रष्ट होती पलक में, शराब के परताप से ।

लाखों घर ग़ारत हुये, शराब के परताप से ॥ टेर ॥ शराब शौक महा बुरा, खुद की खबर रहती नहीं । जाना कहां जावे कहां, शराब के परताप से ॥ १ ॥ इज्जत और दानिशमंदी, जिस पर दे पानी फिरा । धनवान कई निर्धन बने, शराब के परताप से ॥ २ ॥ बकते २ हंस पड़े, और चौंक के फिर रो उठे । वेहोश हो हथियार ले, शराब के परताप से ॥ ३ ॥ चलते २ गिर पड़े, कपड़ा हटा निर्लज्ज बने । मक्खियें भिनका करें, शराब के परताप से ॥ ४ ॥ ज़ेवर को लेवे खोल लुच्चे, ले जेब से पैसे निकाल । कुत्ते देते मूत मुंह पर, शराब के परताप से ॥ ५ ॥

इन्साफ़ ही करते अदल जो, हज़ार की रक्षा करे। खुद की रक्षा नहीं वने, शराव के परताप से ॥ ६ ॥ कम उमर में मर गये, कई राज्य राजों का गया। यादवों का क्या हुआ, शराब के परताप से ॥ ७ ॥ नशे से पागल वने, पुलिस भी लेवे पकड़ क़ानून से मिलती सज़ा, शराव के परताप से ॥ ८ ॥ आठआने वह कमावे, ख़र्च रुपये का करे। चोरी को फिर वह करे, शराव के परताप से ॥ ९ ॥ जैन वैष्णव मुसलमान, अन्जील में भी है मना। कई रोगी वन गये, शराव के परताप से १० ॥ चौथमल कहै छोड़ दे तू, मान ले प्यारे अज़ीज़। आराम कोई पाता नहीं, शराव के परताप से ॥ ११ ॥

ग़ज़ल रण्डीवाज़ी के निषेध पर।

अय जवानो मानो मेरी, रण्डीवाज़ी छोड़ दो। कपट का भन्डार है, तुम रण्डीवाज़ी छोड़ दो ॥ टेर ॥ पौशाक़ उम्दा जिस्म पर सज, पान से मुंह को रचा। टेढ़ी निगाह से देखती, तुम रण्डीबाज़ी छोड़ दो ॥ १ ॥ धन होवे किस क़दर, इस चिन्ता में मशगूल रहे। मतलव की पूरी यार है, तुम रण्डीवाज़ी छोड़ दो ॥२॥ काम अन्ध पुरुष हो, मकड़ी के माफ़िक़ फांसले। गुलाम अपना वह बनावे, तुम रन्डीवाजी छोड़ दो ॥ ३ ॥ विषय अन्ध हो के सभी, वह माल घर का सौंप दे। मतलव विना आने न दे, तुम रन्डीवाज़ी छोड़ दो ॥ ४ ॥ इस की सोहवत में बड़ों का, वड़प्पन रहता नहीं। पानी फिरावे आबरू पर, तुम रन्डीवाज़ी छोड़ दो ॥ ५ ॥ सुज़ाक, गर्मी से सड़े, मुंह पर दमक रहती नहीं। कमज़ोर हो कई मर गये, तुम रन्डीवाज़ी

छोड़ दो ॥ ६ ॥ भरोसा कोई नहीं गिने, धर्म कर्म का होता है नाश। चौथमल कहे अय रफ़ीक़ों, रन्डीबाज़ी छोड़ दो ॥७॥

गज़ल शिकार निषेध पर।

स्याह दिल हो जायगा, शिकार करना छोड़ दे ॥ टेर ॥

क्यों ज़ुलम कर ज़ालिम बने, पापों से घट को क्यों भरे। दिन चार का जीना तुझे, शिकार करना छोड़ दे ॥ १ ॥ सूअर सांभर रोज हिरन, ख़रगोश जङ्गल के पशू। इन्सान को देखी डरे, शिकार करना छोड़ दे ॥ २ ॥ तेरा तो एक खेल है, और उनके तो जाते हैं प्राण। मत खून का प्यासा बने, शिकार करना छोड़ दे ॥ ३ ॥ बेक़सूरों को सतावे, खौफ़ तू लाता नहीं बदला फिर देना पड़े, शिकार करना छोड़ दे ॥ ४ ॥ जैसी प्यारी जान तुझ को, ऐसी गैरों की भी जान। रहम ला दिल में ज़रा, शिकार करना छोड़ दे ॥ ५ ॥ जितने पशु के बाल हैं, उतने जन्म क़ातिल मरे। मनुस्मृति में देख ले, शिकार करना छोड़ दे ॥ ६ ॥ हैवान आपस में लड़ाना, निशाना लगाना जान का। हदीस में लिखा मना, शिकार करना छोड़ दे ॥ ७ ॥ गर्भवती पशु हिरनी को, श्रेणिक ने मारा तीर से। वह नर्क के अन्दर गया, शिकार करना छोड़ दे ॥ ८ ॥ खून से होतो नरक, श्रीवीर का फ़रमान है। चौथमल कहे समझ ले, शिकार करना छोड़ दे ॥ ६ ॥

गज़ल चोरी निषेध पर।

इज़्ज़त तेरी चढ़ जायगी, तू चोरी करना छोड़ दे। मान ले

नसीहत मेरी, तू चोरी करना छोड़ दे ॥ टेर ॥ माल देखी ग़ैर का, दिल चोर का आशिक हुवे । साफ़ नियत रहती नहीं, तू चोरी करना छोड़ दे ॥ १ ॥ निगाह उसकी चौतरफ़, रहती है मानिन्द चील के । प्रतीत कोई ना गिने, तू चोरी करना छोड़ दे ॥ २ ॥ पुलिस से छिपता रहे, एक दिन तो पकड़ा जायगा । बैंत से मारे तुझे, तू चोरी करना छोड़ दे ॥ ३ ॥ नापने में तोलने में, चोरी महसूल की करे । रिशवत भी खाना है यही, तू चोरी करना छोड़ दे ॥ ४ ॥ हराम के पैसों से कभी, आराम तो मिलता नहीं । दीन दुनियां में मना, तू चोरी करना छोड़ दे ॥ ५ ॥ नुकसान गर किस के करे, तो आह लगती है ज़बर । ख़ाक में मिल जायगा, तू चोरी करना छोड़ दे ॥ ६ ॥ सबर कर पर माल से, हक़ बात पर क़ायम रहे । चौथमल कहता तुझे, तू चोरी करना छोड़ दे ॥ ७ ॥

ग़ज़ल परनार निषेध पर ।

लाखों कामी पिट चुके, परनार के परसंग से । मुनिराज कहते सब बचो, परनार के परसंग से ॥ टेर ॥ दीपक की लौ ऊपर, पड पतङ्ग मरता है सही । ऐसे कामी कट मरे, परनार के परसंग से ॥ १ ॥ परनार का जो हुस्न है, मानो अग्नि का सा कुन्ड । तन धन सब को होमते, परनार के परसंग से ॥२॥ झूठे निवाले पर लुभाना, इन्सान को लाज़िम नहीं । सुज़ाक गर्मी से सड़े, परनार के परसंग से ॥ ३ ॥ चार सौ सत्ताणुवें, क़ानून में लिखा दफ़ा । सज़ा हाकिम से मिले, परनार के परसंग से ॥ ४ ॥ जैन सूत्रों में मना, मनुस्मृति में भी देख लो ।

गज़ल उपदेशो ।

आक़बत के वास्ते, कहना हमारा फ़र्ज़ है । मर्ज़ी तुम्हारी मानना, कहना हमारा ख़र्ज है ॥ टेर ॥ मुसाफ़िर ख़ाने में आकर, ग़रूर करना छोड़दे । नेकी करले ए सनम, कहना हमारा फ़र्ज है ॥ १ ॥ माता पिता भाई भतीजा साथ में जाता नहीं । तो फिर मोहब्बत क्यों करे, कहना हमारा फ़र्ज़ है ॥२॥ किसका वसीला है वहां, दिल में ज़रा तो ग़ौर कर । तू याद में उसके रह, कहना हमारा फ़र्ज़ है ॥ ३ ॥ ना रास्त और बद फ़ैल में, यों ज़िन्दगी करता तवा । नां वदस्त से तू दूर हो, कहना हमारा फ़र्ज़ है ॥ ४ ॥ अदव करले तू बड़ों का, अहसान कर कोई और पर । रहम दिलमें लाज़रा, कहना हमारा फ़र्ज़ है ॥ ५ ॥ देता नसीहत चौथमल, करले इबादत जिग्र से, चार दिन का हुश्न है, कहना हमारा फ़र्ज़ है ॥ ६ ॥ इति ॥

* ॐ *

खुश खबर ! खुश खबर !! ज़रूर पढ़िये !!!

शीघ्रता कीजिये ! ज़ाहिर खबर शीघ्रता कीजिये !!

अच्छे २ विद्वान् मुनिवरों हस्त लिखित संशोधित जैनागम संस्कृत टीका टिप्पणी सहित, जैन सूत्र जैन तत्वादि पुस्तकें उपदेश भरी सुमधुर गज़लें स्तवनों की किताबें आदि नाना भांति के ज्ञानान्वित मनोहर पुष्प इस समिति द्वारा प्रकाशित होते रहेंगे और कुछ नीचे लिखे पुष्प प्रकाशित हो चुके हैं। इसकी आय इसी ज्ञान वृद्धि में ही व्यय की जाया करेगी। यह प्रतिज्ञा के साथ समिति पाठकों से निवेदन करती है।

१—दशवै कालिक सूत्र मूल पाठ पत्राकार बढ़िया कागज़ ≋)
२—नमिरायजी „ „ „ „ „ ‒)
३—पुच्छिसुणं „ „ „ „ „)॥
४—सुख विपाक „ „ „ „ „ ≈)॥
५—महावीर स्तोत्र (स्तुति) अर्थ सहित पुस्तकाकार ।‒)
६—सीता वनवास प्रिय सुबोधिनी व्याख्या समेत ।≈)
७—राम मुद्रिका ‒)॥ ८—लावनी संग्रह भाग १ ‒)
९—गुरु गुण महिमा ‒) १०—ज्ञान गीत संग्रह ≈) ११—जैन सुख चैन बहार भाग १ ≈) भाग २ ≋) भाग ३ ≋)॥ भाग ४ ≋)॥ भाग ५ ‒)॥ १२- श्री जैन गज़ल बहार ≋) १३—श्रीजैन गज़लगुल चमन बहार ‒ १४—सीता वनवास (मूल) ‒) १५—स्त्री शिक्षा भजन संग्रह)॥ १६ मुखवस्त्रि का निर्णय)॥। १७—जैन स्तवन मनोहर माला भाग १ ≋)॥ १८—जैन स्तवन

मनोहर माला भाग २ =) १६—श्री जैन मन मोहन माला ~) २०—सामायिक प्रतिक्रमण सूत्र ।~) २१—चम्पक चरित्र अमूल्य २२—धन्ना चरित्र अमूल्य २३—अनुपूर्वी ~)

आदि उपरोक्त पुस्तकें निम्नोक्त पते से मंगवालें डाक खर्च अलग होगा।

(१) मिश्रीमल मास्टर आ० सेक्रेटरी सेठजी का बाजार रतलाम। (२) श्रीजैन महावीर मण्डल रतलाम।

सस्ती और उपयोगी ज्ञान दाता पुस्तकें हम से खरीदिये ।

(१) श्रावक धर्म दर्पण सजिल्द पृ० ४५०।मू०॥।-) १२ का ९) (२) नारी धर्म निरुपण पृ० ६४ मु० -)॥ १२ का १) (३) मूल्यवान मोती । विधवा सती का उत्कृष्ट चरित्र पृष्ठ १२० मू० ≢)॥ ५ का १) (४) विनयचन्दजी की चौवीसी व नित्य पाठ संग्रहण मू० ≈) ८ का १) (५) सुदर्शन सेठ चरित्र पृष्ठ ४० मू० ≈) ६ का १) (६) जम्बू स्वामी चरित्र पृष्ठ ६० मू० ।≈)॥ १२ का ४॥) (७) उपदेश रत्न कोष पृष्ठ ५० मू० ≈॥ ७ का १) (८) जैन धर्म के विषय में अजैन विद्वानों की सम्मतियाँ पृष्ठ ६४ मू० -) २५ का १॥) (९) नित्य नियम नित्य समरण पृष्ठ ३२ मू० ॥) २५ का १) (१०) जैन दर्शन जैन धर्म पृष्ठ १५ मू० ॥) २५ का ॥≈) (११) कर्त्तव्य कौमुदी पृष्ठ ५५० मू० सजिल्द २) (१२) हितोपदेश रत्नावली पृष्ठ ४० मू० ≈) ६ का १) (१३) जैन प्रश्नोत्तर कुसुमावली पृष्ट १२० मू० ।≢) ५ का १) (१४) बड़े २ अंकों की अनुपूर्वी पृष्ठ ३२ मू० ॥) २) सैकड़ा

खमापना के कार्ड पत्रि का ।

पत्रिका रंगीन कागज़ पर सुनहरी छपी हुई ॥।) सै० सरकारी पैसे के कार्ड पर लाल छपे हुए ३॥≈) से०

कुंवर मोतीलाल रांका आनरेरी मैनेजर,

जैन पुस्तक प्रकाशक कार्यालय ब्यावर (राजपूताना)